सरस्वती-आश्रम-ग्रन्थमाला नं० १०९

विवाहित प्रेम

[युवक और युवतियोंके लिये गृहस्थ-पथदर्शक]

A Manual of Sexualogy for the Young.

अनुवादक—

श्रीयुत सन्तराम बी० ए०

प्रकाशक—

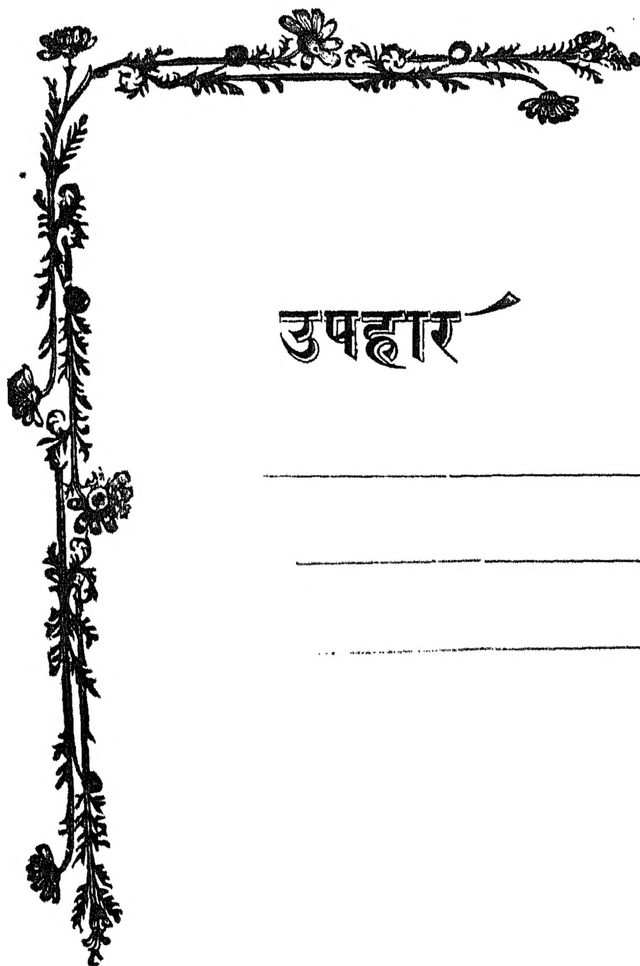
राजपाल, अध्यक्ष, सरस्वती-आश्रम,

लाहौर।

प्रथम बार } सितम्बर १९२५ ई० } मूल्य १॥) सजिल्द १॥।)

प्रकाशकः—
राजपाल, सरस्वती-आश्रम,

मुद्रक
किशोरीलाल केड़िया
वणिक् प्रेस, १ सरकार लेन, कलकत्ता



उपहार

विषय-सूची

समर्पण

उन विचारशील युवकोंकी सेवामें
जो गृहस्थाश्रममें प्रवेश कर
चुके हैं या प्रवेश करने-
को हैं।

अनुवादक

अनुवादकका निवेदन

काम-शास्त्रके प्रसिद्ध आचार्य महामति पंडित कोक्कोक अपने अद्भुत ग्रन्थ "रतिरहस्य" की प्रस्तावनामें लिखते हैं कि "परमात्माके ज्ञानसे उत्पन्न होनेवाले महान् आनन्दके सदृश सुरत-सुखको, सूक्ष्म काम-कलाकी विचित्रताको न समझनेवाला मूर्ख पुरुष नहीं जान सकता। जो पुरुष काम-शास्त्रमें मूढ़ है, काम-कलाके तत्वोंको नहीं जानता और फलतः स्त्रियोंकी जातियोंके स्वभावों, गुणों, तथा देश विशेषमें उत्पन्न होनेके कारण उनके विशेष धर्मों, चेष्टाओं, भावों और इशारोंको नहीं समझ सकता, वह कामिनियोंके यौवनको प्राप्त करके भी सर्वदा उस यौवन-सुखसे वंचित रहता है। यदि किसी बन्दरके हाथमें नारियल दे दिया जाय, तो क्या वह उससे लाभ उठा सकता है?" पंडित कोक्कोकका उपर्युक्त कथन सोलहो आने सत्य है। काम-शास्त्र (Sexualogy) का सत्य ज्ञान न होनेसे आज अनेक गृहस्थोंका जीवन दुःखमय हो रहा है।

रति एक बहुत बड़ी शक्ति है। इसके बिना संसारमें किसी भी प्राणीकी, एक क्षणके लिये भी स्थिति सम्भव नहीं। यह रति प्रायः सर्वत्र व्यापक है। विद्वानोंने इसका लक्षण इस प्रकार किया है—

रतिर्मनोनुकूलेऽर्थे मनसः प्रवणायितम्।

गुरु, देव और अपनेसे बड़ोंके साथ यही रति भक्ति-रूपसे

प्रकट होती है। पुत्रादि अपनेसे छोटोंके विषयमें इसीका नाम वात्सल्य हो जाता है। मित्रादि समान वयस्कोंके साथ यह मैत्रीका रूप धारण करती है। इसी प्रकार स्त्री-पुरुषके आपसके सम्बन्धमें यही शृङ्गार-रस बन जाती है। अलंकार-शेखरमें कहा भी है—

रतिर्भवति देवादौ मुनौ पुत्रे नृपे गुरौ,
शृङ्गारस्तु भवेत्सैव या कान्ता विषया रतिः।

इस संसारका मूल स्त्री और पुरुषका सम्बन्ध है। उसको शुद्ध रखनेवाली यही रति है। इसीके फलसे सीता और रामका वह आदर्श दाम्पत्य सम्भव हो सका, जिसका वर्णन करते हुए श्रीभवभूतिने उत्तर राम-चरितमें कहा है—

"अद्वैतं सुखदुःखयोरनुगुणं सर्वास्व वस्थासु यद्विश्रामो हृदयस्य यत्र जरया यस्मिन्नहार्यो रसः।
कालेनावरणात्ययात परिणते यत्स्नेहसारे स्थितं
भद्रं तस्य सुमानुषस्य कथमप्येकं हि तत्प्राप्यते।"

इसका अर्थ है—

सुख-दुखमें नित एक हृदयको प्रिय विराम-थल,
सब विधिसों अनुकूल, बिसद लच्छनमय अविचल,
जासु सरसता सकै न हरि कबहूँ जरठाई,
ज्यों ज्यों बाढ़त सघन सघन सुन्दर सुखदाई,
जो अवसर पर संकोच तजि परबत-दृढ़ अनुराग सत,
जग दुरलभ सज्जन-प्रेम अस, बड़भागी कोऊ लहत।

(सत्यनारायणजी कविरत्न)

इस महत्वपूर्ण शास्त्रपर प्राचीन आर्य ऋषियोंतकने ग्रन्थ लिखे थे। वे इसे जीवनको सुखमय बनानेका एक बड़ा साधन समझते थे। कुछ कालसे पाश्चात्य विद्वानोंका भी ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ है। हेवेलाक एलिस, फ़ोरल, क्राफ्ट एबिङ्ग आदि अनेक विद्वानोंने अपने अध्ययनका विषय बनाया है और इसपर बड़े बड़े वृहद् ग्रन्थ भी लिखे हैं। इस समय इंग्लैंडमें काम-शास्त्रकी विशेषज्ञा श्रीमती मेरी कार्माइकल स्टोप्स हैं। आप कितनी बड़ी विदुषी हैं इसका अनुमान आपके नामको सुशोभित करनेवाली इस उपाधिमालासे हो सकता है।

Doctor of Science, London; Doctor of Philosophy, Munich; Fellow of University College, London; Fellow of the Royal Society of Literature, and the Linnean Society London.

आपने काम-शास्त्रमें बहुतसी मौलिक खोज की है और इस खोजके आधारपर कई उपयोगी पुस्तकें लिखी हैं। परन्तु आपकी सर्वश्रेष्ठ कृति "मैरिड-लव" है। यह पुस्तक पहली बार २६ मार्च सन् १९१८को प्रकाशित हुई थी और जनवरी सन् १९२५ तक इसकी १६ आवृत्तियाँ हुईं। इन सात वर्षोंमें इसकी ४७१५०० प्रतियाँ बिकीं और योरुपकी दस भाषाओं—फ्रेंच, डेनिश, स्वीडिश, जर्मन, डच, पोलिश, हङ्गेरियन, ज़ेच (Czech) स्पेनिश और रुमानियन—में अनुवाद हुआ। इससे इस पुस्तक-की उपयोगिता तथा सर्वप्रियताका अनुमान सहजमें हो सकता है। मैंने उसी पुस्तक-रत्नका **विवाहित प्रेम** के रूपमें, हिन्दी अनुवाद तैयार किया है। मुझे आशा है कि हमारे विवाहित

युवक और युवतियाँ इससे लाभ उठानेका यत्न करेंगी। उनको इसमें बहुतसी बहुमूल्य जानकारी मिलेगी जिसे पाँच पाँच छः छः बच्चोंके माँ-बाप और अपनेको अनुभवी गृहस्थ समझनेवाले स्त्री-पुरुष भी नहीं जान पाये। मेरी यह प्रतिज्ञा है कि पुराने गृहस्थोंको भी इस पुस्तकके पाठसे अपनी अनेक भूलोंका पता लगेगा और वे उनको सुधारकर अपने जीवनोंको सुखमय बना सकेंगे।

जो लोग काम-शास्त्रको अश्लील और आचारको बिगाड़नेवाला समझकर छिः छिः किया करते हैं उन्हें भी इस पुस्तकका पाठ अवश्य करना चाहिए। इसके अध्ययनसे उन्हें निश्चय हो जायगा कि काम-शास्त्र एक सुनिश्चित और जनहितकारी विज्ञान है। इसका उद्देश्य काम-वासनाका व्यर्थ उद्दीपन करना नहीं, वरन् विवाहित युवक-युवतियोंके जीवनोंको, प्राचीनोंके दुर्लभ अनुभवोंकी सहायतासे, सुखमय बनाना है।

मुझे अपने अनुवादके विषयमें भी दो-चार शब्द कहने हैं। यह पुस्तक वैज्ञानिक है। उर्दू और हिन्दीमें छपे हुए कोक-शास्त्रोंके सदृश इसमें बेहूदा गप्पें नहीं। इसलिए इसकी भाषाका वैज्ञानिक और दार्शनिक होना आवश्यक है। मूल अँगरेज़ी पुस्तकके वाक्य बहुत लम्बे और जटिल हैं। कोई कोई वाक्य तो दस दस पंक्तियोंमें भी समाप्त नहीं होता। दूसरे, जगह जगहपर अलङ्कार भरे पड़े हैं। इसलिए, जिसको काम-शास्त्रका पहलेसे थोड़ा बहुत ज्ञान न हो, वह अँगरेज़ीका अच्छा ज्ञान रखनेपर भी इसका मर्म सुगमतासे नहीं समझ सकता। अतएव मैंने अनेक

स्थलोंपर पाद-टीका देकर विषयको स्पष्ट करनेका यत्न किया है।

मेरी यह पुस्तक मूलका शाब्दिक अनुवाद कही जा सकती है। भाषाके सौन्दर्य्यके लिये मैंने लेखिकाके भावको बिगाड़ना उचित नहीं समझा। अनुवादमें मेरा उद्देश्य यह रहा है कि लेखिका जो कुछ कहना चाहती है वह उसीके शब्दोंमें रक्खा जाय। जिन वाक्योंका आशय मेरी समझमें नहीं आया उनका मैंने ज्योंका त्यों शब्दार्थ दे दिया है। विज्ञ पाठक अपनी प्रखर बुद्धिसे उनका भाव समझनेका यत्न करें। केवल अँगरेज़ी जाननेसे कोई भी व्यक्ति उनको अधिक स्पष्ट नहीं कर सकेगा। तनिक ध्यानपूर्वक पढ़नेसे उनका भाव स्पष्ट हो जायगा।

इसका मतलब यह न समझा जाय कि सारीकी सारी पुस्तक क्लिष्ट और अलङ्कारिक भाषामें है। जितनी जाननेलायक नवीन तथा उपयोगी बातें हैं वे सब सरल भाषामें दी गई हैं। केवल दार्शनिक विचारोंकी भाषा ही अलङ्कारिक है। "संगति" पर जो अध्याय है उसकी बहुतसी बातोंका सम्बन्ध अँगरेज़ समाजसे है। परन्तु मनुष्य-प्रकृति सब कहीं एकसी है। इसलिये यथोचित परिवर्त्तनके बाद सभी देशोंके लोग उनसे लाभ उठा सकते हैं।

श्रीयुत मणिरामजी गुप्त तथा पं० उदयशङ्करजी भट्ट शास्त्रीने पुस्तककी अँगरेज़ी कविताओंका हिन्दी पद्यानुवाद किया है। इस कृपाके लिए मैं दोनों सज्जनोंका आभारी हूँ।

पुरानी बस्ती,
होशियारपुर।

सन्तराम।

ग्रन्थकर्त्ताकी गृहस्थ-सम्बन्धी दूसरी पुस्तकें—



विवाहित प्रेम

प्रोफ़ैस्सर ई० एच० स्टार्लिंग

सी० एम० जी, एम०डी०,बी० एस०, एफ़०आर० एस०

शरीर-शास्त्रोपाध्याय, लण्डन-विश्वविद्यालय,का पत्र।

यूनिवर्सिटी कौलेज,
गोवर स्ट्रीट, लण्डन W. C.
नवम्बर, २३, १६१७

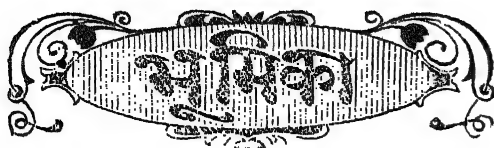
श्रीमती डाक्टर स्टोपस,

ऐसे परामर्शकी जैसा कि आप देती हैं बहुत आवश्यकता है। कितना भी हो मनुष्यका सहज-ज्ञान सामाजिक आचारका निश्चय करनेके लिये सर्वथा अपर्याप्त है। और शरीर-शास्त्रके सबसे ऊँचे व्यापार अर्थात् सन्तानोत्पत्तिको सिखानेकी वैसी ही आवश्यकता है जैसी कि खाना-पीना आदि निचले व्यापारोंको सिखानेकी—अन्तर केवल इतना ही है कि पूर्वोक्त अवस्थामें सिखानेका काम ज़रा बड़ी आयुके लिये छोड़ा जा सकता है। और इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि सन्तानोत्पत्तिका ज्ञान ऐसे प्रकारके अनुभवके द्वारा प्राप्त करनेकी अपेक्षा, जो प्रायः सदा ही दूषित होता है और जो व्यक्ति तथा परिवारके स्वास्थ्यके लिये भयावह है, शिक्षाद्वारा प्राप्त करना अधिक अच्छा है।

राज्यके लिये इस समय यह बात बड़े महत्त्वकी है कि इसके विवाह—सन्तान-सुख तथा निपुणतामें (और इन तीनोंका आपसमें घनिष्ट सम्बन्ध है)—फलदायक हों।

यदि आपकी पुस्तक इस प्रयोजनकी प्राप्तिमें सहायक हुई तो आपका परिश्रम व्यर्थ नहीं गया।

आपका—
अर्नेस्ट. एच. स्टार्लिङ्ग



भूमिका

लेखिका—कुमारी जैसी मरे, एम० बी०, बी० एस०

इस छोटी सी पुस्तकमें डाक्टर मेरी स्टोपसने उन विषयोंका वर्णन किया है जिनको खुले शब्दोंमें कहनेसे लोग प्रायः घबराते हैं। कई कोमल मनवाले लोग शायद आशङ्का करेंगे कि ऐसा स्पष्ट और सविस्तर वर्णन "हानिकारक" है और हो सकता है कि इससे कामातुर लोगोंकी दूषित रुचियोंको पुष्टि मिले। ठीक इसी भयने इतनी देरतक स्त्री-पुरुषके मिलनेकी पवित्र क्रियाओंको रहस्य तथा निस्तब्धताके आवरणमें छिपाए रक्खा है।

अब प्रश्न यह है कि क्या यह मौन उचित मर्यादासे अधिक तो नहीं? क्या यह इतना अधिक तो नहीं कि जिस उद्देश्यके लिए—सर्वसाधारणके आचारकी रक्षाके लिये—यह ग्रहण किया गया था वह उद्देश्य ही नष्ट हो जाय? अनेक लोग ऐसे हैं जो ऐसे प्रश्नोंका उत्तर निःसंकोच होकर 'हाँ' में देते हैं। मानवी जीवनका गहरा ज्ञान उनको इस बातके स्वीकार करनेपर विवश करता है कि चुप रहनेसे भी उतनी ही हानि होती है जितनी कि कह देनेसे। विषयका वर्णन किस ढंगसे किया जाता है, सारी बात इसीपर निर्भर करती है।

जो लोग प्रस्तुत पुस्तक जैसे किसी ग्रन्थके छपनेपर इसलिये दुःख मानते हैं कि मलिन मनवाले लोगोंको मनोरञ्जनके लिये इससे सामग्री मिल जाती है, उनको केवल इस बातपर विचार करना चाहिये कि ऐसी सामग्री प्रचुर रूपसे विनोदी पत्रों, असंख्य घटिया उपन्यासों और नाटक और सिनैमामें पहिले ही प्रचुर परिमाणमें पाई जाती है और बड़े ही भद्दे और चरित्र-नाशक रूपमें उपस्थित की जाती है। ऐसे दूषित मनवाले लोगोंको उन बातोंके एक सर्वथा नवीन प्रकाशमें मिलनेसे जिनसे कि वे पहिलेसे भलीभाँति परिचित हैं लाभ ही होगा।

इसके विपरीत ऐसे भी बहुतसे सच्चे और सरल युवक हैं जो विवाहकी जिम्मेदारियों और उनको पूरा करनेकी विधियोंको जानना चाहते हैं। कितने थोड़े लोगोंको इस विषयका अस्पष्ट-सा भी ज्ञान होता है! उनमेंसे फिर और भी कितने थोड़ोंको यह मालूम है कि जो सहायता वे चाहते हैं वह कैसे और कहाँसे मिल सकती है!

वे जानकारीके उन भद्दे और अपवित्र स्रोतोंको तो, जो सुगमतापूर्वक उन्हें मिल सकते हैं, छोड़ देते हैं परन्तु उन्हें उनके पास जाते सङ्कोच होता है जिन्हें वे धर्मात्मा और लज्जाशील समझते रहे हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि उनसे उन्हें वास्तविक जानकारी बहुत कम मिलेगी और जो मिलेगी भी वह इतनी घूँघटमें छिपी होगी कि उससे कुछ लाभ न होगा।

डाक्टर स्टोपसने ऐसे जिज्ञासुओंकी कामनाको पूर्ण करने-

का यत्न किया है। ऐसे लोग निस्सन्देह उनकी पुस्तकका हृदयसे स्वागत करेंगे। आशा की जाती है कि यह पुस्तक उन्हें असंख्य पति-पत्नियोंके सुखको विवाहके आरम्भिक कालमें ही नष्ट कर देनेवाली अनेक भूलोंसे बचायगी। यदि यह पुस्तक इससे अधिक कुछ भी न कर सकी तो भी वास्तवमें यह एक बहुमूल्य चीज़ होगी।

परन्तु इससे भी अधिक महत्त्वकी बात इस सम्बन्धमें एक और है। वह है बच्चेपर पड़नेवाला प्रभाव। सभी सभ्य देशोंमें बच्चोंके प्रति उत्तरदायित्वका भाव बढ़ रहा है।

उनके शारीरिक और मानसिक शिक्षणकी समस्याएँ लोगोंका ध्यान दिन प्रति दिन अधिक आकृष्ट करती जा रही हैं। सुप्रजा-जनन-शास्त्री, शिक्षा-शास्त्री, वैद्य, राजनीतिज्ञ, परोपकारी, वरन् साधारण माता-पिता बालकके विकाससे सम्बन्ध रखनेवाले छोटे और बड़े विषयोंपर वाद-विवाद और चिन्तन करते हैं। यह बात सर्वसम्मत है कि बालकके जीवनके पहले सात वर्ष बड़े ही संकटके होते हैं। इन्हीं वर्षोंमें उसके अच्छे या बुरे भावी व्यक्तित्वकी नींव रखी जाती है। इन्हीं वर्षोंमें बच्चेकी कोमल प्रकृति-पर सबसे अधिक अमिट और गहरे संस्कार आ जमते हैं, जो बहुधा एक या दूसरी प्रकृति-सिद्ध प्रवणताको रोकते या बढ़ा देते, और उसे, बहुधा आयुभरके लिये, स्थिर कर देते हैं।

फलतः यही सबसे बढ़कर समय है जिसमें माता-पिता बालकके जीवनके भीतरी इतिहासमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण काम

कर सकते हैं। ये काम वे मौखिक परामर्श, चेतावनी या आदेशके द्वारा सीधे तौरपर सिखाकर उतना नहीं कर सकते जितना कि उन सूक्ष्म प्रभावोंके द्वारा कर सकते हैं जो भावभङ्गी और मुखाकृतिसे टपकते हैं। जितना छोटा बच्चा होगा उतना ही अधिक उसपर इनका प्रभाव पड़ेगा। यह बात नहीं कि माता-पिताकी भावभङ्गीका बच्चेपर तब ही प्रभाव पड़े जब कि वह उसीको लक्ष्य करके की जाय। किन्तु उस समय भी जब कि माता पिता समझते हैं कि बच्चेका ध्यान हमारी ओर नहीं,—जब वह बिछौनेपर लेट रहा है. चित्र देखनेमें लीन है, या कोई और खेल खेल रहा है—तब भी, उसकी उपस्थितिमें, उनकी एक दूसरेके सम्बन्धमें बहुत घनिष्ट चेष्टाएँ उसपर गहरा असर डालती हैं।

क्या यह बहुत अधिक महत्त्वकी बात नहीं कि ये सबसे पहिले संस्कार बहुत ही सूक्ष्म प्रकारके होने चाहिएं ? तब क्या हमें उन सब बातोंका जिनपर कि यह पुस्तक है, खागरा नहीं करना चाहिये ?

हमारे विचारसे ये बातें अगली पीढ़ीके सजीव पंघूरेको सुन्दरता और एकतानतासे परिपूर्ण करनेमें उतनी ही सहायता करती हैं जितनी कि प्रेम तथा परस्परका समझौता कर सकता है।

मनुष्यकी 'नीच' तथा 'उच्च' वृत्तियोंमें, प्राथमिक पशु-प्रकृति और मनुष्यके उच्च नैतिक विकासमें, जो युग-युगान्तरसे संग्राम होता आ रहा है वह प्रत्येक आत्मा और प्रत्येक विवाहमें फिर नए सिरेसे प्रारम्भ होता है।

हमें यह भी अधिक स्पष्ट रूपसे जान लेना चाहिये कि उच्च-द्वारा नीचको कभी बाहर नहीं निकाला जाता—और न कभी उसे बाहर निकालना ही चाहिये—वरन् उसे एक विशेष स्थितिमें रख दिया जाता है। जबतक एक या दूसरे अङ्गको दबाया जाता है या उसकी उपेक्षा की जाती है तबतक किसी भी सच्ची एकतानताकी आशा नहीं की जा सकती।

डाक्टर स्टोपसकी कई बहुत ही महत्त्वपूर्ण जीव-शास्त्र-सम्बन्धी सूचनाएँ हैं। इनको तुच्छ समझकर टाल नहीं देना चाहिये। उदाहरणार्थ, उनका सिद्धान्त है कि स्त्रियोंमें स्वाभाविक मैथुन-सम्बन्धी कालचक्र होता है। अब इस सिद्धान्तका प्रतिपादन या खण्डन करनेके लिये अधिक पर्यवेक्षणकी आवश्यकता है, परन्तु मेरा अपना पर्यवेक्षण निश्चय ही इसकी पुष्टि करता है।

जे० एम० एम०

ग्रन्थ-कर्त्रीकी भूमिका



सुखी घरोंकी जितनी इस समय कमी है उतनी पहिले कभी न थी। मुझे आशा है कि उनकी संख्यामें वृद्धि करके मेरी यह पुस्तक देशकी सेवा करेगी। इसका उद्देश्य विवाहके आनन्दोंको बढ़ाना और यह दिखलाना है कि शोककी कितनी मात्रा दूर की जा सकती है।

वर्तमान कालके राष्ट्रके लिये एकमात्र निर्दोष आधार उसके व्यक्तियोंको विवाहद्वारा मिलाकर एक कर देना है। परन्तु यदि बहुतसे विवाह दुःखमय हों तो राष्ट्रकी नींवके सड़ और गल जानेका भय है। आजकल इस देशके, विशेषतः मध्यम वृत्तिके, लोगोंमें विवाह वास्तवमें उससे बहुत कम सुखमय है जितना कि वह ऊपरसे देख पड़ता है। बहुतसे लोग जो आनन्दकी आशासे विवाह करते हैं अधिक हताश नज़र आते हैं। इसीलिये 'छुटकारे' की पुकार सुनाई देती है। परन्तु जो लोग इस तरह बिलखते देखे जाते हैं वे प्रायः इस बातसे अनभिज्ञ होते हैं कि उनकी दुःखितावस्थाका कारण उतना 'विवाहका बन्धन' नहीं जितना कि उनका अपना अज्ञान।

विवाहको सुखमय बनाना *आसान* काम नहीं। स्वार्थी और

मानसिक रूपसे कायर मनुष्योंके लिये तो यह और भी कठिन है। सारांश यह कि ज्ञानकी आवश्यकता है और, वर्तमान अवस्थाके अनुसार, जिनको इस ज्ञानका सबसे अधिक प्रयोजन है उनको प्रायः यह अप्राप्य सा हो रहा है।

स्त्री-पुरुषोंके काम-सम्बन्धी जीवनकी समस्याएं अनन्त रूपसे जटिल हैं, और उनको हल करनेके लिये सहानुभूति तथा वैज्ञानिक खोजकी परम आवश्यकता है।

अब मुझे स्त्री और पुरुषके धर्मके विषयमें कुछ ऐसी बातें कहनी हैं, जो शायद अभीतक किसीने नहीं कही हैं। जो स्त्रियाँ और पुरुष अपने विवाहोंको सुन्दर बनानेकी आशा करते हैं उनके लिये ये बातें बड़े महत्त्वकी होंगी।

यह पुस्तक किसी विशेष अनुसन्धानका वृत्तान्त नहीं है किन्तु दीर्घ और जटिल अन्वेषणोंके संशोधित स्वच्छ परिणामोंको सुगमतासे समझमें आ जानेलायक रूपमें उपस्थित करनेका एक यत्न है। इसकी सरल प्रतिज्ञाएँ बहुसंख्यक नवीन पर्यवेक्षणों, सब प्रकार और सब श्रेणियोंके पुरुषों और स्त्रियोंकी विश्वास-पूर्वक बताई हुई बातों तथा बहुतसे ग्रन्थोंको पढ़कर चुने हुए तथ्योंपर अवलम्बित हैं।

विवाहकी बहुत पुरानी समस्याओंके विषयमें मेरे मौलिक लेख मुख्यतः चौथे, पाँचवें और आठवें अध्यायोंमें मिलेंगे। दूसरे अध्यायोंमें वे बातें हैं जिनके विषयमें मेरा विचार है कि वे विवाहकी संभाव्य गुप्त सुन्दरताओं और सचाइयोंका एक स्पष्ट चित्र हैं।

सम्पूर्ण पुस्तक बड़ी सरल रीतिसे और साधारण अनभ्यासी पाठकके लिये लिखी गई है। फिर भी इसमें कई एक पर्यवेक्षण ऐसे मिलेंगे जो उन लोगोंके लिये भी नए होंगे जिन्होंने मैथुन और मानव शरीर-शास्त्रके विषयमें वैज्ञानिक अनुसन्धान किए हैं। इन पर्यवेक्षणोंको मैं बढ़ाकर किसी दूसरी जगह अधिक विस्तारके साथ और अधिक वैज्ञानिक भाषामें प्रकाशित करनेका विचार रखती हूँ।

स्त्री-पुरुष धर्म-सम्बन्धी बहुतसी पुस्तकोंमें मानवीय नियमातिरेक और व्यतिक्रमोंके वर्णनकी भरमार रहती है। यहाँ मैं उनपर विचार नहीं करूँगी, और न असाध्य रूपसे दुःखी विवाहोंसे उत्पन्न होनेवाली समस्याओंको ही सुलझाऊँगी।

विवाहित जीवनकी और भी कई अवस्थाएँ हैं जिनका इस पुस्तकमें वर्णन नहीं। उदाहरणार्थ, नवें अध्यायमें विवाहके दूसरे या तीसरे वर्षकी बड़ी समस्याओंपर विचार। इन समस्याओंपर मैंने अन्य दो पुस्तकोंमें विचार किया है। एक तो "देदीप्यमान मातृत्व" (Radiant Motherhood) और दूसरी "विज्ञ माता-पिता" (Wise Parenthood)। पहिली पुस्तक उनको सहायता देनेके लिये है जो आसन्न-प्रसव हैं; दूसरीमें "गर्भ-निरोध" का बहुत ही संक्षिप्त वर्णन है। यह उन लोगोंके लिये लिखी गई है जिनको इस बातका ज्ञान नहीं कि माताको विश्राम देनेके लिये किस प्रकार विशेष अन्तरके बाद बच्चा पैदा करना चाहिये। इससे वे लोग भी लाभ उठा सकते हैं जिनको उपर्युक्त बातोंका

तो ज्ञान है परन्तु जो इसके लिये सर्वसाधारणमें प्रचलित अनेक हानिकारक साधनोंका प्रयोग करते हैं। शिक्षितों, वैज्ञानिकों तथा डाक्टरों और वकीलोंके लिए मैंने हालमें "गर्भ-निरोध, उसके सिद्धान्त, इतिहास और रीति*" नामकी एक बृहद् पुस्तक लिखी है।

"विवाहित प्रेम" नामकी इस पुस्तकमें मैंने युवा और युवतियोंकी काम-शास्त्र-सम्बन्धी सामान्य समस्याओंका वर्णन किया है, क्योंकि उनको एक दूसरेकी मौलिक प्रकृतिका सम्भवतः बहुत कम ज्ञान होता है। अगले पृष्ठ उन लोगोंके लिये लिखे गए हैं—और हमारे उत्तेजक साहित्य और नाटकोंके रहते हुए भी उनकी संख्या बहुत अधिक है—जो प्रायः स्वाभाविक हैं, साथ ही उनके लिये भी जो विवाह कर चुके हैं या करनेवाले हैं, या विवाहको सुन्दर और सुखद बनानेकी आशा करते हैं, परन्तु इसकी विधि नहीं जानते।

हमारा इस सबसे अधिक जटिल व्यापारका सविस्तर वर्णन इस विषयपर चुप्पी साधनेके पक्षपातियों और रिवाज़के पीछे चलनेवालों, दोनोंको, धृष्टता या फालतूपन प्रतीत हो सकता है। वे अक्सर पूछा करते हैं—क्या सहज ज्ञान पर्याप्त नहीं? हमारा यही उत्तर है '*नहीं*'। सहज ज्ञान पर्याप्त *नहीं*।

---

* इसके आवश्यक अध्यायोंका सविस्तर अनुवाद मेरे "संतान-संख्याका सीमा-बन्धन अर्थात् दम्पति-मित्र" नामक ग्रन्थमें छप चुका है। अँगरेज़ी की मूल पुस्तकका मूल्य लगभग दस रुपया है। मेरे हिन्दी-अनुवादका मूल्य ३॥) है। वह 'सरस्वती-आश्रम' हस्पताल रोड, लाहौरसे मिलता है।

मनुष्योंके प्रत्येक दूसरे काममें शिक्षा—परम्परा—को बापसे बेटेतक पहुँचाना आवश्यक समझा गया है। डाक्टर सलीबाईने एक बार ठीक कहा था—बिल्ली अपने नवजात बच्चोंका प्रबन्ध करना, उन्हें पालना, तथा शिक्षा देना जानती है; परन्तु स्त्रीको जबतक प्रत्यक्ष रूपसे या उसके अपने आप दूसरी माताओंको देखकर सधाया न जाय, वह अपने बालकका प्रबन्ध नहीं कर सकती। बिल्ली अपने सरल कर्तव्योंको सहज ज्ञानद्वारा पूरा करती है; मनुष्यकी माताको उसके बहुत ही जटिल कर्तव्योंका पालन करनेके लिये शिक्षा देनी पड़ती है।

स्त्री-पुरुष-धर्मके सूक्ष्म क्षेत्रमें भी ऊपरकी बात सत्य है। इस समय देशमें प्राचीन परम्परागत स्त्री और पुरुषकी आवश्यकताके गम्भीर प्राचीन ज्ञानका लोप हो चुका है। अब तो कभी कभी सिवा गुनगुनाहट, या वैयक्तिक कानाफूसीके और कुछ भी सुनाई नहीं देता। किसी किसी परिवारमें पवित्र परम्परा रह गई है, युवक और युवतियोंके विवाहके कुछ रहस्योंको सीखनेकी सम्भावना हो सकती है। परन्तु हमारे देशके अधिकांश लोगोंको इस श्रेष्ठ मानवी कला, कामकला, का रत्तीभर भी ज्ञान नहीं। शरीर-शास्त्र और चिकित्साके बड़े बड़े ग्रन्थोंमें त्रुटियाँ, छिद्र, वरन् सत्य घटनाओंका मिथ्या वर्णन देखकर आश्चर्य होता है।

यही कारण है कि मुझे अपने पहले विवाहमें कामशास्त्रके अज्ञानके कारण इतनी भारी हानि उठानी पड़ी थी, कि मैं अनु-

भव करती हूँ कि मुझे इतना भारी मूल्य देकर प्राप्त किये हुए इस ज्ञानको मनुष्य-समाजके उपकारके लिये अवश्य फैलाना चाहिये।

इस छोटीसी पुस्तकमें प्रत्येक नीरोग और स्वाभाविक दम्पतिको सुखकी चाबी मिलेगी। यह पहले भी बहुतोंको सुखका मार्ग दिखा चुकी है। और मुझे आशा है कि यह औरोंको भी वर्षोंतक जी जलाने और अन्धकारमें अन्धाधुन्ध रास्ता ढूँढ़ते रहनेके कष्टसे बचायगी।

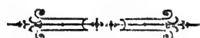
मेरी कार्माइकल स्टोपस।

टिप्पणी

मैडीकल रिव्यू आव रिव्यूज़, खण्ड २५, संख्या २, फ़रवरी १९१९, में लिखते हुए स्त्रीपुरुषधर्म-शास्त्रके जगद्विख्यात आचार्य डाक्टर हेवेलाक एलिस इस "विवाहित प्रेम" नामक पुस्तकमें लिखे हुए डाक्टर स्टोपसके कुछ नवीन पर्यवेक्षणोंके सम्बन्धमें कहते हैं:—"*स्त्रियोंके मानस तथा शरीरशास्त्र-सम्बन्धी ज्ञानमें हालके वर्षोंमें जो अतीव स्मरणीय उन्नति हुई है यह उसका दर्पण है।*"



पहला अध्याय



हृदयकी कामना

प्रत्येक हृदय एक साथीकी कामना करता है। किसी ऐसे गुह्य कारणसे जो हमारी समझके बाहर है, प्रकृतिने हमें ऐसा बनाया है कि हम अपने आपमें अपूर्णता पाते हैं; न सिर्फ़ पुरुष ही किन्तु अकेली स्त्री भी समस्त मानवी व्यापारोंको सम्पादन करनेका आनन्द नहीं जान पाती। स्त्री और पुरुष अकेले रहकर दूसरे जीवको जन्म नहीं दे सकते। यह बात हमारे आकारकी बाह्य विभिन्नतासे प्रकट हो रही है। इसका हमारे सारे जीवनपर प्रभाव पड़ता है। और कोई भी दूसरी वस्तु ऐसी नहीं जिसके लिये प्रत्येक स्त्री पुरुषकी आत्मा इतनी लालसा करती हो जितनी कि वह एक दूसरी आत्माके

साथ संयोगकी इच्छाके लिये और उसके द्वारा अपनेको पूर्ण करनेके लिये लालायित रहती है।

'सभी युवक और युवतियोंमें, यदि उन्होंने दूषित और रुग्ण शक्तियाँ माता पितासे न पाई हों, हमारी जातिकी प्राचीन कामना अपने आदिम सौन्दर्यके साथ नये सिरेसे जाग उठती है।

यौवनके स्वप्नों और शारीरिक परिवर्त्तनोंके साथ ही, कुमार और कुमारियोंमें जातीय सहज ज्ञानके विलक्षण और प्रबल आवेग प्रकट हो जाते हैं। दोनोंकी शारीरिक विभिन्नताएँ अब उग्र रूप धारण करके बड़ी गूढ़ार्थक, मनोहर, और चित्ताकर्षक हो जाती हैं। उनकी विभिन्नताएँ एक दूसरेके साथ मिलकर स्त्री और पुरुषको इस प्रकार इकट्ठा कर देती हैं कि उनका शारीरिक संयोग पृथ्वीके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक फैले हुए ओतप्रोत पुलिनोंकी विस्तृत रचनाका ठोस बीज बन जाता है। इनमेंसे कुछ तो मकड़ीके जालेसे भी पतले, संगीतकी अतीव कोमल तरंगसे भी हलके, और केवल दृश्यमान् इन्द्रधनुषके ही नहीं अपितु आत्माके अदृश्य सौन्दर्यके रंगोंसे भी चमक रहे हैं।

दिखलावेके वैराग्य, दुनियादारी, या आत्म-निरूपणके नीचे चाहे कितना ही छिपाया जाय, फिर भी कहना ही पड़ता है कि प्रत्येक युवकका हृदय एक आजीवन संगीके साथ आजन्म संयोगके सुन्दर स्वप्नकी पूर्तिके लिये तरसता रहता है। प्रत्येक हृदय सहज ज्ञानसे ही जानता है कि आत्माके समग्र सम्भाव्य और गुप्त महत्त्वको एक जोड़ीदार ही पूर्ण रूपसे समझ सकता

है, वही बुढ़ापेमें भी उसकी बच्चों जैसी चेष्टाओंको देखकर प्रसन्न हो सकता है।

पति या पत्नीकी तलाश एक सुन्दर परन्तु अपनेसे असदृश शरीरमें निवास करनेवाले समझदार हृदयकी खोज है।

आधुनिक जगत्में जो मनुष्य भगीरथ परिश्रमके कामोंमें लगे हुए हैं, या जो जान बूझकर अपनेको सामाजिक जीवनके साधारण मार्गसे अलग कर लेते हैं, उनकी संख्या अपेक्षाकृत थोड़ी है। और मैंने यह पुस्तक उनके लिये नहीं लिखी। हमारे अधिकांश नागरिक - स्त्रियाँ और पुरुष दोनों—कुछ देर प्रतीक्षा करने या इधर उधर भटकनेके बाद एक जगह "ठहर" कर विवाह कर लेते हैं।

बहुत थोड़े लोग वस्तुतः ऐसे वैराग्यवान् हैं जो सुखकी आशाके बिना विवाह करते हों। बहुतसे युवक और युवतियाँ, चाहे वे मुखसे कितना ही वैराग्य छाँटें और निस्पृह-वृत्तिका ढोंग रचकर अपनी लहलहाती हुई आशाओंको दबाये रखनेका यत्न करें, परन्तु किसीकी खोजमें तरसती हुई आँखों, मस्ती ढालते हुए अङ्गों और हावभावसे यह प्रकट होता है कि उनको अपने एक नवीन तथा सुन्दर अवस्थामें प्रवेश करनेका ज्ञान है। प्रेमी और प्रेमिकाके चुम्बन तथा स्पर्शमें वह उल्लास और प्रमोद है जो मनुष्यको मदिरासे भी अधिक पागल कर देता है। दोनों कविता पढ़ते, मस्त होकर प्रेमगीत सुनते और एक दूसरेके नेत्रोंमें संसारके सौन्दर्यका प्रतिबिम्ब देखते हैं। इस स्वर्गीय उन्मादमें

वे स्वभावतः ही यह मानने लगते हैं कि भगवान्‌ने हमारे शरीरोंका ही नहीं, वरन् हमारी आत्माओंका भी मिलाप किया है।

जितना अधिक सहृदय, अधिक रसिक और अधिक आदर्श-प्रिय कोई युवक या युवती होती है, उतनी ही अधिक उसकी आत्मा किसी ऐसी समगुणवाली दूसरी आत्माकी लालसा करती है जिसके साथ कि उसका सारा अस्तित्व एकमय हो जाय। यह कामना थोड़ी बहुत हर एक नीरससे नीरस व्यक्तिमें भी होती है। वास्तविक जीवनकी असंख्य कथाओंसे हमें ज्ञान है कि कड़ेसे कड़ा व्यवहार-कुशल मनुष्य भी, जिसे प्रत्येक प्रकारकी सांसारिक सफलता प्राप्त हो चुकी है, सच्ची जीवन-संगिनीके अभावसे ऐसा बुरा जीवन व्यतीत करता है मानों उसके स्वतन्त्र विहरणशील पक्षीरूप आत्माके पङ्ख किसीने काट डाले हों। आत्माकी इस लालसाका महात्मा एडवर्ड कार्पेंटरने क्या ही सुन्दर वर्णन किया है:—"संसारमें एक दूसरा व्यक्ति ऐसा होना चाहिये जिसके साथ खुला लेनदेन हो सके, जिससे किसी प्रकारका भेदभाव न हो, जिसका शरीर हमें निज शरीरके समान ही प्यारा हो; जिसके साथ सम्पत्ति और अधिकारमें, मेरे और तेरे का कोई भेद न हो; जिसके मनमें हमारे विचार स्वभावतः ही बहकर चले जायँ मानो वे वहाँ अपनेको जानने तथा नवीन प्रकाश पानेके लिये गये हों; जहाँ अपने और उसके जीवनके सभी हर्ष और शोक और अनुभूतिमें सहानुभूतिकी स्वयंसिद्ध

गूँज हो; शायद आत्माकी सबसे प्यारी आकाङ्क्षा यही है।"— *लव्स कमिङ्ग ऑव एज।*

हो सकता है कि यह पुस्तक किसी ऐसे युवक या युवतीके हाथमें पड़ जाय जो इस बातका प्रतिवाद करे कि मैंने उस त्रिमूर्त्तिका, जो मानुषताका एकमात्र पूर्ण प्रकाश है, एक अङ्ग बननेके लिए अपने हृदयमें सारभूत लालसाका कभी अनुभव नहीं किया। यदि ऐसी बात है तो बहुत सम्भव है कि उसे कोई वास्तविक रोग—स्त्री-पुरुष-धर्मका अनुभव करनेकी शक्तिका नष्ट हो जाना—है, परन्तु उसे इसका पता नहीं। इस रोगका अगरेज़ी नाम सॅक्स अनीस्थीसिया है। इस रोगमें प्रकृति-सिद्ध ठण्डापन होता है। इसके रोगीमें कोमलताके सामान्य मानवी आवेगका अभाव होता है, किन्तु प्रायः उसे इस अभावका ज्ञान नहीं रहता। यह भी हो सकता है कि पाठक साधारण मनुष्यों-से भिन्न प्रकारका हो। ऐसी दशामें अधिकांश लोगोंके विषयमें व्यवस्था देनेके बदले उसे चाहिये कि प्रसिद्ध प्रोफेसर ऑगस्ट फ़ोरलकी 'सेक्षुअल क्वेस्चन' (अगरेज़ी अनुवाद १९०८) ऐसी किसी पुस्तकका अध्ययन करे, जिससे उसे अपनी प्रकृतिका ज्ञान हो। सम्भव है कि तब उसे मालूम हो जाय कि विस्तृत विविध प्रकारकी मनुष्य-सृष्टि मेंसे वह किस नमूनेका है। उसे मेरी पुस्तकके पढ़नेका प्रयोजन नहीं, क्योंकि यह साधारण स्त्री-पुरुषोंके विषयमें और उन्हींके लिये लिखी गई है। साधारण लोग अपनेको अपूर्ण अनुभव करते हुए ऐसे संयोगकी लालसा

करते हैं जिसमें न केवल उनके अपने जीवनको अधिक पूर्ण और अधिक उज्ज्वल बना देनेकी शक्ति होगी, वरन् जो उनको एक ऐसी स्थितिमें रख देगा जिसमें वे आनेवाले जीवोंके स्रष्टाओंके रूपमें अपने पवित्र *न्यास*—अमानत—का उपयोग कर सकेंगे।

मनुष्य-जातिके इतिहासमें यह बात अनेक बार हो चुकी है कि व्यक्तियोंने जोड़ीदार (पति या पत्नी) के लिये इस स्वाभाविक लालसाको न केवल पराजित ही किया है, वरन् अविवाहित जीवनको एक उच्च आदर्शके रूपमें संसारके सामने रक्खा है। अपने अत्यन्त सुन्दर रूप और अति श्रेष्ठ प्रकारमें ब्रह्मचर्यका आदर्श समस्त संसारमें प्रिय हुआ है; क्योंकि घर और बच्चोंका प्रेम इसके सामने एक संकीर्ण भाव है। अनेक ऋषि-मुनि और सुधारकोंने ब्रह्मचर्य्य-व्रतका पालन किया है। परन्तु ऐसे व्यक्ति *जाति* का नमूना नहीं माने जा सकते, क्योंकि वे इसकी प्रधान धाराके बाहर हैं। वे ऐसी शाखाएँ हैं जो फूल सकती हैं परन्तु शारीरिक रूपमें कभी फल नहीं सकतीं।

इस जगत्में हमारी आत्माएँ न केवल प्रकृतिसे ओतप्रोत हैं, वरन् इसके द्वारा ही वे प्रकट होती हैं। जबतक हम मनुष्य हैं, हमारे शरीरोंका होना आवश्यक है, और शरीर रासायनिक, शरीरशास्त्र-सम्बन्धी तथा आध्यात्मिक नियमोंके अधीन हैं।

यदि मनुष्य-जाति समूह रूपसे एक ऐसे आदर्शके पीछे चल पड़े जिसका अन्तिम परिणाम शरीरके अस्तित्वको बिलकुल मटियामेट कर देना हो, तो यह स्पष्ट कि हम बहुत शीघ्र ही अपनी

परिस्थितिको ऐसा परिवर्त्तित पाएँगे कि फिर हम मनुष्य-जातिका नाम नहीं ले सकेंगे।

इस बीचमें, हम अभी मनुष्य हैं। हम सबके जीवन विशेष नियमोंके अधीन हैं। उनमेंसे कुछको तो हम समझने लगे हैं और अनेक अभी सर्वथा गुप्त हैं। सबसे पूर्ण मनुष्य वह पुरुष या वह स्त्री है जो हमारे अस्तित्वके गम्भीर भौतिक नियमोंका ज्ञानतः या अज्ञानतः ऐसे ढंगसे पालन करती है कि आत्माको शरीरसे यथासम्भव अधिकसे अधिक सहायता और कमसे कम बाधा पहुँचती है। जिस शरीरमें आत्मा निवास करती है उसके दुरुपयोग, उपेक्षा या अत्यन्त अपकारसे उस आत्माके पूर्ण विकासमें भारी रुकावट पहुँचती है।

सारभूत नियमोंको अज्ञानके कारण या जान बूझकर तोड़नेसे अनन्त कालक्रमागत तारतम्य ढीला और विशृंखलित हो जाता है! वर्तमान कालका संकीर्ण-हृदय तपस्वी अपनी भौतिक सहज बुद्धियोंसे काम लेनेके बदले उन्हें नष्ट करके आध्यात्मिक उन्नति करना चाहता है, परन्तु मैं कहता हूँ कि हम संसारमें इतने जकड़े हुए हैं कि प्रकृतिको आध्यात्मिक भावोंमें ढाल नहीं सकते जिससे वह हमारी आत्माओंको प्रकाशमान् कर सके। अपने भौतिक अस्तित्वके अनादि नियमोंके साथ युद्ध करनेकी *प्रतिज्ञा* करना धृष्टता है। जो ऐसा काम करता है-वह अज्ञानतः उस सर्वोत्तम संयोगको खोता है; जिसमें विस्मयोत्पादक नवीन सृष्टि जन्म लेती है।

उदाहरणके लिये दो मानव देहधारियोंकी दो ऐसे पिण्डोंसे तुलना कीजिये जिनमें एक दूसरेसे भिन्न बिजली भरी हुई है। एक दूसरेसे अलग रहते उनके भीतर बिजलीकी शक्तियाँ अवश्य रहती हैं परन्तु यदि उनको उचित सन्निकर्षमें लाया जाय तो शक्तिका रूपान्तर हो जाता है और उनमें एक प्रकारकी चिनगारी झड़ती है। उसके उद्दीप्त प्रकाशमें एक चमक उत्पन्न होती है। प्रेमका ठीक ऐसा ही रूप है।

प्रियतमाके सरल सुन्दर शरीरसे, जिसके लिये हमारा मन अनादि सहज बुद्धिके वशीभूत होकर कामना करता है, न केवल एक नवीन भौतिक जीवनकी आश्चर्यजनक वस्तु—सन्तान—पैदा होती है, वरन् मानवी सहानुभूतिके दिङ्मण्डलका विस्तार और आध्यात्मिक बुद्धिका प्रकाश भी होता है जिसको एकाकी आत्मा कभी प्राप्त नहीं कर सकती।

अनेक पाठक अनुभव करते होंगे कि उन्हें भौतिक संयोगसे ऐसे आध्यात्मिक परिणाम, वरन् साधारण आनन्द भी प्राप्त नहीं हुआ। यदि यह बात है, तो इसका कारण यही हो सकता है कि उन्होंने, ज्ञानतः या अज्ञानतः, उन दुर्ज्ञेय नियमोंमेंसे कुछको तोड़ा है जिनके अधीन स्त्री और पुरुषका प्रेम काम करता है। ठीक तौरपर मिज़राब चलाना सीखकर ही मनुष्य सितारसे मधुर संगीत निकाल सकता है। निचले जगत्के नियमोंका पालन करनेसे ही मनुष्य ऊपरके जगत्में पैर रख सकता है।

दूसरा अध्याय



रङ्ग में भङ्ग

संसारके हृदयसे निकलनेवाले चीत्कारको कैसे शान्त करें? उस मूक प्रार्थनाका क्या उत्तर दें जिसे बहुधा हम हँसती हुई आँखोंके नीचे भाँपा करते हैं? " दि हीरो इन मैन " में ई।

सुखके स्वप्न देखते और इस बातका अनुभव करते हुए कि उनमेंसे प्रत्येकने अन्तको एक ऐसा जोड़ीदार पा लिया है जिससे अनन्त सहृदयता और प्रसन्नता मिलेगी, कुमार और कुमारियाँ विवाह कर लेती हैं।

पहले-पहल सुहाग-रातमें एक दूसरेके साथ नई नई स्वतन्त्रता और दम्पतीके अद्भुत् सम्बन्धकी मिठासके कारण बहुधा सच्चा सुख प्राप्त होता है। परन्तु यह सुख कितनी देर रहता है? जितनी देर लोग प्रायः मानते हैं यह उससे बहुत कम कालतक रहता है। अपने संयोगके प्रथम हर्षमें नई उमङ्गोंवाले तरुण दम्पतीसे यह

---

* लेखिकाने अँगरेज़-समाजको लक्ष्यमें रखकर पुस्तक लिखी है। इसीलिये ये बातें उन्हींपर अधिक लागू होती हैं। हमारे यहां तो "लाटरी" के ढंगपर विवाह होते हैं। उनमें एक दूसरेको पसन्द करनेका मौका ही नहीं होता। अनुवादक

बात छिपी रहती है कि वे एक दूसरेके अस्तित्वके सारभूत नियमों-के सम्बन्धमें बहुत थोड़ा या कुछ भी ज्ञान नहीं रखते। नर और नारीका एक दूसरेके प्रति आकर्षण (न केवल मनुष्योंमें वरन् प्राणिमात्रमें) मिलनेवाले जोड़ेकी विभिन्नताओंपर बहुत कुछ निर्भर रहता है। सम्भवतः अकस्मात् ही संयोग होनेके कारण, वही विभिन्नताएँ, जिन्होंने उनको मिलाया था, अब उनके संयोग-बन्धनको खोलना आरम्भ कर देती हैं।

वर और वधू कुछ कालतक इसी भ्रममें पड़े रहते हैं कि हम एक दूसरेकी प्रकृतिको खूब समझ गए हैं। एक दूसरेके सम्बन्ध-में नित नए नए आविष्कारोंसे प्राप्त होनेवाला हृदयस्पर्शी आनन्द उनके उस भ्रमकी पुष्टि करता है। इस कालमें उनकी अनुभूतियाँ इतनी क्षिप्र और इतनी विकसित होती हैं कि पति-पत्नीको इस बातका ज्ञान भी नहीं होने पाता कि उनके पैरोंके नीचे एक दूसरेके सम्बन्धमें वास्तविक ज्ञानका कोई दृढ़ आधार नहीं। पुरुष आर्यसमाजी हो और स्त्री सनातनधर्मी, पुरुष स्वराज्य-वादी हो और स्त्री विदेशी राज्यको ही सुखदायक समझनेवाली, पुरुष गायका दूध पसन्द करता हो और स्त्री बकरीका, इत्यादि विभिन्नताओंको जानते हुए भी वे दोनों सदिच्छा, धैर्य और बुद्धि-मत्तासे काम लेते हुए सुखपूर्वक रह सकते हैं, क्योंकि इन सब विषयोंमें उनके सहमत होनेके लिये कोई न कोई सामान्य बात अवश्य हो सकती है। मनुष्योंका ऐसे मानवी सम्बन्धोंमें चाहे प्रत्येक बातमें कितना ही बड़ा मतभेद क्यों न हो, फिर भी वे

कमसे कम इनपर कई पीढ़ियोंतक विचार और विवाद कर चुके होते हैं।

तो भी स्त्री-पुरुष-धर्मकी कहीं अधिक सारभूत और अत्यावश्यक समस्याओंके सम्बन्धमें ज्ञानका अभाव इतना भारी और इतना सार्वत्रिक है कि इसके कुहरे और छायामय अन्धकारने उन थोड़ेसे मनुष्योंको भी वशीभूत कर लिया है जो हमारा पथदर्शन और इन विषयोंका अनुसन्धान कर रहे हैं। कहीं कहीं नवयुवक जोड़ेको उस समयतक अपनी सारभूत विभिन्नताओंके अस्तित्वका ज्ञान भी नहीं होने पाता कि वे उन्हें दुःख देने लगती हैं। दम्पतीको उनका युक्तियुक्त समाधान प्राप्त करनेकी आशा भी कम होती है।

जिन जोड़ोंका अपना सुख भङ्ग हो गया या मन्द पड़ गया है लगभग वे सब ही अपनेको अपवाद समझते हैं। वे अपने आप उन कुछएक मित्रोंकी अवस्थाका विचार करके सन्तुष्ट हो जाते हैं जिन्होंने, उनको निश्चय है, वह सुख प्राप्त किया है जिससे वे स्वयं वञ्चित रहे हैं।

प्रायः यह माना जाता है कि सुखी लोगोंका, सुखी राष्ट्रोंके सदृश, कोई इतिहास नहीं होता—अपने कार्योंके विषयमें वे चुप होते हैं। जो अपने विवाहके विषयमें बातें करते हैं प्रायः वे ऐसे लोग होते हैं जो उस सुखको खो चुके हैं जिसकी उन्हें आशा थी। सामान्यतः यह बात सत्य हो सकती है, परन्तु यह स्थायी रूपसे और गहरे तौरपर सत्य नहीं। अनेक लोग ऐसे हैं जो

सुखी गिने जाते और अभीतक अपनेको सुखी गिनते हैं, परन्तु जिनकी आन्तरिक शान्तिपर छाई हुई गुप्त निष्फलता अचानक प्रकट हो जाती है।

"असंख्य मन्द-काम-शक्तिवाले, बहुत शीघ्र घबरा जानेवाले, और थोड़े अस्वाभाविक लोगोंका यदि विचार न भी किया जाय, तो भी यह एक आश्चर्यजनक और लोमहर्षण बात है कि विवाहों-की इतनी बड़ी संख्या अपनी पहली प्रसन्नता खो ही नहीं बैठती वरन् किसी हद्दतक दुःखी भी हो जाती है।

चिरकालसे अनेक स्त्रियाँ और पुरुष मुझे अपने जीवनकी गुप्त बातें बताते चले आ रहे हैं। इसलिये मैं कह सकती हूँ कि उन असंख्य विवाहोंमेंसे जिनकी भीतरी अवस्थाओंका मुझे ज्ञान है बहुत ही थोड़े ऐसे हैं जिनको उतना भी सुख है जितना मनुष्य साधारणतया प्राप्त कर सकता है।

जिन विवाहोंको संसार, आत्मीयजन, *यहांतक कि पति और पत्नी भी* पूर्णतया सुखमय समझते हैं,वे जोड़ेमेंसे अधिक सहृदय व्यक्तिके लिये गुप्त रूपसे अन्धकारमय हैं।

जब वधू एक भोली कुमारिका हो जिसे संसारका कुछ भी ज्ञान नहीं, तो बहुधा पुरुषकी ओरसे ही पहले रङ्गमें भङ्ग डाला जाता है। परन्तु उसका दुःख भी पत्नीके दुःखके साथ ही आरम्भ हो जाता है। हमारी स्त्रियोंकी बाह्य स्वतन्त्रताने हमारी उत्तरीय जातिकी लड़कियोंकी पूर्वकालीन शुद्धताको तत्वतः नहीं बदला और न वह बदल ही सकती है। उनमें प्रायः न तो सिद्धान्तका

ज्ञान है और न स्वयंसिद्ध शारीरिक विकास, जो भौतिक विवाह-के मूल तथ्योंकी कल्पना करनेकी क्षमता प्रदान कर सके। सम्भव है कि लड़की अपने दूल्हाके व्यवहारसे काँप उठे और उस बेचारेको पता भी न हो कि मैं उसे डरानेका कोई काम कर रहा हूँ। तब वह वर, यह न जानते हुए भी कि मेरा कोई दोष है, और यदि है तो क्या है, पत्नीकी अव्यक्त पीड़ासे विकल और दुःखित हो जाता है।* तो भी, मैं समझती हूँ, यह बात सच है कि विवाहके आरम्भिक दिनोंमें युवतीकी अपेक्षा युवक अधिक सहृदय, अधिक रसिक, और समस्त साधारण बातोंके विषयमें अधिक जल्दीसे दुःख माननेवाला होता है। और वह अधिक उच्च कोटिकी आध्यात्मिक तथा शारीरिक एकताकी आशा लेकर विवाह करता है। परन्तु साथ ही अपनी पत्नीकी अपेक्षा उसका चाव उतर भी शीघ्र जाता है, उसे वैराग्य भी जल्दी हो जाता

---

*हमारे काम-शास्त्रके ग्रन्थोंमें भी बताया गया है कि नई वधूके साथ सुहागरातमें पहलेपहल किस प्रकार आचरण करना चाहिये। इसका यथोचित ज्ञान न होनेसे अनेक युवक तथा युवतियोंका जीवन दुःखमय हो जाता है। वधूको पतिके प्रति सदाके लिये उदासीनता वरन् घृणा उत्पन्न हो जाती है। काम-शास्त्रके आचार्योंने इसीलिये अपने ग्रन्थोंमें भिन्न भिन्न देशों, जातियों और अवस्थाओंकी स्त्रियोंके स्वभाव और प्रकृतिका सविस्तर वर्णन किया है। क्योंकि स्त्री-पुरुषको जबतक एक दूसरेकी प्रकृतिका यथेष्ट ज्ञान न हो, वे गृहस्थ-सुख प्राप्त नहीं कर सकते।

देखो—मेरा बनाया "रति-विज्ञान" (साहित्य-सदन, लाहौर द्वारा प्रकाशित)—अनुवादक।

है, और वह गृहस्थ-सुखको केवल रामराज्यकी बातें भी झट ही समझने लगता है।

इसके विपरीत, स्त्री इतनी जल्दी हताश नहीं होती। किन्तु गार्हस्थ्य-जीवनमें उसकी विशेष स्थितिके कारण, जोड़ेमेंसे बहुधा उसीको *गहरा घाव* लगता है और वह गृहस्थ-दुःखका घाव उसे भीतर ही भीतर खाकर उसके जीवनके तन्तुओंको नष्ट कर डालता है।

पूर्णसुख बहुसंख्यक तत्त्वोंके मिलनेसे बनी हुई एकता है। और इस एकताको नष्ट करनेवाली अगणित बातें हैं।

गार्हस्थ्य-जीवन जिन जिन कारणोंसे दुःखमय और नरक-तुल्य हो जाता है, यदि मैं उन सबका वर्णन करने लगूँ तो वह एक दर्जन बड़े बड़े ग्रन्थोंमें भी शायद न समाप्त हो। मैं यह पुस्तक उन लोगोंके लिये लिख रही हूँ जिनके विषयमें मैं समझती हूँ कि उन्होंने इस विषयकी विविध शाखाओंपर लिखी हुई दूसरी पुस्तकें पढ़ी हैं, या जो उन्हें पढ़ सकते हैं। इसलिये मैं यहाँ उन बातोंपर विचार नहीं करूँगी जिनपर दूसरे विद्वान् लिख चुके हैं। और न उन अस्वाभाविक अवस्थाओंका ही वर्णन करूँगी जिनसे स्त्री-पुरुष-धर्मपर लिखी हुई बहुतसी पुस्तकें भरी पड़ी हैं।

गत कतिपय वर्षोंमें वेश्यागमनके भयङ्कर परिणामोंका जनता-को यथेष्ट अनुभव हो चुका है। इसलिये इस बातको विस्तार-पूर्वक लिखनेकी आवश्यकता नहीं कि कोई भी ऐसा विवाह

सुखदायक नहीं हो सकता जहाँ पति एक दूसरे शरीरको खरीदने-के लिये अपना स्वास्थ्य तथा सम्मान बेचकर रोगोंकी गठरी खरीद लेता हो। निस्सन्देह इस समय प्रत्येक विचारशील युवक इस बातका अनुभव करता है कि ऐसे रोग न केवल पुरुष और उसकी पत्नीको ही नरककुण्डमें डालते हैं, वरन् उनकी अजात सन्तानके स्वास्थ्य तथा अस्तित्वको भी नष्ट कर देते हैं।

सदाचारी, समझदार और आशावादी दम्पतीको मद्यपान, आत्मासक्ति और भद्दे प्रकारकी स्वार्थपरताके साफ़ दिखाई देने-वाले दुष्परिणामोंको बतानेकी आवश्यकता नहीं।

हमें सारभूत नियमोंके अधिक सूक्ष्म अतिक्रमोंका विचार करना है। सबसे पहली दुःखकी बात यह है कि दुलहा और दुलहिन दोनोंको साधारणतः ऐसी व्यवस्थाओंका ज्ञान नहीं होता। परन्तु प्रकृतिके दूसरे कामोंके सदृश, यहाँ भी नियमभङ्ग करने वालेको, चाहे उसे उस तोड़े हुए नियमके अस्तित्वका ज्ञान हो या न हो, दण्डित होना पड़ता है।

इस अविद्याकी अवस्थामें जो आज इतनी अधिक फैल रही है, इस बातका पहला लक्षण कि उन दोके बीच, जो समझते थे कि हमें विवाहसे स्वर्गीय आनन्दकी प्राप्ति होगी, कुछ दोष हैं, प्रायः यह होता है कि वे अपनेको अकेला समझने लगते हैं। उन्हें अनुभव होता है कि जिसके साथ भेदभाव छोड़कर एक हो जानेकी आशा की जाती थी वह मेरे सूक्ष्म प्रमोद और अनुभूतिमें भाग लेनेके अयोग्य है, और प्रियतमकी आवश्यकताओंको

समझनेमें असमर्थ है। अदृश्य रूपसे अपनी जड़ोंको गहरा गाड़ देनेवाली चीज़को सबसे पहले दिखलानेवाली बहुधा तुच्छ बात ही हुआ करती हैं। स्त्री कभी कभी किसी ऐसी तुच्छसी बात-पर घण्टों सिसकियाँ भरा करती है कि जिसको वह ठीक तौरपर शब्दोंमें प्रकट भी नहीं कर सकती। उधर नवयुवक पति इस बातपर सिर धुना करते हैं कि मुझे तो आशा थी कि पत्नीसे मुझे स्वर्गीय सुखकी प्राप्ति होगी, परन्तु यह तो मेरी उन्नतिके मार्गमें एक भारी बाधा सिद्ध हो रही है। उसकी यह बात जितनी तुच्छ होती है उतनी ही उसे अतर्क्य प्रतीत होती है।

फिर, हमारे शरीर, हमारे मन, और हमारी आत्माके बीच ऐसा गूढ़ार्थक अन्तर्सम्बन्ध है कि विवाहित जोड़ेके दुहरे व्यापारों, और उनको एकतान करनेवाले नियमोंको न जाननेसे जो अप-राध होते हैं उनके लिये सर्वथा भिन्न भिन्न क्षेत्रोंमें दण्ड भोगना पड़ता है, यहाँतक कि नए और बिलकुल नए वैमनस्य उनके पारस्परिक संसर्गकी भूमिसे स्वतः उत्पन्न होते प्रतीत होते हैं। क्रमशः या शीघ्रतासे प्रत्येक हृदय वियोगी भावोंको छिपाना आरम्भ कर देता है। आप कहेंगे कि मेरा यह कथन अधिक व्यापक है। परन्तु इसका आधार संख्यातीत लोगोंके वास्तविक जीवन हैं। जिन स्त्रियोंके विवाहोंको सब लोग आदर्श सुखी विवाह और पृथ्वीपर स्वर्ग समझते हैं, मैंने उन्हींके मुखसे उनकी गुप्त मर्मभेदी घटनाएँ विस्तारपूर्वक सुनी हैं। इन दुःखोंकी उनके पतियोंके कानमें भनकतक भी नहीं पहुंची।



अनेक पुरुष जानते हैं कि उन्होंने अपनी स्त्रियोंमें प्रेमकी कमी-के अनुभवको कैसे छिपाकर रक्खा है।

अपेक्षाकृत कच्ची और अधिक साधारण तबीयतोंमें ग़लत-फ़हमी—भ्रम–का भाव शीघ्र प्रकट हो जाता है। दम्पतिकी निष्फलताका वर्णन न केवल बहुसंख्यक पुस्तकों और नाटकोंमें ही पाया जाता है किन्तु हँसी करनेवाले पत्रों तथा लोगोंके प्रतिदिनके मन बहलाव और गपशपमें भी मिलता है।

इस समय अनेक "आन्दोलन" चल रहे हैं। सब तरफसे लोगोंको यह कहनेका साहस हो गया है कि सारा दोष खुद विवाहमें ही है। कई लोग यह समझ रहे हैं कि केवल इस विवाह-बन्धनको ढीला कर देने और किसी दूसरे जोड़ीदारके साथ नए सिरेसे गार्हस्थ्य-जीवनका आरम्भ करनेसे उनके जीवन आनन्दमय और सुखी हो जायँगे। परन्तु ऐसे सुधारक बहुधा इस बातको भूल जाते हैं कि वह स्त्री या पुरुष जिसे एक साथीके साथ विवाहको उज्ज्वल और सुन्दर बनानेकी विधिका कुछ भी ज्ञान नहीं उसे दूसरेके साथ भी सफलताकी बहुत आशा नहीं हो सकती। काम-कलाका श्रद्धापूर्वक अध्ययन करनेसे ही दो जुड़े हुए जीवनोंमें प्रेमका उज्ज्वल दीपक प्रकाशमान् हो सकता है।

काम-कलाको एक वार सीख लेनेपर भी इसके अभ्यासके लिये कुछ समयकी आवश्यकता है। श्रीमती एलन की कहती हैं कि "प्रेम शान्ति चाहता है, प्रेम स्वप्न देखता है; यह हमारे व्यक्तित्व और समयके अवशिष्टांशपर जीता नहीं रह सकता।"

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि आधुनिक संक्षोभकी दौड़-धूपमें प्रेम न केवल अपनी चारुता और सौन्दर्य ही वरन् अपना थोड़ा बहुत प्राणभूत तत्त्व भी खो बैठता है। यह दौड़धूप और जल्दी हमें बुरी तरहसे सताती और हमारी मानसिक शक्तियोंको निर्बल कर रही है। इसके दुष्परिणामोंका अनुभव पुरुषकी अपेक्षा बहुधा स्त्री अधिक करती है।

नागरिक जीवनका मर्यादासे अधिक उत्तेजन पुरुषकी प्रतिक्रियाओंकी गतिको बढ़ाता है परन्तु उसकी प्रतिक्रियाओंको रोक देता है। फिर, इससे भी बुरी बात यह है कि जिन लोगोंके पास आपसमें काम-केलि करनेके लिये अवकाश है भी, उनके लिये आज सिनेमा और नाटकोंवाले नगरोंकी अपेक्षा वनों और उद्यानोंमें शान्त और मनोहर विलासके लिये अधिक अवसर नहीं है, जहां किसी जङ्गली फूलको तोड़नेकी हाव-भरी अदा अथवा ऐसी ही कोई दूसरी बात युवक और युवतीमें धीरे धीरे परन्तु गहरे तौरपर काम वासनाओंको उत्तेजित करनेका बहाना बन जाती* है। पुरुषमें कामका उद्दीपन बहुत शीघ्रतासे होता है। यह बाकी सब वासनाओंको मात कर देता है। अशिक्षित पुरुष केवल

* '[illegible]' और 'कामसूत्र' में नागरिक तथा रसिक व्यक्तिके विषयमें लिखा है कि वह अपना मकान किसी नदी या सरोवरके किनारे बनवाये। मकान दुहरा और एक रमणीक वाटिकासे घिरा हो। उसके बाहरी भागमें स्थान स्थानपर फूलोंके गमले रखे हों, सुगन्धित पुष्पोंके गुच्छे लटक रहे हों, मैना और तोता आदि पक्षी मनोहर बोलियां बोल रहे

एकही बात चाहता है। वह है काम-वासनाकी सिद्धि। स्त्री, चूंकि ऐसा करना उसकी प्रकृतिहीमें है, अपक्कताको क्षमा कर देती है। परन्तु कभी न कभी उसका प्रेम, सम्भवतः गुप्त रूपसे, पतिके विरुद्ध सिर उठाता है और तत्पश्चात् सदाके लिये चाहे बाहरसे वह कैसी भोली क्यों न बनी रहे उसके हृदयमें उस कर्मके प्रति, जो उसके लिये सदा चित्ताकर्षक और उन्मत्तकारी होना चाहिये था, घृणा और विरक्तिके सिवा और कुछ नहीं पैदा होता। * आजकल लोग इतने कृत्रिम और झूठे वातावरणमें उत्पन्न होते

हों, कबूतर और फ़ाखता कूजते हों। कमरेके भीतर सुन्दर स्वच्छ बिछौने बिछे हों और दीवारें मनोहर और आदर्श पुरुषोंके चित्ताकर्षक चित्रोंसे सजी हुई हों। भ्रमरोंका गुंजार करना, कोयलका कूकना, चन्द्रमाकी चांदनी, सुन्दर पतली लताएँ, हाथीकी मस्त चाल, और चञ्चल कटाक्ष, ये बातें कामके उद्दीपनमें सहायक होती हैं। ये बाहर देहातके शान्त और खुले जीवनमें ही मिल सकता है। नगरके दौड़धूपके जीवनमें जो कामोद्दीपन होता है वह मदिरापानसे शरीरमें शक्ति आनेके सदृश अस्वाभाविक एवं हानिकर होता है।—अनुवादक।

* 'काम शास्त्र' के प्राचीन ग्रन्थोंमें लिखा है कि चतुर पुरुषको चाहिये कि सुहाग-रातमें प्रेमालाप, आलिङ्गन और चुम्बन आदि बाह्यरीतके द्वारा स्त्रीमें कामका उद्दीपन करे। जब उसके अन्दर कामेच्छा पूर्ण रूपसे उत्तेजित हो जाय तब ही रमण करे। जो पुरुष कामके वशीभूत होकर स्त्री-पर एकदम टूट पड़ता है वह मूर्ख है। स्त्रीको उसकी इस चेष्टासे उसके प्रति उदासीनता और घृणा उत्पन्न हो जाती है, जिससे कालान्तरमें दम्पति-का गृहस्थ-सुख नष्ट हो जाता है। देखो "रति-विज्ञान", (साहित्य-सदन, लाहौर द्वारा प्रकाशित)—अनुवादक।

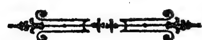
और पलते हैं कि यह प्राथमिक बात भी कि काम-क्रीड़ाएं आनन्दमय और प्रफुल्ल होनी चाहियें उनको मालूम नहीं। एक प्रसिद्ध अमेरिकन डाक्टरने एक विस्मयजनक बात कही है। वह कहता है "मैं नहीं मानता कि रतिकर्ममें पारस्परिक आनन्दका जीवनके सुखपर कोई विशेष प्रभाव पड़ता है।"

(दि अमेरिकन मैडिकल ऐसोशियेशन रिपोर्ट १६००)

यह कदाचित् एक बहुत ही अन्तिम बात है। फिर भी बहुतसे डाक्टर, स्त्री-रोगचिकित्सक, और शरीर-शास्त्रके विशेषज्ञ मनुष्यके स्त्री-पुरुष धर्म-सम्बन्धी जीवनके कई गम्भीर-तम तथ्योंके विषयमें बिलकुल अज्ञ अथवा भूले हुए हैं। ऐसी दशामें यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं कि स्त्री-पुरुषके साधारण जोड़े, कितने ही आशापूर्ण होनेपर भी, उस आनन्दको भङ्ग और नष्ट कर डालते हैं जो उनके लिये मृत्यु पर्यन्त रहनेवाला किरीट हो सकता था।



तीसरा अध्याय



स्त्रीकी "विपरीतता"

हा! उस प्राणीके लिये जिसके संसारमें होनेकी मैं कल्पना तो कर सकता हूँ, परन्तु जिसको प्रमाणित करनेके लिये मैं जीवित नहीं रहूँगा। वह प्राणी जिसको मैं अपनी रसिकताएँ और प्रवृत्तियाँ, अपने मनके सर्व क्लेश और कष्टके काल्पनिक कारण, और आनन्दके सुख-स्वप्न सुना सकूँ। मैं मित्रताके इन उत्तम कामोंके लिये एक दो देवियोंको सधानेका यत्न करता रहा हूं, परन्तु अबतक मैं इसमें सफलताकी डींग नहीं मार सकता।——हैरिक.

उस सामान्य पुरुषकी क्या गति होती है जो हर्ष और आशाके साथ अपने लिये भलीभाँति उपयुक्त युवतीसे विवाह करता है? वह जी जानसे चाहता है कि हम दोनोंको आजन्मपरस्पर सुख मिलता रहे। उसने माता-पिता और मित्रोंसे जो उपदेश सुने हैं और धर्म-पुस्तकोंमें जो बातें पढ़ी हैं उनके अनुसार आचरण करनेका वह निश्चय करता है। वह छोटी छोटी बातोंका भी बड़ा ध्यान रखता है। वह कडुवे शब्द नहीं बोलता, पत्नीको अपने प्रत्येक काममें सम्मिलित करता है। सब कामोंमें उससे परामर्श लेता है, वायु-सेवनके लिये उसे साथ ले जाता है। दोनों एक दूसरेसे पलभरकी जुदाई भी सहन नहीं कर सकते। परन्तु कुछ ही मास या कुछ ही वर्ष बाद ऐसा प्रतीत

होने लगता है मानों वे एक दूसरेसे ऊब गए हैं। पहले जहाँ दो आत्माओंका पूर्ण मिलाप जान पड़ता था, अब वहाँ फ़र्क आ जाता है। युवकको प्रियामें प्रेमका अभाव मालूम होने लगता है। वह उसे अज्ञेय जान पड़ती है। बहुत ही थोड़े पुरुष ऐसे होंगे जो इस बातको अपने मित्रोंके सामने भी स्वीकार करें। परन्तु प्रत्येक हृदय अपनी व्यथाको आप जानता ज़रूर है।

हो सकता है कि पति भार्याके साथ कभी कभी हँसी करे और उसकी विपरीतताके विषयमें अतीव मित्रोचित भावसे उसे खिजाए। उसके इस प्रकार हँसनेको देखकर प्रत्येक व्यक्ति यही समझेगा कि वह गम्भीर प्रेमके वशीभूत होकर ये चोंचले कर रहा है। परन्तु उसके प्रेमकी जड़को एक क्षुद्र कुत्सित कीड़ा— यह भाव कि वह मेरे विपरीत है—काट रहा है। वह अनुभव करता है कि कभी कभी उसमें अप्रकटनीय रूपसे प्रेमाभाव पाया जाता है। कई बार मैं "कुछ भी नहीं करता" और अकारण ही उसकी आँखोंमें आँसू आ जाते हैं। 'किस दुःखसे अश्रु मोचन कर रही हो?' इस प्रश्नका वह कुछ भी उत्तर नहीं दे सकती।

वह देखता है कि जहाँ पहले मेरे प्रेम तथा आलिङ्गन-चुम्बन आदि करनेसे वह मुस्कुराती और सहर्ष मेरी बात मान लेती थी वहाँ अब कुछ ही दिन बाद मेरे पहलेसे भी अधिक प्रेम दिखलाने, अधिक कोमलताका बर्ताव करनेपर भी वह उदासीन और निःस्नेह ही बनी रहती है। अथवा उसका वह प्रेम बनावटी है। पति इस हार्दिक प्रेमके अभावकी चर्चा चाहे न करे, परन्तु इससे उसे

दुःख बहुत होता है। यह गम्भीर अप्रकटनीय दुःख ही बहुधा पुरुषके प्रेमकी समाप्तिका उपक्रम होता है। पुरुषोंको इस बातका अनुभव करके बड़ी प्रसन्नता होती है कि वे अपनी प्रियाकी प्रकृतिको समझते हैं और हमारी प्रिया एक सज्ञान स्त्री है।

जब इस अप्रकटनीय भ्रम —ग़लत फ़हमी— को उत्पन्न हुए कुछ दिन हो जाते हैं, तो यदि पुरुष शङ्काशील प्रकृति—शक्की तबीयत—का हो तो वह अपनी स्त्रीके चरित्रपर सन्देह करने लग जाता है। वह समझने लगता है कि मेरे प्रति इसके स्नेहके कम हो जानेका कारण यही है कि इसका किसी पर-पुरुषपर प्रेम हो गया है। जब कभी वह उसमें स्नेहाभावका अनुभव करके हैरान होता है, तो वह उसमें अपना कुछ दोष नहीं देखता। वह समझता है कि मेरे हृदयमें तो उसके प्रति वैसा ही प्रगाढ़ प्रेम है, वैसी ही तीव्र लालसा है जैसी कि कभी पहले थी। उसे स्मरण होता है कि कुछ दिन पहले मेरी उत्सुकतासे उसमें भी उत्सुकता उत्पन्न हो जाती थी। इन सब बातोंको ध्यानमें रखते हुए वह इस अनुमानपर पहुँचता है—और यह अनुमान उसे अमोघ तथा युक्तिसंगत भी जान पड़ता है—कि या तो मेरी स्त्री पतिव्रता नहीं, अथवा यह अज्ञेय, विपरीत और अस्थिर बुद्धिकी स्त्री है। ये दोनों ही विचार पागल कर देनेवाले हैं।

सामान्य पुरुष अस्थिर बुद्धिसे बहुत घबराता है। मनश्चापल्य उसके सर्वोत्तम प्रयत्नोंको व्यर्थ कर देता है। स्त्रीका स्वभाव-चाञ्चल्य तर्काभावके कारण है, या ऐसा प्रतीत होता है।

तर्क पुरुषकी एक बहुमूल्य और बड़े परिश्रमसे प्राप्त की हुई शक्ति है। इसीके कारण मनुष्य दूसरे पशुओंसे श्रेष्ठ है। इसलिये वह तर्कका तिरस्कार नहीं देख सकता।

पुरुषको यह स्वीकार करते बहुत दुःख होता है कि मेरी पत्नीमें तर्क और विचार-शक्तिका अभाव है। वह इस ख़यालको अपने मनमें उठते ही दबा देना चाहता है। स्त्रीकी बुद्धि जूड़े के नीचे होती है, वह इस निन्दासूचक कहावतको अपनी प्रियापर चरितार्थ होते नहीं देख सकता।

फिर प्रायः ऐसा होता है कि युवकको इस बातसे बड़ा दुःख और विकलता होती है कि मेरे प्रेमकी बहुत अधिक उग्रताके कारण पत्नीको कष्ट हुआ है। तब वह अपने मनोविकारोंके निग्रह-द्वारा उसे प्रसन्न करनेका यत्न करता है। वह अपने आपसे पूछता है—क्या धर्म्म और नीतिके ग्रन्थ पुरुषको संयमका उपदेश नहीं देते? वह तरुणोंके पथदर्शनके लिये लिखी हुई पुस्तकें पढ़ता है, और उन सबमें आत्म-संयम और आत्मनिग्रहका उपदेश भरा पाता है। तब उसका दूसरा काम यह होता है कि वह पत्नीके साथ प्रेमालाप और प्रणय-चेष्टाओंको बहुत कम कर देता है, और सांझ होते ही पत्नीके प्रेमसे खिंचे हुए घर आनेके बदले वह रातका अधिक समय निठल्ली बातों और इष्ट मित्रोंकी गपशपमें काटता है, या कोई घोर परिश्रमका काम करने लग जाता है।

उस समय यदि उसके आँखें हैं और परमेश्वरने उसे कुछ भी

बुद्धि दी है तो उसे यह देखकर शोक और विस्मय होगा कि गृह-देवी अभीतक व्यग्र अथवा व्यथित है। सभी अच्छे युवकोंकी यह लालसा होती है कि हम अपनी प्रियाके भावोंको समझ सकें, इसलिये पति अनुनय-विनय और प्रार्थना-याचनाद्वारा पत्नीसे उसके हार्दिक क्लेशका कारण पूछता है। उसे यह मालूम करके बड़ा विस्मय होता है कि जिस काम-केलिके कारण हालहीमें वह मुझसे दूर हटती थी, और जिस केलिको मैंने मानसिक प्रयत्नसे इतनी कठिनाईके साथ दबाया था, उसके साथ उसी केलिके न होनेसे इस बार वह दुःखी है। वह हताश होकर अपनेसे प्रश्न करता है—पुरुषको क्या करना चाहिये? यदि वह पठित है तो वह सम्भवतः गृहस्थधर्म तथा यौवन-विज्ञानपर जितनी भी प्रकाशित पुस्तकें उसे मिल सकती हैं उन सबको घोटकर पी जानेका यत्न करता है। परन्तु उनमें उसे सच्चे पथ-दर्शनका मिलना सम्भव नहीं। उनसे उसे यही शिक्षा मिलती है कि उसे प्रत्येक दृष्टिसे 'आत्म-संयम' करना चाहिये। परन्तु ग्रन्थकर्त्ताके अपने शीलके अनुसार वह देखेगा कि 'आत्म-संयम' का अर्थ वहाँ यह है कि पत्नीके साथ सप्ताहमें तीन बार या मासमें एक बारसे अधिक—या सन्तानोत्पत्तिके सिवाय कभी भी सम्भोग नहीं करना चाहिये। वह प्राकृतिक नियमपर आश्रित कोई भी युक्तिसङ्गत पथदर्शन नहीं पाता।

सम्भव है ऐसी दशामें अपनी प्रकृतिके अनुसार वह 'आत्म-संयम' का अभ्यास आरम्भ कर दे।

परन्तु ऐसा सम्भव है और सम्भवतः प्रत्येक विवाहमें एक या अनेक बार ऐसा होता भी है कि एक रात ऐसी आती है कि जब पुरुष—जिसने वीरतापूर्वक 'आत्म-संयम'का अभ्यास किया है—अकस्मात् अपनी स्त्रीको खाटपर पड़ी अकेली आहें भरती और करवटें बदलती देखता है।

वह अप्रत्यक्ष रूपसे अपने डाक्टर या मित्रोंसे परामर्श लेता है। हम पूछते हैं कि क्या डाक्टर या उसके मित्र उसे इस विषयके बड़ेसे बड़े प्रामाणिक विशेषज्ञोंसे कुछ अधिक बता सकते हैं? प्रसिद्ध अध्यापक फ़ोरल (सैक्षुअल क्वेश्चन, अँगरेज़ी अनुवाद १६०८) निम्नलिखित परामर्श देता है:—

'सुधारक लूथरने, जो एक क्रियात्मक पुरुष था, उच्चतम मैथुनशक्तिके दिनोंमें, सप्ताहमें दो या तीन बार† समागम करनेका सामान्य नियम रखा है। मैं कह सकता हूँ कि एक चिकित्सकके रूपमें मेरे बहुसंख्यक पर्यवेक्षणोंने इस नियमकी पुष्टि की है। यह नियम उस स्वाभाविक दशाके बिलकुल अनुरूप जान पड़ता है जिसके उपयुक्त* पुरुषने अपने आपको सहस्रों वर्षोंमें धीरे धीरे बनाया है। जो पति इस औसतको निरव्यवहार-सिद्ध अधिकार नहीं समझते, उनका दावा झूठा है। क्योंकि स्वाभाविक

† सुश्रुतमें लिखा है कि सर्दियोंमें अधिकसे अधिक चौथे दिन बाद, बसन्तमें एक सप्ताह बाद, गर्मियोंमें एक मास बाद और बरसातमें एक पक्ष बाद समागम करना चाहिये।—अनुवादक।

* इतने बड़े बिचारक और उदारचेताके इस कथनसे मालूम होता है कि इस प्रश्नके स्त्रीके पक्षपर या उसके स्वाभाविक प्रयोजनोंपर अबतक कितना कम ध्यान दिया गया है।

पुरुषके लिये इससे अधिक बारके संसर्गसे बचना सर्वथा सम्भव है। और इस प्रकार ब्रह्मचर्य रखना उसका कर्तव्य है। यह न केवल पत्नीके रोगी होनेके दिनोंमें ही होना चाहिये, किन्तु उसके रजस्वला तथा गर्भवती होनेके दिनोंमें भी।'

अनेक पुरुष इतने विचारशील नहीं होंगे कि वे इस उपदेशके अनुसार आचरण करें, क्योंकि यह जीवनके एक उच्च आदर्शको दिखलाता है। परन्तु इसके विपरीत, अनेक ऐसे भी हैं जो अपनी मानसिक कामनाके लिये तथा अपनी प्रियाकी प्रसन्नता और फलतः अपने जीवनमें अपूर्व आनन्दकी प्राप्तिके लिये भी केवल यहाँतक ही नहीं, वरन् इससे भी अधिक आत्म-निग्रह करनेको तैयार हैं।

वे स्त्रियाँ कितना ही अधिक आत्म-निग्रह करनेको सहर्ष तैयार हों, परन्तु पुरुषके लिये एक बड़ा प्रश्न है—कहाँतक? इस शास्त्रके बहुतसे विज्ञ लोगोंको अनेक प्रकारसे और भिन्न भिन्न ढङ्गोंपर चलाना चाहते हैं। हो सकता है कि युवा पति पहिले एकके उपदेशपर चलकर देखें और फिर दूसरेके, और तब भी अपनी पत्नीको असन्तुष्ट, अज्ञेय—अस्थिरबुद्धि पाये। अन्तको, वह हतोत्साह होकर, थक जाय तथा पत्नी अपने "भार्याके कर्तव्यों" में अनुमतिकी नीरस उदासीनतामें डूब जाय। उस समय पतिके हृदयमें प्रतिहिंसामय आगकी लपटें उठती हैं। कभी कभी उसके मनमें आता है कि यदि वह इतनी चपल न होती तो भी हम सुखी होते।

अनेक लेखकों, औपन्यासिकों, कवियों और नाटक-कारोंने

मानव-जीवनकी अतीव दुर्घटनाको नारी-प्रकृतिकी 'अक्षय विपरीतताका परिणाम दिखलाया है। दयालु मनुष्य कदाचित् थोड़ा उपकारकके रूपमें, मुस्कुराकर हमसे कहते हैं कि स्त्रियाँ पुरुषोंकी अपेक्षा अधिक प्रकृतिसिद्ध अधिक बालिश और कम युक्तिसंगत हैं। कडुवे स्वभावके लोग स्त्रियोंकी जिस बातको समझ नहीं सकते, और जो उनकी बुद्धिको हैरान कर देनेके कारण उन्हें अयुक्त मूर्खतापूर्ण प्रतीत होती है, वे उसका उपहास करते हैं और निन्दा करके हँसी उड़ाते हैं।

यह बात बड़ी विचित्र जान पड़ती है कि जो लोग विश्वब्रह्माडके प्रत्येक प्रदेशमें प्राकृतिक नियमकी तलाशमें रहते हैं, वे इस अत्यावश्यक विषयकी, ऐसे विषयकी जिसका ग्रहोंके नाम रखने और कीड़ोंको इकट्ठा करनेकी अपेक्षा हमारे साथ अनन्तगुना अधिक सम्बन्ध है, उपेक्षा करें। स्त्री तत्वतः अस्थिरबुद्धि *नहीं* है। यदि नियमके अस्तित्वका सन्देह किया जाता तो उसकी सत्ताके कुछ नियम बहुत काल पहले आविष्कृत हो चुके होते। परन्तु हमारे समाजकी सामान्य रचना ही इस बातके अधिक अनुरूप हुई है कि पुरुष स्त्रियोंको निर्विवेक और अस्थिरबुद्धि प्राणी समझते हुए उनपर हँसें और सन्देह तथा घृणासे नाक भौं सिकोड़ें; परन्तु जब उनका अपना स्वार्थ हो तो उनका अनुनयविनय भी कर लें, किन्तु उनका गम्भीरतापूर्वक अध्ययन न करें।

पुरुषोंने कदाचित् अनिश्चित रूपसे यह समझ लिया है कि जीवनकी चारुता स्त्रियों और पुरुषोंके बीच लैङ्गिक प्रभेदों—स्त्री-

पुरुषधर्मविषयक भिन्नताओं—के कारण है; इसलिये उन्होंने चटपट यह सिद्धान्त गढ़ लिया है कि स्त्रियोंका अस्थिर-बुद्धि—चपल—होनेमें पुरुषोंसे भेद है। इसके अतिरिक्त उस निःस्नेहताको जो व्यग्रसे व्यग्र स्त्रीमें भी कभी कभी आ जाती है, केवल अस्थिर बुद्धिकाही परिणाम समझकर पुरुष जब जी चाहे स्त्रीको हठपूर्वक अपनी विषय-तृप्तिके लिये उद्यत करनेकी चेष्टाको अज्ञानतः उचित समझता रहा है।

अवस्थाएँ कुछ ऐसी हैं कि अबतक आविष्कारक तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान-कर्त्ता, ऐतिहासिक तथा देशस्थितिशास्त्री, कवि और शिल्पी मुख्यतः पुरुष ही हुए हैं। इससे सम्मिलित जीवनमें स्त्रीके पक्षका बहुत थोड़ा या बिलकुल ही प्रकाश नहीं हो पाया। जहाँतक उसे आर्थिक परतन्त्रताके दबावमें रहना पड़ता है और सन्तानोत्पत्तिके कालमें उसे रक्षाका प्रयोजन है, स्त्री यथा-सम्भव उस पायेतक अपनेको पुरुषकी इच्छाके अनुसार साँचेमें ढालकर सन्तुष्ट करती रही है। उसने अपने स्वाभाविक मनो-विकारों और अन्तस्तलसे निकलनेवाले विचारोंको दबाए रखा है।

अधिकांश स्त्रियोंने बौद्धिक रीतिसे इस बातका कभी अनु-भव ही नहीं किया। किन्तु बहुतोंको इसका धुन्धला सा ज्ञान हुआ है कि नारीकी प्रकृति उस चीज़को एकतान करनेके लिये बनी है जिसपर नरका इतना भी अधिकार नहीं जितना कि उसका समुद्रकी लहरोंपर है।

समुद्र नरको वशीभूत और अधीन करके उसके यत्नपूर्वक

लगाए हुए बन्धनोंपर हँसता है। परन्तु स्त्री अपने शरीरपर पुरुषकी कामनाके सामने झुक गई है, और पुरुष नारी-शरीरके स्पन्दनोंका कुछ भी ध्यान न करके, अपनी इच्छाके अनुसार उसके पास जाता या नहीं जाता है। स्त्रीरूपी सागरकी कुछ लहरें पुरुषकी अवज्ञा करतीं और उसे धमकाती हैं—यथा रजः-स्रावकी चान्द्रमास लहर, गर्भमें बच्चे के बढ़नेके दस चांद्रमासका कालचक्र और दसवीं लहरके अन्तमें बालककी उत्पत्ति—ये तत्व इतने प्रबल हैं कि इनपर पुरुष काबू नहीं पा सकता। परन्तु नारी-जातिके सूक्ष्म ज्वारभाटेकी तरङ्गोंको पुरुष नहीं देख सका, उनकी वह चिन्ता नहीं कर सका।

उदाहरणके लिये देखिये। यदि कोई तैराक सागरके रेतीले किनारेपर उस समय पहुँचता है जब कि ज्वार उतर चुका है और लहरें पीछे हट चुकी हैं, जिससे जहाँ उसे गहरा नीला जल देखनेकी आशा थी वहाँ अब सूखी रेत मिलती है, तो क्या वह स्नानसे वञ्चित रहनेके कारण क्रोधसे समुद्रको 'अस्थिर बुद्धि' कहेगा ?*

किन्तु कोमलसे कोमल प्रकृतिके पतिको भी उस समय अपनी

---

* पशु-जगत्में भी देखा जाता है कि जब मादामें मदनकी हिलोर उठती है—वह गरम होती है—तब ही वह नरको निकट आने देती है। नर भी दूरसे ही मादाके 'गरम होने' को किसी सूक्ष्म रीतिसे समझ लेता है। मैंने एक ऐसे पुरुषके विषयमें सुना है जो स्त्रीको देखकर ही जान लेता था कि यह रजस्वला है। उसने अपनी इस शक्तिकी परीक्षा दी थी।

—अनुवादक।

पत्नीकी उदासीनता तथा स्नेहाभावमें केवल अस्थिर बुद्धि ही देख पड़ती है जब कि वह मदन-तरङ्गके उतर जानेपर भी अपने शरीरको उसके अर्पण कर देती है।

इस प्रश्नका एक दूसरा पहलू भी है। और इसपर समझने कदाचित् और भी कम विचार किया है। अनेक बार ऐसा होता है कि अनुराग-भरी स्त्रीमें मदन लहराता होता है परन्तु पति उसकी उत्सुकताके सूक्ष्म चिन्होंको पहचान नहीं सकता। ऐसी स्त्रीकी दशा बड़ी करुणा-जनक होती है। इस कृत्रिम जीवनके युगमें बहुधा पुरुषकी कामना उपरि तलका प्रयोजन—सतही ज़रूरत—झटपट तृप्त हो जानेवाली, वर्णहीन, सौन्दर्यरहित होती है। उसको उस हावभाव और प्रणय-क्रीड़ाकी गहरी जटिलता-ओंका कुछ भी ज्ञान नहीं, जिनका आनन्द एक प्रणयके रहस्योंको जाननेवाला ले सकता है। ऐसे पुरुषको उसकी स्त्री वास्तवमें अकारण ही क्रोधी, धृष्ट, या अस्थिर-बुद्धि प्रतीत हो सकती है।

स्त्रीमें अद्भुत हिलोरें उठ रही हैं। वे सुगन्धित हैं और उनमें मानव-जातिके बहुसंख्यक अनुभव भरे पड़े हैं। ये अनुभव उस प्राचीन कालसे आरम्भ होते हैं जब मनुष्यको अवकाश बहुत होता था और वह पुष्प-मालाएँ गूँथकर प्रणयका प्रकाश किया करता था। नारीके शरीर-सागरमें उठनेवाली ये अद्भुत लहरें उसे हर्षा-वेश तथा आत्म-प्रकाशके लिये विवश करती हैं, परन्तु शर्त यह है कि आरम्भमें पुरुष प्रथम पग उठाने, या स्त्रीके हावभावको समझने तथा उसका आदर करनेको तैयार हो। यदि स्त्री

मोहिनी काम-क्रीड़ा दिखलाए परन्तु पुरुष उसपर कुछ ध्यान ही न दे तो नारी-हृदयपर भारी चोट लगती है। इसलिये स्त्री और विशेषतः पत्नी, इस चोटको सहनेकी जोखिममें पड़नेका बहुत ही कम साहस करती है। काम-कलाको जाननेवाले पुरुषको वह सैकड़ों सूक्ष्म संकेतोंद्वारा बता सकेगी कि मदनका प्रवाह इस समय चढ़ावपर है, और वह सहर्ष उस अवसरसे लाभ उठा सकेगा। परन्तु यदि उसका पति काम-कलासे अनभिज्ञ है और उसके सूक्ष्म संकेतोंको नहीं समझता, तो उस बेचारीके लिए मौन तथा आत्मनिग्रहके सिवा कोई और चारा नहीं रहता*। और इनका अनिवार्य्य परिणाम आत्म-ग्लानि होता है। इसके पश्चात् उसके अन्दर उस पुरुषके प्रति प्रतिहिंसाका भाव उत्पन्न हो जाता है जो "प्रेम" की डींग हाँकते हुए उसका इस प्रकार अपमान करता है।

स्त्रियोंकी शरीरशास्त्र-सम्बन्धी प्रतिक्रियाओंके तत्वोंसे अनेक आधुनिक पुरुष इतने अनभिज्ञ होते हैं कि श्रीमती ज० का मामला इसका स्पष्ट उदाहरण है। उसका पति उसके साथ लाड़-प्यार और प्रायः सम्भोग किया करता था, परन्तु पारस्परिक संयोगके लिये

---

* काम-शास्त्रके प्राचीन आचार्य्योंने इसीलिए अपने ग्रन्थोंमें स्त्रियोंकी प्रकृति, उनके हावभाव तथा मदनके उतार-चढ़ावका सविस्तर वर्णन किया है। उन्हें जान लेनेसे पुरुष कभी भूल नहीं कर सकता। देखो मेरे बनाए "रति विज्ञान" (साहित्य-सदन, लाहौर द्वारा प्रकाशित) में मदनोदय तथा स्त्रियोंके हावभावका वर्णन।— अनुवादक।

जिन भावोंको स्त्रीमें पहले उत्तेजित कर लेना आवश्यक है उनको उत्तेजित करनेका वह कष्ट न करता था। विवाहके समय वह एक भोलीभाली लड़की थी, परन्तु उसे प्रायः अनिश्चित रूपसे इस बातका अनुभव होता था कि मेरे पतिके प्रेममें किसी बातका अभाव है। उसके पतिने उसके अधरों और कपोलोंके सिवा और किसी दूसरे स्थानका कभी चुम्बन ही न किया था। परन्तु एक बार जब कामकी नदी उसके शरीरमें खूब ज़ोरसे उमड़ रही थी (कामके चढ़ावका बिलकुल ज्ञान न रखते हुए) उसने अपने हृदयमें इस लालसाका अनुभव किया कि मेरा पति अपने सिर और ओष्ठोंसे मेरी छातीको दबाए। स्त्रीकी छातियों और शेष मैथुन-सम्बन्धी जीवनके बीच जो आपसका सचेतन सम्बन्ध है, वह केवल शारीरिक रोमाञ्च ही नहीं, वरन् एक अनुरागमयी रमणीकी उस बालकके लिए लालसा है जिसका अभी उसके गर्भमें प्रवेश नहीं हुआ। इस सन्तान-लालसामें एक काव्यमय सौन्दर्य भरा पड़ा है। जो पति अपने अधरोंके कोमल स्पर्शसे प्रियामें मिश्रित आनन्दको उत्तेजित कर सकता है वह लालसा उसके प्रति कोमलताके कुहरमें विलीन हो जाती है। श्रीमती ज० के लज्जापूर्वक पतिसे कहनेपर, उसके पतिने शीघ्रतासे एक बार उसके वक्षःस्थलका चुम्बन किया। वह इतना अनभिज्ञ था कि उसे इतना भी मालूम न था कि पतिके ओष्ठ पत्नीकी छातियोंका चुम्बन करके पत्नीको ढीला कर देते हैं, और पूर्ण संयोगके लिये स्त्रीको शारीरिक रूपसे तैयार करनेके लिये पतिके पास सबसे पहली

और अचूक विधि यही है*। इस रीतिसे उसने उसकी स्वाभाविक कामनाका निवारण कर दिया है। पहले वह उस कामनाको उद्दीप्त करनेके लिये कभी कोई चेष्टा नहीं करता था, इसलिये उनके संयोगमें स्त्रीको कभी कोई शारीरिक सुख प्राप्त नहीं होता था। ऐसे कृत्रिम लज्जाशील या असावधान पति, जो अपनी ही तृप्तिसे सन्तुष्ट रहते हैं, उस संरुद्ध व्यथा, वरन् क्रोधको बहुत कम जानते हैं जो पत्नीके हृदयको कीड़ेके सदृश भीतर ही भीतर खाता रहता और अन्ततः उसके सारे स्वास्थ्यकी जड़को खोखला कर डालता है। बहुधा पुरुष उन सामाजिक पुरानी रूढ़ियोंका भी शिकार हो जाता है जो काम-शास्त्रको ज्ञानका निषेध करती हैं।

हमारे सामाजिक जीवनकी यह एक परम्परा हो गई है कि स्त्रीका अपने शरीर तथा अपने भावी पतिके शरीरके विषयमें कुछ न जानना एक कुसुम सदृश पवित्रता समझी जाती है। यह भोलापन कभी कभी तो यहाँतक बढ़ा दिया जाता है कि जब विवाह हो जाता है तो कई लड़कियोंको इतना भी ज्ञान नहीं होता कि पतिके साथ उनके शारीरिक सम्बन्ध उन सम्बन्धोंसे मूलतः भिन्न होंगे जो उनके अपने भाइयोंके साथ हैं। जब ऐसी लड़कीको पतिके शरीरका वास्तविक स्वरूप मालूम होता है और

---

* काम-शास्त्रके ग्रन्थोंमें लिखा है कि पुरुषद्वारा कुच-मर्दनके समान कुच-चुम्बनसे भी स्त्रीमें कामका उद्दीपन हो जाता है। इस सभ्य भारतमें यह प्रथा नहीं। कदाचित् इंग्लैंडमें हो —'अनुवादक'

उसे मालूम होता है कि पत्नी रूपसे मुझे क्या काम करना है, तो वह अपने पतिकी इच्छाको पूर्ण करनेसे सर्वथा इनकार कर देती है। मैं एक दम्पतीको जानती हूँ। उसमें पति बड़ा उदार और स्नेहशील था परन्तु पत्नीको जब पहली बार विवाहके अर्थका ज्ञान हुआ तो उसे एक भारी क्षोभ हुआ, और उस क्षोभको दूर होनेमें कई वर्ष लग गए। तब कहीं उसने पतिको स्वाभाविक सम्बन्धकी आज्ञा दी। इतनी देर उसे ठहरे रहना पड़ा। ऐसी दुलहिनोंकी संख्या भी कम नहीं जिन्होंने किसी कम विवेकवान् पुरुषके साथ विवाहकी प्रथम रात्रिके त्राससे आत्म-हत्या कर ली है या जो पागल हो गई हैं।

विवाहके तत्वोंका कुछ भी ज्ञान प्राप्त किये बिना लड़कियाँ विवाहके योग्य आयुको पहुँच सकती हैं, यह बात अविश्वास्य प्रतीत होती यदि कोई ऐसा सच्चा उदाहरण मौजूद न होता। एक उच्च शिक्षाप्राप्त महिलासे मेरी बहुत घनिष्ट मित्रता है। उसने मुझे बताया कि जब वह कोई अठारह वर्षकी थी तो उसे कई मासतक इस शंकासे भारी दुःख होता रहा कि नाचमें एक पुरुषने अचानक उसके अधरोंका चुम्बन कर लिया था इसलिये उसके शीघ्र ही बच्चा होनेवाला है। एक दूसरी लड़कीने मुझे बताया कि उसे भी इस प्रकार न केवल मानसिक कष्ट हुआ, वरन् एक बार चुम्बनके परिणामस्वरूप भयका उसपर ऐसा बुरा प्रभाव पड़ा है कि कई मासतक वह रजस्वला ही नहीं हुई।

जब इस ढङ्गसे पली हुई लड़कियाँ ब्याही जाती हैं तो पतिका एकदम 'समागम' करनेपर हठ करना बलात्कार करना है। ऐसी दुलहिनके लिये बादको भी कभी समागमके सुखका अनुभव करना कठिन अथवा असम्भव होगा। क्योंकि ऐसा उपक्रम उसके अन्तःकरणपर यह विचार अंकित कर देगा कि पुरुषमें पशु-प्रकृतिका ही प्राधान्य है।

मैने एक पत्रिकामें एक कविता देखी है जो इस विशेष रूपसे स्त्री-सुलभ शोकको स्पष्टतया प्रकट करती है—

कुचर कुचर पानी निकालना आत्म विवेक।
स्वार्थ-सिद्धि है लक्ष्य जहाँ यह केवल एक।
वे लम्पट नर नकली पति हैं बने हमारे।
सब सुहागको लूट हृदय सूना कर मारें।
जीवनकी उद्दीप्त उमङ्गोंको झुलसाकर।
निराधार जीवन-कुचक्रमें पटकें लाकर।
फैला फैशन-जाल, हरें उत्साह, प्रगति हैं।
यह भार्याके भाव यही क्या सच्चे पति हैं?
नई जवानी नई उमङ्गोंके ये वत्सर।
मुँह बाए खाने आते हैं हमको हँसकर।
हम नाटक कर रहीं स्वामीकी बगलगीर हो।
शान्ति-प्राप्तिका मार्ग चाहतीं यों अधीर हो।
नाहिं विकासका द्वार कहीं भी खुला हुआ है।

पूर्ण नाशके हेतु गुप्त-दल तुला हुआ है।
हम इनकी विनोद-सामग्री हैं औ दासी।
आस्तीनके साँप हमें देते क्षति खासी।

—कथेराइन नेल्सन तथा पं० उदयशंकर भट्ट

शुद्धमति और मृदुभावसे विवाह करनेवाले अनेक पुरुष ऐसे भी होते हैं जिन्हे पहलेसे क्रीत 'प्रेम' का कुछ अनुभव हो। उनके लिये वेश्याकी प्रतिक्रियाओंको आदर्श मानकर स्वभार्य्या-सम्बन्धी अनुभवोंको अच्छा या बुरा कहनेकी भूल करनेकी बड़ी सम्भावना है। वे तर्क करते हैं कि वेश्या संयोगके समय शारीरिक उत्तेजना तथा सुख प्रकट करती थी इसलिए यदि पत्नी या दुलहिन वैसा नहीं करती तो वह 'ठण्डी' या 'स्वाभाविकसे कम मैथुन-शक्ति रखनेवाली' है। वे नहीं जानते कि वेश्या जितनी शारीरिक चेष्टाएँ करती हैं वे बहुधा नकली और दिखलावे की होती हैं, क्योंकि उसके ग्राहकको अधिक आनन्द तब ही प्राप्त होता है जब उसके द्वारा आलिङ्गित हुई स्त्री उसके साथ एक ही कालमें पुलकित हो।

फ़ोरल (दि सैक्सुअल क्वेश्चन; अंग्रेजी अनुवाद १९०८) कहता है:—"वेश्याओंके सङ्गसे पुरुष बहुधा स्त्रियोंके मनोभावोंको समझनेके अयोग्य हो जाते हैं; क्योंकि वेश्याएँ अपने आप चलने वाली ऐसी मैशीनें हैं जो पुरुषकी विषयासक्तिके उपयोगके लिए सधाई गई हैं। जब पुरुष इनमें स्त्रियोंके रति-सम्बन्धी मनोभाव ढूँढ़ते हैं तो उनको केवल अपना ही दर्पण मिलता है।"

फिर भी वेश्याके कृत्रिम हर्षावेशमें बड़ी लुभावनी शक्ति है, क्योंकि वह किसी वास्तविक बातकी नकल करती है। वह बात ऐसी है जो प्रत्येक पत्नीमें, जब जब भी वह पतिसे समागम करे, अवश्य होनी चाहिये*। यह विद्युत्-शक्ति प्रत्येक स्त्रीमें बन्द सी रहती है। पतिको चाहिये कि आदर-पूर्वक उस चावी†की खोज करे जो इस शक्तिको खोल सकती है। और यह चावी सब स्त्रियोंमें एक ही स्थानपर नहीं होती।

बहुधा भाग्य भी पुरुषोंके साथ निर्दयता करता है। जितना लोग समझते हैं उससे कहीं अधिक संख्यामें उदात्त विचारके युवक विवाहसे पूर्व पवित्र रहनेका यत्न करते और रहते हैं। अब यदि पुरुष किसी ऐसी स्त्रीसे विवाह करता है जो पहले ही मलिन है और जिसमें प्रेमके प्रति आदरका भाव नहीं रहा, या इसके विपरीत, जो इतनी "पवित्र" है और बनावटी लज्जाशील

---

* पद्म पुराणमें पतिव्रता स्त्रीके गुण बतलाते हुए लिखा है कि जो भोजन खिलानेमें माताके समान, सलाह देनेमें मन्त्रीके समान और रतिमें वेश्याके समान है, वही पतिव्रता है। —देखो मेरी बनाई "आदर्शपत्नी" पृष्ठ ५२।

† कामशास्त्रके प्राचीन आचार्य्योंका मत है कि नारी-शरीरमें मदनदोला, मन्मथच्छत्र, तथा पुत्री आदि अनेक ऐसी मद-नाड़ियाँ हैं जिनको क्षुब्ध करनेसे स्त्रीमें बिजुलीसी दौड़ जाती है और उसे हर्षावेश हो जाता है। देखो मेरा बनाया 'रति विज्ञान' (साहित्य-सदन, लाहौर द्वारा प्रकाशित) —अनुवादक।

है कि वह उसे समागम नहीं करने देती, तो पुरुषकी वह उच्च साधना व्यर्थ हो जाती है और उसे दुःख होता है। इसके विपरीत यह भी हो सकता है कि युवक अपनी तीव्र विषय-वासनाको वशमें रखनेके लिये कई वर्षतक भारी यत्न करता रहे और फिर उसे छोड़कर विश्रामके लिये कभी कभी वेश्याके यहाँ चला जाय, और फिर बादके जीवनमें उसे एक ऐसी स्त्री मिल जाय जिसके साथ वह अपने पिछले मलिन कर्मोंके लिये अनुताप करने और उनके लिये उसकी क्षमाप्राप्तिके बाद विवाह कर ले। तब वह ज्ञानपूर्वक अपनी भार्याको, दूसरी स्त्रियोंके मुकाबलेमें, घटिया बताकर या कदाचित् (यद्यपि ऐसा होता बहुत कम है) उसको उनसे एक बिलकुल अलग चीज़ समझकर, दुःखित कर सकता है। मैं एक ऐसे पुरुषको जानती हूँ जिसे, सदाचारके जीवनके पश्चात् एक ऐसी पत्नी मिली जिसकी वह पूजा और आदर करता था। वह उसकी 'पवित्रता'की—दूसरी स्त्रियोंसे उसके भेद की—रक्षा करनेके विचारसे उसके साथ कभी समागम नहीं करता था। स्त्रीको बड़ा आश्चर्य था, और वह बहुत दुःखी थी, क्योंकि वह उसे बहुत प्रेम करती थी और सन्तानके लिये लालायित रहती थी। जब वह दुबली होकर कुढ़ने लगी, तो वह समझने लगा कि इसके शरीरके घुलनेका कारण इसकी 'अस्थिर बुद्धि और चपलता' है।

कदाचित् यह पुरुष अपने चरितको अधिक शुद्ध रूपमें देख लेता यदि उसे ज्ञात होता कि कई जन्तु ऐसे हैं जो अपने जोड़ी-

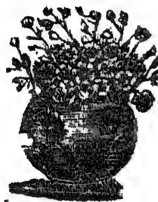
दारसे समागम न होनेके कारण ही मर जाते हैं। (देखो परिशिष्ट, टिप्पणी १)

पुरुषके साथ समागम करनेसे स्त्री गिर जाती है, यह भाव हमारे वर्तमान समाजमें बहुत गहरी जड़ पकड़ चुका है। इस भ्रान्तिके अनेक कारण बताए जाते हैं। उनमेंसे एक तो यति रहनेके आदर्शकी बहुत प्रशंसाका होना है; और दूसरे यह बात है कि पुरुष स्त्रीका, उसकी इच्छाओंकी कुछ भी परवाह न करके, एक साधनके रूपमें प्रयोग करता रहा है। इसलिये स्त्रीकी शिक्षा और सामाजिक भावका झुकाव अधिकतर अपनेको इससे स्वतन्त्र करनेकी दिशामें रहा है। इसीसे इस भावको उत्साह मिलता है कि स्त्रीपुरुषधर्म-सम्बन्धी जीवन एक नीच, भौतिक और गिरानेवाली आवश्यकता है, जिसका उपभोग एक पवित्र स्त्रीकी शानको घटानेवाला है।

विवाह-कालमें पतिने समागमके 'पति विषयक अधिकार'का स्वेच्छानुसार उपयोग किया है। राजनियम और लोकाचारने भी इस मतकी पुष्टि की है कि उसे इस बातका अधिकार है कि वह जब भी चाहे अपनी पत्नीके पास जा सकता है। इस विषयमें स्त्रीकी अपनी इच्छा और मौलिक प्रयोजन बिलकुल कुछ नहीं।

इसमें किसीको भी कोई शङ्का नहीं हो सकती कि स्त्रीमें, सागरके ज्वार-भाटेके सदृश, कामका उतार-चढ़ाव होता रहता है। और यदि इसके लक्षणोंको पहचानकर काम किया जाय तो

इससे स्त्रीको न केवल आनन्दकी प्राप्ति होती है, वरन् उसके अस्थिर-बुद्धि होनेकी कल्पित कथा भी नहीं ठहर सकती। हमने जल, शब्द, और प्रकाशकी तरङ्गोंकी लम्बाईका अध्ययन किया है, परन्तु मनुष्योंके पुत्र और पुत्रियाँ स्त्रीमें मदनकी लहरका कब अध्ययन करेंगी? और उन नियमोंको कब जानेंगी जिनके अनुसार स्त्रीमें कामेच्छा विशेष अवधियोंपर उत्पन्न होती है?



चौथा अध्याय

मौलिक स्पन्दन

स्त्रियोंके विषयमें पुरुषोंके निर्णय शायद ही शान्ति-पूर्वक किये हुए वैज्ञानिक पर्यवेक्षण हों, वरन् वे उनके अपने मैथुन-सम्बन्धी विकारों और कामके आवेगके प्रति उनके अपने नैतिक भावमें रञ्जित होते हैं।.........
स्त्रीके काम-सम्बन्धी आवेगोंके विषयमें (पुरुषोंके) कथन उतना स्त्रियोंके विषयमें नहीं बताते जितना कि स्वयं उन पुरुषोंके विषयमें बताते हैं।—
हेवैलाक एलिस।

अधिकांश 'नफ़ीस' मनुष्य यह समझते हैं कि स्त्रीमें स्वतः सिद्ध कामके आवेग नहीं होते। इससे मेरा तात्पर्य भावके वशीभूत होकर किसीपर आसक्त हो जानेसे नहीं, वरन् कामोद्दीपनकी एक ऐसी शारीरिक, एक ऐसी शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी दशासे है जो किसी पुरुष-विशेषके विचारको बिलकुल छोड़कर अपने आप उत्पन्न होती है। वास्तवमें यह एक *उत्पादनक्षम* आवेग है, और बहुत उच्च जीवनी-शक्तिको प्रकट करता है। केवल भ्रष्ट स्त्रियोंमेंही (विशेषतः विवाहके पूर्व) ऐसे भाव होते हैं—यह मत इङ्गलैंडमें इतना अधिक फैल रहा है कि बहुतसी स्त्रियाँ ऐसी हैं जो *मरना* स्वीकार करेंगी परन्तु यह स्वीकार नहीं करेंगी कि हमें कभी कभी एक अवर्णनीय, किन्तु भूख और प्यासके समान

तीव्र, शारीरिक लालसाका अनुभव होता है। फिर भी सरल और स्वाभाविक रीतिसे यह बात मान कर कि स्वाभाविक स्त्रियाँ होनेके कारण उनको अवश्य इस आवेशका अनुभव होता है और साथ ही उनसे केवल इतना पूछनेपर कि—*कब* ? अनेक स्त्रियोंने अपनी प्रकृतियोंकी सचाई मुझपर प्रकट कर दी है। उनके उत्तर-से मैंने ऐसे तथ्योंका संग्रह किया है जो स्त्रियोंके सम्बन्धमें अनेक बने बनाए सिद्धान्तोंको पलटनेके लिये पर्याप्त हैं।

अनेक हास्यास्पद असंगतियोंका, जिनको विज्ञानका नाम मिल गया है Centralblatt fiir Gynakologie में विंडस्चीड (Windschied) के कथनसे निदर्शन हो सकता है। "स्वाभाविक स्त्रीमें, विशेषतः उच्चतर सामाजिक श्रेणीकी स्त्रीमें, काम-बुद्धि प्रकृति-सिद्ध नहीं होती वरन् प्राप्त की जाती है। जहाँ यह प्रकृति-सिद्ध हो, या स्वतः जागृत हो जाती हो, वहाँ *नियमातिरेक* समझना चाहिये। क्योंकि स्त्रियोंमें विवाहसे पहले यह बुद्धि नहीं होती, इसलिये जब उनके पास इसे सीखनेके लिये जीवनमें कोई अवसर नहीं, तो वे इसे खोती नहीं।" (एलिसका अनुवाद)

इस मतका खण्डन ईलनकी अवतारित हीरा नामक कहानी-में मिलता है। देवी हीराने आइरिसको पृथ्वीपर तीन ऐसी पवित्र और पूर्ण रूपसे ब्रह्मचारिणी कुमारियोंको ढूँढनेके लिये भेजा जिनको कभी प्रणयका स्वप्नतक भी न हुआ हो। आइरिसने उन्हें ढूँढ़ तो लिया परन्तु वह उन्हें देवलोक ओलिम्पसमें न ले सका, क्योंकि उनको पहले ही बूढ़ी होकर पेंशन पा जानेवाली

संकोपकी चण्डी देवियोंके रिक्त स्थानोंको भरनेके लिए नरकमें बुलाया जा चुका था।

तो भी यह सत्य है कि लड़कियोंकी सारी शिक्षाने, जिसमें जीवनके आवश्यक तत्त्वोंको उनसे अधिकतः छिपाकर रखा जाता है; और इस बातके बल-पूर्वक उपदेशने कि स्त्रीपुरुषधर्म-सम्बन्धी सहज-बुद्धि नीच और लज्जाजनक है; साथ ही उस सामाजिक अवस्थाने जो अनेक स्त्रियोंको, न केवल अपनी विलास-सामग्रीके लिये वरन् जीवनके लिये आवश्यक रोटी-कपड़ेके लिये भी, अपने पतियोंके आश्रित बनाए हुए है, स्त्रियोंमें कामके स्वाभाविक आवेगको दबाने, और जो कुछ शेष है उसको छिपाने तथा मरोड़नेका काम किया है।

यह भी सत्य है कि हमारे उत्तरीय प्रदेशोंमें स्त्रियाँ सर्वतोभावेन दाक्षिणात्योंकी अपेक्षा स्वभावतः कम अविचलित रूपसे उत्तेजित होती हैं; इसके अतिरिक्त यह भी सत्य है कि हमारे सदा लम्बे होनेवाले यौवनके कारण, पक्वताको देरसे प्राप्त होनेके साथ, प्रायः ऐसा होता है कि स्त्रीको तीस वरन् इससे भी अधिक वर्षकी आयुको प्राप्त करनेके पहले कामके अस्तित्वका अनुभव ही नहीं होता। किन्तु उसके पूर्व कई वर्षसे वह प्रभाव जिसका उसे अनुभव तो नहीं होता परन्तु जो उसके सारे शरीरमें फैला रहता है, उसे गम्भीरता-पूर्वक प्रभावित किया करता है। यह भी सत्य है कि (कुछ तो हमारी रीतियों, परम्पराओं, और सामाजिक पद्धतिके रोकनेवाले प्रभावोंके कारण) इसके जाग्रत होनेके पूव

ही, हो सकता है कि, स्त्रियाँ विवाह कर लें और विवाहके बाद देरतक उन्हें इस बातका ज्ञान ही न हो कि वह उनके भीतर अभिभूत होकर लहरें मार रहा है। असंख्य स्त्रियाँ ऐसी हैं जिसमें उनके साथ समागम करते रहनेके नियमित पति-स्वभावोंने, क्या उस समय जब कि स्त्री नैसर्गिक रूपसे सम्भोगका आनन्द ले सकती है, और क्या उस समय जब कि उसे मैथुनसे किसी कदर विराग होता है, उनकी नैसर्गिक काम-रुचिकी लहराती हुई वक्र रेखाओंको खुला कर दिया है। अब उनमें वह स्वाभाविक मदन-तरङ्ग उस प्रबल रूपसे नहीं उठती। पुरुषके प्रयोजनके लिए स्त्रीका एक निश्चेष्ट साधनके रूपमें प्रयोग करनेका वास्तवमें एक परिणाम यह हुआ है कि वह सचमुच वैसी बन गई है। वे पुरुष—और वे अनेक हैं—जो उत्तम भार्यामें उत्सुकताके अभावकी शिकायत किया करते हैं, बहुधा उस अभावका कारण आप ही होते हैं। जब स्त्रीके साथ ऐसे समयोंमें समागम किया जाय जब कि उसे संयोगमें कोई *नैसर्गिक* आनन्द नहीं प्राप्त होता, या ऐसे ढंगसे उसके साथ संसर्ग किया जाय कि उसमें उस अद्भुत सुखके लिये प्रलोभन ही पैदा न हो, तो सम्भोग-क्रियासे उसकी जीवनी शक्ति घट जाती है। और प्रणय-कालके आनेपर भी सम्भोग-सुखका अनुभव करनेकी उसकी शक्ति मर जाती है।

आधुनिक अवस्थाओंकी रुकावटोंसे स्त्रियाँ जैसी बन गई हैं उनके विषयमें निस्सन्देह यह बात सत्य है कि उनमेंसे अधिकांशको विवाहके पश्चात् ही मदनके अस्तित्वका पूर्ण रूपसे अनु-

भव होता है। क्योंकि हम मानवी जीव हैं; इसलिये रतिकी चाहके सामाजिक, बौद्धिक, और आध्यात्मिक पक्षने स्त्रियोंके काम-सम्बन्धी जीवनके आधार-भूत शरीर-विज्ञान विषयक रूपको ढक दिया है। ऐसी स्त्रीका मिलना सुगम नहीं जिसमें लहरें आपसमें ऐसी उलझी हुई नहीं कि समष्टि घटकोंमें वियुक्त न हो सके। परन्तु मैंने देखा है कि वे पत्नियाँ (विशेषतः सुखी पत्नियाँ जिनके भाव किसी पर-पुरुषके साथ प्रेमके कारण जटिल नहीं बन गये) जो व्यापार या नौकरीके कारण अपने पतियोंसे कई मासोंतक अलग रही हैं—उदाहरणार्थ, जिनके पति विदेशमें गये हुए हैं—ऐसी स्त्रियाँ हैं जिनसे उनमें विशेष अवधिपर मदन-तरङ्गके उठते रहनेकी अतीव असंदिग्ध साक्षी प्राप्त की जा सकती है। ऐसी स्त्रियाँ जो अपने पतियोंके कोमल साहचर्य और निकटताके लिये प्रतिदिन झूरती रहती हैं, इसके अतिरिक्त, विशेष समयोंपर अपनेमें अन्तिम काम-क्रीड़ाके सुबद्ध शारीरिक संयोग···मैथुन—की लालसा देखती हैं। ऐसी अनेक विरहिणी पत्नियाँ इस लालसाका अनुभव करती हैं; और जिनको मैंने उन तिथियोंको लिख लेनेको कह रखा था उन्होंने, एकमत होकर, मुझे बताया है कि ये मौक़े विशेषतः रजःस्रावके बिलकुल पहले और उसके बन्द होनेके कोई सप्ताहके क़रीब बाद आए। अर्थात् वे लगभग प्रत्येक पक्षमें आते हैं। ऐसी ही स्त्रियोंसे मुझे पहले स्त्रियोंमें काम-वासनाके विशेष अवधिके बाद बार बार लौटनेके नियमका सूत्र मालूम हुआ था। कुछ वर्षोंतक मैं इस अतीव जटिल समस्या-

का यथासम्भव वैज्ञानिक और सविस्तर अध्ययन करती रही हू। अनेक स्त्रियोंके सरल और वैज्ञानिक भाववाली होने, तथा कई एकके मुझपर गहरा विश्वास रखनेसे, मैंने अनेक अतीव मनोरञ्जक तथ्य प्राप्त किए हैं, जिनसे, मैं समझती हू, अभी एक व्यापक नियम निकालना सम्भव है। यह नियम बड़ा ज्ञानवर्द्धक और चिकित्सा तथा समाज-शास्त्रकी दृष्टिसे बहुमूल्य होगा। जबसे यह पुस्तक पहली बार छपी है मेरे पास बहुतसे प्रमाण और आ गए हैं। ये पहले परिणामका खूब समर्थन करते हैं। इसलिये मैं सामान्य नीरोग प्रकारकी स्त्रीके विषयमें अपने व्यापक आवेदनका संशोधन करनेके लिये कोई कारण नहीं देखती। इस विषयके मेरे स्वीकृत तत्त्वोंपर अधिक सविस्तर तथा वैज्ञानिक विचार अन्यत्र प्रकाशित किया जावेगा।

स्त्रियोंकी काम-वासनाकी विशेष अवधिके बाद प्रत्यावर्तनके मेरे सिद्धान्तको एक वक्र-रेखा (curve)के रूपमें चित्रके तौरपर प्रकट किया जा सकता है। सभी तरङ्ग-रेखाओंके सदृश इसमें भी ऊँचे और नीचे स्थानोंका एक सिलसिला है। इसको प्रकट करना यद्यपि बड़ा सरल और अतीव मौलिक है, परन्तु दूसरे उत्तेजनोंके कारण जो इसमें भिन्न प्रकारकी तरङ्ग-मालाए या अनियमित तरङ्ग-शृङ्ग (wave-crest) ला सकते हैं, यह प्रायः बहुत ही जटिल काम हो गया है। हम सबने समुद्रकी छोटी छोटी नियमित लहरोंको उसके रेतीले किनारेके साथ लग कर टूटते देखा है, और यह भी देखा है कि जलके एक दूसरे

प्रवाहके घुस आनेसे पहली तरङ्ग-मालाके समकोण एक दूसरी तरङ्ग-माला उत्पन्न हो जाती है, और उसको आर-पार कर देती हैं। इस प्रकार दो वीचि-मालाएँ एक दूसरीमेंसे होकर बहने लगती हैं।

स्त्री एक ऐसा शीघ्र ग्राहक (sensitive) और संवादी यन्त्र है, और हमारे आधुनिक सभ्य संसारमें वह असंख्य प्रकारके उत्तेजनोंसे प्रभावित होनेके इतना योग्य है कि यह देखकर कदाचित् कुछ भी आश्चर्य नहीं होगा कि उसके प्राथमिक मदन-प्रवाहोंकी गम्भीर तथा तटस्थ लहरें इतनी अस्पष्ट और आपसमें इतनी उलझ गई हैं कि उनका नियमित अनुक्रम उसके सागरकी छोटी छोटी लहरोंवाले संक्षोभमें ढक गया है, और उन लहरोंके अस्तित्वका अधिकतः किसीको सन्देहतक नहीं होता। और न प्रकट रूपसे उनका अध्ययन ही किया जाता है।

इसका वर्तमान अध्यायके विषयके साथ बहुत घनिष्ट सम्बन्ध होनेके कारण मैं यहाँ स्त्रीमें काम-तरङ्गोंके विशेष अवधियोंपर उठनेके सम्बन्धमें अपने अनुमानोंका एक छोटा और सरल वृत्तान्त देना आवश्यक समझती हूँ।

परन्तु पहले स्त्रीके जीवनके अनेक दूसरे रूपोंपर विचार करना ज़रूरी है।

प्रत्येक चान्द्र मासमें स्त्रीमें जो रजःस्राव होता है वह इतना प्रत्यक्ष है कि उसे दृष्टिसे ओझल नहीं किया जा सकता। इसलिये उसका नारी-जीवनके साधारण व्यापारोंके साथ जो सम्बन्ध

है उसकी दृष्टिसे अंशतः अध्ययन किया गया है। ऐसे परीक्षण किए गए हैं जिनसे प्रकट होता है कि रजःस्रावका श्वास प्रश्वास-के वेग, पट्ठोंकी शक्ति, ताप, दृष्टिकी तीक्ष्णता इत्यादि पर प्रभाव पड़ता है। इन परिणामोंको इकट्ठा करके एक अकेली वक्र-आकृति (curve) में चित्रित किया गया है। और यह मान लिया गया है कि यह वक्र-आकृति स्त्रीके अट्ठाइस दिनके—एक चान्द्र मास-के—कालचक्रमें, भिन्न भिन्न समयपर, उसकी धारणाशक्तिकी परिवर्तनीयताको दिखलाती है।

परन्तु इससे पता लगता है कि इस क्षेत्रमें भी अबतक कितना कम मौलिक कार्य हुआ है। ठीक वही आकृति एक पुस्तकसे लेकर दूसरीमें नकल कर दी गई है। मार्शलकृत 'फिज़ियालोजी' में यह 'सलहीम' से और हेवेलाक एलिसमें 'वॉन ओट' से ली गई है। और दूसरी पुस्तकमें यह किन्हीं दूसरी जगहोंसे लेकर नकल की गई है। परन्तु है यह वही पुरानी आकृति।

इस आकृतिको एक विद्वान्‌से लेकर दूसरे विद्वान्‌ने नकल किया है, परन्तु जिन बातोंपर इस वक्र-रेखाका आधार है उनमें-से प्रत्येक विवादास्पद जान पड़ती है।

इस वक्ररेखाके अनुसार, स्त्रीकी जीवनी-शक्ति मासिक धर्मके कुछ दिन पहले ऊपर उठती, रजःस्रावके दिनोंमें जितना अधिक उतर सकती है उतनी नीचे चली जाती, और उसके थोड़ी देर बाद उठती, और तब प्रायः समतलपर बहती रहती है,—यहाँ-तक कि अगले मासिक धर्मके पहले फिर उठना शुरू करती है।

इस सादी वक्ररेखाका स्त्रीके ताप, पट्ठोंकी शक्ति, और दूसरी उन अपेक्षाकृत सरल बातोंके विषयमें, जिनका अनुसन्धान किया गया है, ठीक होना या न होना दोनों सम्भव हैं। स्त्रियोंकी एक बड़ी संख्यापर मेरा पर्यवेक्षण यह दिखलाता है कि यह वक्ररेखा स्त्रीकी काम-शक्तिकी लहरोंको *नहीं* प्रकट करती।

यह सारा विषय इतना जटिल है और इसका इतना थोड़ा अध्ययन किया गया है कि अनेक ऐसी छोटी छोटी बातोंका वर्णन किये बिना, जो एक सामान्य पाठकको शायद अस्पष्ट और नीरस प्रतीत हों, इसमें प्रवेश करना कठिन है। यहाँतक कि इस प्रश्नका जो हम सबके हृदयमें स्वाभाविक तौरसे उठता है और जिसपर सम्भवतः सबने विचार भी किया होगा, अर्थात् रजः-स्राव है क्या वस्तु ? अभीतक उत्तर नहीं दिया जा सकता। एक सामान्य मनुष्यको ऐसा प्रतीत होगा कि कोई भी डाक्टर इसका चटपट उत्तर दे सकता है, परन्तु अनेकों डाक्टर इसका थोड़ा बहुत ठीक उत्तर देनेमें समर्थ होनेसे भी अभी कोसों दूर हैं। (देखो परिशिष्ट, टिप्पणी २)

हममें बहुतसे छोटे छोटे भेद हैं, जो तीनसे-पाँच-सप्ताह-तकके "महीने" तक जाते हैं, परन्तु हमारी जातिकी अधिकांश स्त्रियोंमें अट्ठाइस दिनका चान्द्रमास होता है, जिसमें उन्हें एक बार रजःस्राव होता है। यदि हम एक नकशा बनाएँ जिसमें प्रत्येक कालचक्रको एक संख्या मानकर अट्ठाइस अट्ठाइस दिनोंके उत्तरोत्तर कालचक्र हों, तो प्रश्न होता है कि इस कालचक्रमें

एक स्वाभाविक, स्वस्थ स्त्री कामेच्छा या अपने मदन-प्रवाहके उमड़नेका कब अनुभव करती है ?

सामान्य चिकित्सा-शास्त्र तथा शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी साहित्यमें स्त्रियोंमें मदन-तरङ्गके उठनेके विषयमें जो कतिपय बातें लिखी गई हैं वे प्रायः बहुत ही संदिग्ध और अनिश्चित हैं। उदाहरणार्थ, मार्शल ("फ़िज़ियालौजी आव रीप्रोडक्शन")पृ० १३८, कहता है—"सबसे अधिक तीव्र काम-वासनाका समय रजःस्राव बन्द होनेके ठीक बाद होता है।" एलिस कहता है कि काम-वासना रजःस्रावके पहले और कभी कभी बाद भी प्रबलतर होती है। वह इस मतकी ओर झुका हुआ प्रतीत होता है कि काम-वासनाका रजःस्रावके अनुरूप होना स्वाभाविक है।

बड़ी सावधानता-पूर्वक अन्वेषण करनेके बाद मैं इस सिद्धान्तपर पहुँची हूँ कि इस विषयके सम्बन्धमें इस सामान्य गड़बड़का कारण कुछ तो भिन्न भिन्न व्यक्तियोंमें पाया जानेवाला बड़ा भारी भेद है, और कुछ यह बात है कि बहुत थोड़ी स्त्रियोंको जीवनमें वैज्ञानिक रुचि लेनेका कुछ विचार है। इसके अतिरिक्त कुछ कारण यह भी है कि काम-वासनाकी वह गम्भीरतर और मौलिक लहर जिसके विषयमें मैं इस सिद्धान्तपर पहुँची हूँ कि वह प्रत्येक स्वाभाविक स्त्रीमें विद्यमान अथवा सम्भाव्य (सोई हुई potential) है, और आधुनिक जीवनके नाना प्रकारके उत्तेजनों या निषेधोंके कारण उत्पन्न होनेवाले अधिक उथले तथा अस्थायी प्रभावोंसे आच्छादित या रूपान्तरित है। वर्तमान विमर्शके लिये

मैंने गम्भीर तथा प्राकृतिक लहरको अधिक अनियमित सतही लहरों—पृष्ठस्थ तरङ्गों—से अलग करनेका प्रयत्न किया है।

जो कुछ पिछले कतिपय पृष्ठोंमें कहा गया है उसको चित्र रूपसे सुस्पष्ट करनेमें अलग पन्नेपर दिये हुए नकशेसे सहायता मिलनेकी सम्भावना है। यह अनेक व्यक्तिगत वृत्तान्तोंको मिलाकर तैयार किया गया है और स्त्रीमें कामेच्छाकी प्रचुरता तथा न्यूनताके तालमय अनुक्रमका एक औसत दर्जेका नकशा है। इस वक्र-रेखामें (Curve) तरङ्ग-शृङ्गों (Wave-crests) की चोटियाँ एक असामान्य नियमसे आती हैं, जिससे अट्ठाइस दिनके प्रत्येक मासमें दो तरङ्ग-शृङ्ग हैं। उनमेंसे एक तो रजःस्रावसे ठीक दो तीन पहले है और दूसरा बाद। परन्तु रजःस्राव बन्द हो जानेके बाद प्रायः समतल अन्तर है, जो अगले तरङ्ग-शृङ्गको उन दो या तीन दिनोंमें ले आता है जो रजःस्रावके बन्द होनेके कोई आठ या नौ दिन बाद आते हैं—अर्थात् पिछले तरङ्ग-शृङ्गसे लेकर चौदह दिनों या करीब करीब आधे चान्द्रमासतक। यदि इसको बहुत ही सादा ढङ्गसे कहा जाय तो कह सकते हैं कि काम-वासनाकी अवधियाँ पाक्षिक हैं। इनका क्रम इस प्रकार है कि एक अवधि प्रत्येक रजःस्रावके सदा ठीक पहले आती है। उस समय स्त्रीकी जीवनी-शक्ति और उसके सामान्य स्वास्थ्यपर काम-वासनाकी प्रत्येक अवधिकी लम्बाई, या दूसरे शब्दोंमें, प्रत्येक तरङ्ग-शृङ्गका आकार तथा जटिलता निर्भर होती है। हो सकता है कि किसी समय तो वह पूरे तीन दिन, वरन् उससे भी

अधिक कालतक, उत्सुकतापूर्वक और स्वाभाविक रूपसे उत्ते-जित रहे, और दूसरे समयमें उसी स्त्रीको, यदि वह थकी हुई और अधिक कामसे चकनाचूर हो रही है, काम-वासनाका ज्ञान केवल: कुछ ही घंटों, या उससे भी कम कालके लिये हो।

थकान, नागरिक जीवन, बुरा भोजन, और वास्तवमें, अत्य-धिक बाह्य अवस्थाओंके प्रभाव बहुत ही साफ़ दिखाई देनेवाले हो सकते हैं। वे कई वर्षों तक या उसके जीवन पर्यन्त उसकी जीवनी-शक्तिको इतना कम कर सकते हैं कि स्त्रीको काम-वासनाके स्वयंसिद्ध आवेगका बिलकुल कभी अनुभव ही न हो। थकान एक स्वाभाविक और प्रबल काम-शक्ति-सम्पन्न स्त्रीकी भी जीवनी-शक्तिको घटा देती है। इसके कार्य दूसरे नकशेमें देखे जा सकते हैं, जहाँ क पर मध्यवर्ती तरङ्ग-शृङ्ग बहुत अधिक घटा हुआ है। यह कोई सामान्य नकशा नहीं, वरन् एक वास्तविक व्यक्तिगत अवस्थाका सविस्तर वृत्तान्त है।

सम्मुख दिखलाई हुई वक्र-रेखाएँ (Curves) व्यापक शब्दोंमें उस चीज़का एक सादा बनाया हुआ दृश्य है जिसके विषयमें मेरे अन्वेषण यह विश्वास कराते हैं कि वह हमारी जाति-की स्त्रियोंमें स्वाभाविक, स्वयंसिद्ध मदन-प्रवाह है। एक विवाहिता युवतीने मुझे एकान्तमें बताया कि पतिके साथ शारीरिक संयोगके लिये मेरी लालसा, जो उसके साथ दैनिक साहचर्यके लिये मेरी लालसासे सर्वथा भिन्न थी, "घड़ीके समान" स्वाभाविक ही, पतिकी दीर्घ अनुपस्थितिके कालमें, उठती हुई

प्रतीत होती थी। परन्तु प्रत्येक विषयमें मनुष्योंमें बड़ी भिन्नता है। जिस प्रकार दो व्यक्तियोंकी आकृतियाँ एकसी नहीं होतीं, उसी प्रकार किन्हीं भी दो व्यक्तियोंकी चक्र-रेखाएँ, यदि वे पर्याप्त रूपसे सविस्तर लिखी जायँ, कभी बिलकुल अभिन्न नहीं होतीं। अनेक ऐसी स्त्रियाँ हैं जिन्हें प्रत्येक चान्द्रमासमें केवल एक ही बार मदनके आवेगका विशेष रूपसे ज्ञान होता है। ऐसी स्त्रियों-मेंसे कुछ तो रजःस्रावके पूर्व आनेवाली, और कुछ उसके बाद आनेवाली अवधिका अनुभव करती हैं। जो प्रायः केवल एकका अनुभव करती हैं, उनको कभी कभी दूसरी अवधिका अनुभव उस समय होता है जब वे विशेष रूपसे स्वस्थ होती हैं, या केवल उस समय जब वे कामोद्दीपक उपन्यास पढ़ती हैं, या स्वामीके साथ ऐसे समयमें उनका मेल हो जाता है जो उनकी काम-वासनाके स्वाभाविक किन्तु दबाए हुए समयके अनुरूप होता है। बहुत ही थोड़ी स्त्रियाँ ऐसी हैं, और वे वस्तुतः थोड़ीसी अस्वा-भाविक प्रतीत होती हैं, जो यथार्थ रूपसे रजःस्रावके दिनोंमें अतीव काम-वासनाका अनुभव करती हैं।

यदि इस पुस्तकके पढ़नेवाले किसी पाठकके मनमें कुछ स्त्रियों-से प्रश्न करके मेरे मतकी परीक्षा करनेका विचार उत्पन्न हो तो उसे सम्भवतः बहुत ही विपरीत परिणाम प्रतीत होंगे। कारण यह कि एक तो स्त्रियाँ ऐसी बातके विषयमें बहुधा सत्य नहीं बतायँगी, और दूसरे अधिकांश स्त्रियोंमें पहली या दूसरी अवधि अधिक तीक्ष्ण होती है और उसीको वे अपनेमें अनुभव करती

हैं—यदि वे किसी चीज़का अनुभव करती हैं। परन्तु ऐसी स्त्रियोंके सूक्ष्म और अधिक यथार्थ अन्वेषणसे बहुधा काम-शक्तिके दूसरे शृङ्गका अस्तित्व प्रकाशमें आयगा। एक बार आधारभूत भावको समझ लेनेपर, पहले जो अस्पष्ट और निरर्थक जान पड़ता था उसका अधिकांश स्पष्ट और सारगर्भित जान पड़ेगा। मैंने एक डाक्टरनीके साथ अपने मतपर विचार किया। उसने चटपट कह दिया कि इससे मेरे अपने रोगियोंपर किये हुए ऐसे अनेक पर्यवेक्षण स्पष्ट हो गये हैं जिनको मैंने इकट्ठा नहीं किया था, या जिनकी व्याख्या नहीं की थी।

काम-शास्त्र-सम्बन्धी वैज्ञानिक पुस्तकोंमें ऐसे विवेचनके पाये जानेका केवल बहुत थोड़ा प्रमाण है परन्तु फ़ोरल ("सैक्षुएल क्वैश्चन", अङ्गरेज़ी अनुवाद, पृ० ६२)ने एक दूसरे सम्बन्धमें एक मनोरञ्जक उदाहरणका उल्लेख किया है। वह कहता है—"जब मैंने एक विवाहिता स्त्रीको व्यभिचारिणी होनेके कारण झाड़ डाली तो उसने मेरे सामने स्वीकार किया कि मुझे एक पक्षमें कमसे कम एक बार सुरतकी इच्छा होती है। और जब मेरा पति यहाँ नहीं होता तो जो भी पुरुष पहले मिल जाय मैं उससे काम निकाल लेती हूँ।" फ़ोरलने इसके पीछे काम करनेवाला कोई नियम नहीं देखा। हम सब ही कदाचित् उसके इस आत्म-संयमके अभावको एक दुःसह *नैतिक* नियमातिरिक्तता समझें, परन्तु अपनी काम-वासनाकी पाक्षिक अवधियोंमें वह शरीर-विज्ञानके उस नियममें पूर्णतया ठीक बैठती है जिसके अधीन हमारी जातिके स्वाभाविक मदन-प्रवाह हैं।

इस सम्बन्धमें स्त्री-समागमके विषयमें मूसाके कानूनकी व्यवस्थाओंको जानना मनोरञ्जक प्रतीत होगा। ऋतु-कालमें स्त्रीके साथ न केवल सब प्रकारके संसर्गके लिये कड़ा दण्ड था (देखो लैव्य व्यवस्था २०,१८: यदि रजस्वला स्त्रीके साथ पुरुष लेटे.........तो वे दोनों अपनी जातिसे अलग कर दिये जायँ), वरन् मूसाका कानून कहता है कि ऐसी प्रत्येक अवधिके बाद कुछ दिनतक स्त्रियोंको समागमसे बचाया जाय। मेरे स्वतन्त्र अन्वेषण द्वारा प्राप्त परिणामोंको इस प्रकार पूर्वकी इस प्राचीन प्रज्ञासे कुछ पुष्टि मिलती है। आधुनिक लेखक मूसाके इस नियमकी इस हेतुसे हँसी उड़ाना चाहते हैं कि वह ठीक ऐसे समयमें मैथुनका निषेध करता है जब कि वे समझते हैं कि काम-वासना प्रबलतम होनी चाहिये। परन्तु मालूम नहीं कि वे किस आधारपर पिछली बात कहते हैं, और न वे इसकी पुष्टिमें कोई वैज्ञानिक स्वीकृत तत्त्व ही देते हैं। इस प्रकार गलबिन अपने "मैनुएल ऑव मिडविफ़री" में कहता है—"यहूदी नियममें स्त्रियोंको रजःस्राव-कालमें तथा उसके बन्द होनेके बाद सात दिन-तक मैथुनसे बचे रहनेका आदेश है।* कहते हैं इस नियमपर पूरी तरहसे आचरण करनेवाले लोग जो कुछ लैव्य व्यवस्थामें आदेश है उससे भी आगे बढ़ जाते हैं, और यदि केवल घंटे या दो घंटेके

* लैव्य व्यवस्था (१५) में पुरुषके लिये आज्ञा है कि वह इस अवधिमें स्त्रीको स्पर्श न करे। अन्यथा वह अपवित्र हो जाता है। —म० क० स०

लिये ही रजःस्राव हो तो भी वे स्वयं अवधिके लिये पाँच दिनका नियम मानते हैं और इनमें सात दिन और मिलाकर सर्वयोग बारह कर देते हैं। इसमें भारी सन्देह है कि सारी जातिकी जाति अतीव तीव्र काम-वासनाके कालमें संयम करनेके लिये तत्पर हुई हो।" परन्तु यह स्वीकार करना पड़ेगा कि अगले समागमके पहले रजःस्रावके आरम्भके बाद बारह दिन रखनेकी प्राचीन यहूदी कल्पना मेरे नकशोंमें दिखलाए हुए स्त्रियोंकी काम-वासनाके नियत कालपर प्रत्यावर्तनके नियमके साथ प्रायः बिलकुल मिलती है। ये अपेक्षाकृत सरल-वक्र रेखाएँ उस चीज़को दिखलाती हैं जिसे मैंने स्त्रीमें प्राकृतिक काम-वासनाका स्वाभाविक, स्वयं-सिद्ध चढ़ाव माना है। ये वे आधार हैं जिनपर प्रणयके शारीरिक प्रकाशका भवन बनाया जा सकता है। किन्तु इस बातको भी भूल न जाना चाहिये कि जिस प्रकार हमारे जीवनमें अनेक ऐसी बातें हैं जो काम-वासनाको दबाती या रोकती हैं, उसी प्रकार विशेषतः आधुनिक भोग-विलासके जीवनमें असंख्य ऐसे उत्तेजन हैं जो काम-वासनाको उद्दीप्त कर सकते हैं। हो सकता है कि कोई स्त्री, पुरुषके सदृश, प्रबल उत्तेजनासे इतनी चलायमान हो कि समस्त मासमें एक भी दिन ऐसा न आये जब उसके पतिका स्पर्श, उसका कण्ठ-स्वर, या उसकी मुस्कानकी स्मृति, उसमें परम संयोगके लिये तीव्र लालसा न उत्पन्न करे। इसलिये, विशेषतः अपने प्रणयीके साथ रहनेवाली स्त्रीके लिये, अपनेमें इस कामके आवेगको पहचानना बहुधा कठिन होता है, क्योंकि हो

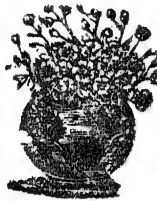
सकता है कि वह अपने अनुराग और कान्तकी उपस्थितिसे नित्य ही उत्तेजित रहती हो।

परन्तु मुझे विश्वास हो चुका है कि साधारणतया, चाहें वह इसको बाह्य चिन्होंसे स्वीकार करे या न करे, पाक्षिक काम तरङ्गका सामान्य स्त्रीपर गहरा असर पड़ता है, और इसीलिये यह प्रत्येक प्रकारसे वैवाहिक सम्बन्धपर मौलिक प्रभाव डालती है। आजन्म रहनेवाला तीव्र अनुराग प्रत्येक दम्पतिके भाग्यमें नहीं बदा। इसलिये जो पति गृहस्थमें स्थायी और पारस्परिक सुखकी कामना रखता है उसे चाहिये कि ध्यानपूर्वक अपनी पत्नीका अध्ययन करे। वह देखे कि कहाँतक उसमें स्वाभाविक मदन-तरङ्गें उठती हैं, और उसमें छोटी छोटी व्यक्तिगत विशेषताए क्या हैं। तब उसे स्त्री-सम्बन्धी अपनी कामनाओंको उसके अनुसार बनानेका यत्न करना चाहिये ताकि वे स्त्रीकी प्रकृतिके साथ मिल जायँ।

स्त्री पतिसे उसके प्रति अपनी लालसाको नहीं छिपाती। यदि वह बुद्धिमती है तो वह इसे बढ़ते हुए रहस्य और सम्मोहन-के साथ गूँथ देती है। वह उसे इस बातके ज्ञानसे पैदा होनेवाले स्वाभाविक हर्षसे वञ्चित भी न रखेगी कि उस (स्त्री) को उस (पुरुष) से आनन्द प्राप्त हो रहा है। जो पति इस प्रकार सफलता का अनुभव करता है वह अपनी मैथुन-सम्बन्धी आवश्यकताओं-को अपनी स्त्रीकी प्रकृतिके अनुसार बनाने और रूपान्तरित करने-के लिये उस पुरुषकी अपेक्षा कहीं अधिक तैयार होगा जो अपनी

स्त्रीके सदा मैथुनके प्रति विराग दिखलाती रहनेसे उपरत और दबा हुआ सा है, या जिसकी स्त्री, उसको न टालनेके लिए, झूठमूठ ही कामके ऐसे आवेग दिखलाती है जिनका वास्तवमें वह अनुभव नहीं करती। सच्चे आवेगका कभी बहाना नहीं हो सकता, परन्तु जब एक दूसरेका विचार करता है तब यह दोनोंमें बढ़ता और फूलता है।

पारस्परिक संयोजन या उपयुक्तता कोई बहुत सरल बात नहीं। अगले अध्यायमें हम इसपर विचार करेंगे।



पाँचवाँ अध्याय



अन्योन्य व्यवस्था

प्रेम अपने पड़ोसीका कोई अमंगल नहीं करता—सेंट पाल।

हमारी जातिके सामान्य पुरुषोंमें इससे बढ़कर काम-वासनाका और कोई मौसम नहीं कि शीतकालके महीनोंमें वह तनिक ढीली और वसन्तमें तेज़ हो जाती है। कुछ एक पुरुषोंने अपनेमें मन्द रूपसे एक निर्दिष्ट मासिक और कइयों-ने एक सर्वथा निश्चित पाक्षिक काम-तरङ्गका अनुभव किया है। परन्तु अधिकांश पुरुषोंमें काम-वासना, यदि उसे कड़े तौरपर रोक कर रखा गया है, केवल ऊँघ रही है। यह सदैव विद्यमान है, वरन् तनिक सा बुलानेपर जाग उठनेके लिये उद्यत है, और बहुधा ऐसी स्वयंसिद्ध रीतिसे भड़क उठती है कि उसको सदैव सचेतन होकर दबाते रहनेसे वह काबूमें रहती है।

जिस प्रकार जङ्गली पशुओंमें बार बार काम-तरङ्ग नहीं उठती, वरन् विशेष समयोंमें ही वे गरम होते हैं, यदि उसी प्रकार स्त्रियाँ भी बार बार गरम न होतीं और गर्भाधान-कालके सिवा उनके साथ भी सम्भोग हो ही न सकता, तो हमारी जातिके पुरुषों-को बड़ा कष्ट होता। स्त्रीमें बार बार गरम होना स्वाभाविक नहीं। यह गुण उसने पीछेसे आप प्राप्त किया है। परन्तु फिर भी वह इसमें पुरुषके बराबर नहीं। इसलिये पुरुष उसके नियमकी

उपेक्षा करता और उसे पाँव तले रोंद देता है। वह सब कालों और ऋतुओंमें बलसे या 'ईश्वरीय' अधिकार और सामाजिक परम्पराकी इससे भी अधिक विवश करनेवाली शक्तिसे स्त्रीपर ज़बरदस्ती करता रहता है।

यदि पुरुषमें काम-वासना निरन्तर बनी रहती है परन्तु स्त्रीको वह विशेष अन्तरोंके बाद होती है; यदि पुरुषमें काम-वासना स्वभावतः प्रतिदिन या थोड़े दिनोंके बाद उठती है परन्तु स्त्रीमें पक्षमें या मासमें एक बार, तो ऊपरसे देखनेपर, दोनों प्रकृतियोंके अविकृत प्रयोजनोंका, केवल दोके विवाह-बन्धनमें बाँधे जानेसे, एक ही कालमें तृप्त होना असम्भव प्रतीत होगा।

सन्तोषजनक अन्योन्य व्यवस्था—कामकी दृष्टिसे दम्पतिका एक दूसरेके उपयुक्त होना—कभी सम्भव नहीं, वस्तुतः, यह भाव कई शताब्दियोंतक हमारी जातिको व्यथित करता रहा है। इसका परिणाम यह हुआ है कि एक साथीकी कल्पित आवश्यकता प्रधान हो गई है, और हमने पतिके 'अधिकारों' और भार्याके 'कर्त्तव्यों' की सामाजिक परम्पराएँ स्थापित कर दी है। एक पुरुषने मुझे बिलकुल सरलतासे बताया कि, "जो अवस्थाएँ हैं उनमें स्त्री और पुरुषके लिये जो कुछ वे चाहते हैं प्राप्त करना असम्भव है। उनमेंसे एककी बलि चढ़ाना *आवश्यक* है। समाजके लिये यही उत्तम है कि स्त्रीको ही बलिदान किया जाय।"

इसपर भी, जान-बूझकर स्त्रीको बलिदान करनेवाले पुरुष बहुत थोड़े हैं। बहुतसे पुरुष अज्ञानमें कार्य्य करते हैं। हमारे

धर्मशास्त्रने अंधोंकी तरह न केवल स्त्रीका, वरन् उसके साथ अधिकांश पुरुषोंके सुखका भी बलिदान कर दिया है। ये पुरुष, इसके अर्थ और परिणामोंको बिलकुल न जानते हुए, इसी विचार-में पले हैं कि स्त्रियोंको नियमपूर्वक बार बार, बल्कि प्रति रात, सम्भोगके लिये अपनेको अर्पण करना चाहिये। थोड़ेसे मिनटोंके शारीरिक सुखके लिये वे सदा बढ़ते रहनेवाले आनन्द और कोमलताको खो देते हैं। हो सकता है कि स्त्री पुरुष स्वर्गके अस्तित्वका अनुभव न करें, परन्तु यदि उन्हें इससे बाहर निकाल दिया जाय तो वे दोनों दुःख मानते हैं।

विवाहित लोगोंको ऐसी युक्तियाँ सुझानेके पूर्व जो उन्हें न केवल पारस्परिक तितीक्षाका मध्यमोपाय ही, वरन् पारस्परिक आनन्दका पूर्णोपाय मालूम करनेमें सहायता देंगी, पुरुषकी काम-वासनाके वास्तविक स्वरूपके विषयमें कतिपय बातोंपर विचार कर लेना आवश्यक है। युवक और युवतियोंके लिये लिखी हुई मैंने अगणित पुस्तकें पढ़ी हैं। परन्तु उनमेंसे मैंने एक भी ऐसी नहीं देखी जिसमें पुरुषके काम-सम्बन्धी विकारोंके अर्थके विषयमें वे विशेष बातें दी गई हों जिनको समझ लेनेके अनन्तर ही समझ-दार युवक युक्तिसंगत उपदेश ग्रहण कर सकते हैं। हमारे शरीर-विज्ञानकी सामान्य मूल कल्पना हमें युवावस्थामें बता दी जाती है, क्योंकि, विलक्षण कल्पनाओंमें पड़कर सदा हैरान होते रहनेकी अपेक्षा, इसको यथार्थ रूपसे और निर्मल वैज्ञानिक ढंगसे जानना हमारे लिये अच्छा है। परन्तु हमारे अतीव गम्भीर रूपसे

क्षुब्ध करनेवाले व्यापारोंके शरीर-विज्ञानकी उपेक्षा—मेरी सम्मतिमें, अपराधपूर्वक की जाती है। मूल सिद्धान्तोंको सरल सीधी और वैज्ञानिक भाषामें वर्णन करना आवश्यक है, चाहे इससे उन लोगोंकी घबराहट ही हो, जिनको केवल अस्पष्ट अनिश्चितताका अभ्यास है। इसी अनिश्चितताके कारण युवकोंको कामशास्त्र-सम्बन्धी सचाईका भ्रमात्मक ज्ञान होता है। प्रत्येक संयोग करनेवाले पुरुष और स्त्रीको ये बातें मालूम होनी चाहियें—पुरुषकी जननेन्द्रियमें केवल वे रेशे (टिश्यू) ही नहीं जो सजीव, सगति और बाल जैसे बारीक कोड़ोंवाले कोशसमूहों (Ciliated cells), अर्थात् शुक्र-कीटोंको उत्पन्न करते हैं, और न केवल अकेला लिङ्ग ही जननेन्द्रिय कहला सकता है जिसमेंसे ये शुक्रकीट गुज़रते और जिसके द्वारा वे उनको निक्षिप्त करनेके लिये उचित स्थान—स्त्रीकी योनि—में पहुँचते हैं। स्त्रीकी योनिकी नाली, जिसका बाह्य छिद्र दुहरे होठोंसे ढका हुआ है, प्रायः इतने आकारकी होती है कि उसमें समूचा खड़ा लिङ्ग प्रवेश कर सकता है। योनिके भीतरी सिरेपर और भी अधिक महत्त्वपूर्ण, गर्भाशयकी गर्दनका छोटासा छिद्र है। जबतक शुक्रकीट इस छोटेसे छिद्रमेंसे घुसकर भीतर नहीं जाता तबतक गर्भस्थिति नहीं हो सकती, चाहे विशेष अवस्थाओंको छोड़कर योनिमें सुरत-क्रिया पूर्ण भी हो जाय। स्त्रियों और पुरुषों दोनोंमें प्राथमिक और आवश्यक रचनाओंसे सम्बद्ध कई ऐसे दूसरे रेशे और गिल्टियाँ हैं, जो अनेक सहकारी परन्तु बहुत ही महत्त्वपूर्ण कार्य्य

करती हैं, उनमेंसे कुछका तो शरीरकी प्रायः प्रत्येक इन्द्रियपर प्रभाव पड़ता है। निर्व्यापार दशामें पुरुषका लिङ्ग कोमल, छोटा, और कुम्हलाया हुआ होता है। परन्तु उत्तेजित होनेपर (मैं इस शब्दका प्रयोग शास्त्रीय अर्थोंमें कर रही हूँ), चाहे यह उत्तेजना शारीरिक स्पर्शद्वारा उत्पन्न हुई हो, जो प्रत्यक्ष रूपसे नाड़ियों और पेशियोंद्वारा और अप्रत्यक्ष रूपसे मस्तिष्कसे आनेवाले सन्देशों-के द्वारा कार्य करती है, इसका आकार बहुत अधिक बढ़ जाता है और यह कड़ा, फूला हुआ और खड़ा हो जाता है। कई पुरुष समझते हैं कि खड़े होनेकी दशामें इसके फूलनेका कारण उसमें शुक्रकीटोंका इकट्ठा हो जाना है और इनको स्वाभाविक रूपसे केवल बाहर फेंककर ही आराम हो सकता है। यह सर्वथा भूल है। लिङ्गके बढ़ जानेका कारण वास्तविक शुक्रकीटकी विद्य-मानता बिलकुल नहीं। इसकी वृद्धि रक्तकी नाड़ियोंपर मज्जातन्तु-गत प्रतिक्रियाके कारण होती है, क्योंकि इससे मुख्यतः शिराएँ (Veins) और उनसे बहुत कम धमनियाँ (arteries) रक्तसे भर जाती हैं। क्योंकि रक्त लिङ्गमें प्रवेश तो करता है परन्तु इसमेंसे बाहर नहीं निकलता, इसलिये इसके अन्दरके शिराश्रित रन्ध्र शिरा-सम्बन्धी रक्तसे भर जाते हैं और सारी इन्द्रिय कड़ी हो जाती है। कड़ी हो जानेपर यह इन्द्रिय स्त्रीके छिद्रमें प्रवेश कर सकती है, और वहाँ संसर्गसे उत्पन्न होनेवाले और भी अधिक उत्तेजनके कारण शुक्रकीट अपने भण्डार—वीर्यकोशों—से बाहर आकर नाली (मूत्र-मार्ग) मेंसे होते हुए बाहर निकल

जाते हैं। यदि यह बात स्पष्ट हो गई हो तो यह समझमें आ जायगा कि लिङ्गके कड़ेपन तथा उसके फुलावको दूर करनेके लिये शुक्रकीटका क्षरण *आवश्यक* नहीं। यदि शिराएँ अपने आपको खाली कर सकें, जैसा कि वे, उनको स्थानीय रूपसे रोकनेवाले नाड़ीगत उत्तेजनके चले जानेपर, स्वभावतः कर लेती हैं, तो लिङ्गमें एकत्रित अतिमात्र रक्तके साधारण रुधिराभिसरण-की प्रणालीमें लौट जानेसे ही, शुक्रकीटोंकी हानि हुए बिना, तन्नाया हुआ लिङ्ग अपने आप बैठ जाता है। जब रुधिरकी नाड़ियोंको, शारीरिक रूपसे या मानसिक शान्ति तथा अभ्युदयके भावके परिणाम-स्वरूप, ठण्डा कर दिया जाय तब यह बात सर्वथा स्वाभाविक तथा सुस्थ रूपसे हो सकती है। इसके विप-रीत, जब स्थानीय उत्तेजन इतना बढ़ जाय कि शुक्रकीटोंको वीर्यकोशोंसे बाहर निकाल दे, तो क्षरणके एक बार चल पड़ने-पर वह अकाम—बे-इख्तियार—हो जाता है। और तत्सम्बन्धी शुक्रकीट और स्राव शरीरसे बाहर निकलकर सर्वथा नष्ट हो जाते हैं।

वीर्यके क्षरणसे भी बहुत हानि होती है। जाँचसे मालूम हुआ है कि एक अकेले सामान्य क्षरणमें कोई बीस करोड़से लेकर पचास करोड़ तक शुक्रकीट होते हैं *। (नीरोग पुरुषमें) इनमेंसे प्रत्येक कीट स्त्रीके गर्भाण्ड-कोशसमूह (Egg-cell) को हरा करने और एक नए मनुष्यको जन्म देनेमें समर्थ है। (इस प्रकार

* देखो Pfliger's "Archiv," 1891.

एक पुरुषके एक ही क्षरणसे संसारकी लगभग सभी विवाह योग्य युवतियाँ गर्भवती हो सकती हैं !) उन सूक्ष्म शुक्रकीटोंमें-से प्रत्येकमें संख्यातीत पैतृक विशेषताएँ भरी पड़ी हैं। प्रत्येक शुक्रकीटके शरीरका अधिकांश बीजरूप जीवनाधार पदार्थ, प्लाज़्म, का बना है, जो हमारे शरीरोंमें बहुत अधिक विशेषत्व-प्राप्त तथा अतीव सारगर्भित वस्तु है। क्षरित द्रव्यके रासायनिक विश्लेषणसे पता लगता है कि अन्य पदार्थोंके अतिरिक्त इसमें कैल्शियम तथा फास्फोरिक ऐसिडका शतोत्तर परिमाण — फ़ी सदी मिकदार—बहुत अधिक है। और ये दोनों हमारे शरीरमें बहुमूल्य पदार्थ हैं। इसलिये वीर्य्यको *बार बार* नष्ट करनेयोग्य वस्तु समझना बड़ी भारी भूल है—इसके क्षरणमें जो प्राणभूत शक्ति और उद्दीपक बल ख़र्च होता है और जिन अमूल्य पदार्थोंसे यह बनता है वे सब मासके अधिकतर दिनोंमें दूसरे निर्माणक कामोंमें रूपान्तरित करके, अधिक अच्छे कार्य्यमें लगाए जा सकते हैं। हमारे शरीरमें ऐसे रहस्यमय और आश्चर्यजनक रासायनिक रूपान्तर हो रहे हैं कि मस्तिष्क बहुधा इस रस-सिद्धिमें गति उत्पन्न कर सकता है, विशेषतः यदि मस्तिष्कको *ज्ञान* की सहा-यता हो। एक बलवती इच्छा रुधिर भेजनेवाली नाड़ियोंको बहुधा शान्त कर सकती तथा लिङ्गकी फैली हुई शिराओंको, क्षरणमें वीर्य्यका नाश किए बिना, सिकुड़कर बैठ जानेकी आज्ञा दे सकती है।

क्या ही अच्छा हो कि पुरुष इस प्रकारका संयम कर सकें।

परन्तु ऐसा संयम सदा करते रहनेका यत्न करना अच्छा नहीं। एक विशेष सीमातक निरोध करनेसे पुरुषकी शक्ति बढ़ती है; परन्तु उससे अधिक निग्रह करनेसे शक्तिपर अनुचित दबाव पड़ता है। मेरा यह विश्वास है कि उतना संयम जिससे पुरुष अपनी स्त्रीके मदन-तरङ्गके उतारके दिनोंमें अपनी काम-वासना का निग्रह कर सके, उसको सर्वोत्तम शक्ति, ओज और आनन्द देनेके लिये सामान्यतः ठीक परिमाण है, बशर्ते कि स्त्री-पुरुष दोनों स्वाभाविक हों। यदि पत्नीमें काम-वासनाकी जागृति व काम-वासनाकी ऐसी *सम्भाव्यता* जिसका उसे ज्ञान नहीं (Unconsious Potentiality) पाक्षिक होती है, जैसा कि मैं समझती हूँ कि अधिकांश नीरोग और अच्छा खाने-पीनेवाली युवतियोंमें यह बात मिलेगी, तो दोनोंकी आपसमें पूर्ण व्यवस्था पाक्षिक सम्भोगोंमें है; क्योंकि यह आवश्यक नहीं कि ऐसे अवसरपर केवल एक ही बार समागम किया जाय। अनेक पुरुष जो बारह चौदह दिनतक भलीभाँति आत्म-निग्रह किर सकते हैं, देखेंगे कि तब केवल एक समागमसे उनकी पूर्ण तृप्ति नहीं होती; और यदि सौभाग्यवश उन्हें स्वस्थ पत्नियाँ मिली हैं तो वे देखेंगे कि उन्हें भी एक दो दिनके अन्दर कई समागम करनेकी चाह रहती है।

यदि नकशेमें दिये हुए तरङ्ग-शृङ्गों (Wave-crests) का अध्ययन किया जाय तो आप देखेंगे कि वे दो तीन दिनोंतक फैलते हैं और अनेक छोटे गौण शृङ्ग दिखलाते हैं। जब स्त्री पूर्ण रूपसे नीरोग और जीवनी शक्तिसे परिपूर्ण हो तो ऐसा ही

होता है; उसकी काम-वासना एक या दो दिनमें, और कभी कभी यदि तृप्ति हो भी जाय, तो भी प्रत्येक थोड़े थोड़े घण्टोंके बाद पुनः लौट आती है।

व्यापक शब्दोंमें मेरे मतका परिणाम (जो सम्भवतः प्रत्येक व्यक्तिके अनुकूल नहीं होगा) इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है:—विवाहमें समागमका परस्पर सर्वोत्तम नियम यह है कि तीन चार दिनतक बारबार संयोग किया जाय, इसके बाद कोई दस दिनतक, यदि कोई प्रबल बाह्य उत्तेजन दोनोंमें कामका उद्दीपन न करे, बिलकुल समागम न किया जाय।

मुझे यह मालूम करके प्रसन्नता हुई है कि मेरे जाने हुए लोगोंमेंसे अधिकांश, जिन्होंने अपने जीवनको अकस्मात् इस व्यवस्थापर स्थिर कर रखा है, बड़े सखी हैं। याद रहे कि यह मेरे दिये हुए नकशोंके बिलकुल अनुसार है। वे नकशे अनेक स्त्रियोंकी स्वाभाविक स्वयंसिद्ध समागम-इच्छाको दिखलाते हैं।

अनेक स्त्रियाँ ऐसी हैं जो प्रत्येक चान्द्रमासमें मैथुनके प्राकृतिक सुखका केवल एक ही बार अनुभव करती हैं, उन्हें दूसरी बारका अनुभव नहीं होता, या जो इसे पहलेपहल नहीं पहचानतीं। अनेक प्रबल संकल्प-शक्ति तथा मिताचारवाले पुरुष इतना आत्म-संयम करनेमें समर्थ होंगे कि वे इस अधिक नियन्त्रित काम-वासनाके अनुकूल अपनेको ठीक कर सकें, और, मैं जानती हूँ, कई ऐसे हैं। इसके विपरीत अनेक ऐसे भी होंगे जिनको अपने आवेगको रोकनेके लिए उचितसे अधिक शक्ति व्यय किये बिना

यह काल बहुत लम्बा प्रतीत होगा। स्वाभाविक वेगोंको रोकनेके लिए इतनी संकल्प-शक्ति तथा बलका व्यय करना कि जिससे बहुमूल्य कार्य्य और बौद्धिक शक्ति तथा तुल्यता (poise) की हानि हो मुझे कभी उचित नहीं प्रतीत होता। इसलिये यदि कोई प्रबल मैथुन-शक्तिवाला पति, जो देखता है कि छब्बीस दिनतक स्त्री-समागम न करनेसे मेरी कार्य्य-शक्तियोंकी वस्तुतः बहुत हानि होती है, अपनेको ऐसी स्त्रीके साथ विवाहित पाये जिसकी जीवनी शक्ति इतनी कम है कि उसे अपने चान्द्रमासमें (कुछमें यह रजःस्रावके थोड़ा समय पहले और कुछमें उसके थोड़ा समय बाद होता है) केवल एक ही बार समागम करनेसे सुख मिल सकता है, तो उसे चाहिये कि उस समयको याद रक्खे जब पत्नीको समागममें स्वयंसिद्ध सुख मिलता है, और तब जैसे भी बन सके उसके तत्काल बाद आनेवाले दिनोंमें आत्म-निग्रह करे। फिर अपनी स्त्रीके कामवासना-कालके कोई एक पक्ष बाद वह उत्सुकता-पूर्वक उसके साथ लाड़-प्यार करना आरम्भ कर दे। यदि स्त्री वस्तुतः ही बीमार न होगी तो वह उस समय किसी दूसरे समयकी अपेक्षा न केवल उसकी अनुकूलता प्राप्त करने वरन् उसे उचित आनन्द प्रदान करने और परस्पर प्रहर्ष पानेमें अधिक सफल होगी।

जो पति इस प्रकार आत्म-संयम करेगा, चाहे उसे इसमें कठिनाई ही हो, वह प्रायः देखेगा कि उसे इसके लिये सहस्र गुना अधिक फल मिलता है। इससे न केवल उसकी पत्नीका स्वास्थ्य

और सुख बढ़ेगा और स्त्री-समागमसे उसे अधिक तीव्र आनन्द ही प्राप्त होगा, वरन् उसमें आत्म-संयम और जीवनी शक्तिकी भी वृद्धि होगी। एक पक्षतक आत्म-संयम करना एक स्वस्थ पुरुषके लिये कोई बड़ी बात नहीं।

सर टामस क्लौस्टन (अपनी पुस्तक "बीफ़ोर आई वॅड" में, पृष्ठ ८४ पर) कहते हैं:—"प्रकृतिने कुछ ऐसी व्यवस्था की है कि जितना अधिक अनवरत रूपसे आत्म-संयम किया जाय, उतना ही यह अधिक सुगम और सफल हो जाता है। यह बात भी उसके स्वभावमें दाख़िल हो जाती है। जितना कम निग्रह किया जाय, काम-वासनाकी प्रवृत्ति उतनी ही अधिक दुर्दमनीयताका रूप धारण कर लेती है। यह एक प्रकारका रोग है। इसका परिणाम जल्दी या देरसे मृत्यु होता है।" यह सिद्धान्त हमारी जातिके केवल बौद्धिक और नैतिक अनुभवका ही फल नहीं, वरन् शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी परीक्षण भी इसका समर्थन करते हैं।

यह ठीक है कि अपने जीवनकी व्यवस्था प्रधानतः अपने अस्तित्वके मौलिक नियमोंके ज्ञानके अनुसार करनी चाहिये परन्तु हम इतने जटिल हैं कि बहुसंख्यक संस्कारोंको ग्रहण करनेमें हम इतने तेज़ हैं कि घड़ीकी ऐसी नियमपरता हमपर कभी शासन नहीं कर सकती।

जब स्त्री प्रबल मदन-शक्ति रखनेवाली हो, जिसमें काम-वासना-का प्रत्यावर्तन स्पष्ट रूपसे देख पड़े (जिसकी तृप्ति प्रायः पाक्षिक सम्भोगोंद्वारा हो जाती है), तो बहुधा इन अवधियोंके बीचमें,

विशेष अवसरोंपर फालतू तौरपर दम्पतिमें संयोगकी लालसा उत्पन्न हो जाती है। इस लालसाकी उत्पत्तिका कारण प्रायः दम्पतिके जीवनकी कोई ऐसी विशेष घटना हो सकती है जो उनके आवेगको उसका देती है, विवाहके समय जो जो घटनाएँ हुई थीं उनकी स्मृति, उपन्यास, कविता, या चित्र भी यही काम कर सकते हैं। जिस पुरुषपर उसका प्रेम है, यदि वह ऐसे समयोंमें भी जब कि स्त्रीकी कामवासना *अपने आप* नहीं भड़कती, बड़ी कोमलतासे लाड़प्यार और अनुनय-विनय करे तो प्रायः स्त्री इतने प्रबल रूपसे उत्तेजित हो जाती है कि वह प्रचण्ड रूपसे पुरुषकी कामना करने लगती है। परन्तु उसके काम-प्रवाहके उतारके समयोंमें चढ़ावके दिनोंकी अपेक्षा प्रबलतर उत्तेजनकी आवश्यकता होगी। उस समय उसे सामान्य कालकी अपेक्षा विकारतन्त्र और आध्यात्मिक प्रकृतिके द्वारा अधिक और शारीरिकके द्वारा कम प्रार्थना करना उचित है। अर्थात् इस समय आलिंगन-चुम्बन आदिकी अपेक्षा कामोत्तेजक लाड़-प्यारकी मीठी मीठी बातें ही अधिक सफलतापूर्वक उत्तेजित कर सकती हैं।

पतियोंके लिये प्रधान नियम यह है—याद रक्खो कि प्रत्येक संयोगसे पहले लाड़प्यार और अनुनय-विनयद्वारा पत्नीकी स्वीकृति लेना आवश्यक है। जबतक पत्नी भी संयोगकी इच्छा न रखती हो और जबतक उसे शारीरिक रूपसे (आलिंगन-चुम्बन इत्यादिद्वारा) समागमके लिये तैयार न कर लिया जाय, कभी मैथुन नहीं करना चाहिये।

बहुतसे विवाहोंमें तो पत्नीमें बहुत कम बार उठनेवाली मदन-तरङ्गके अनुसार आचरण करनेके लिए—पत्नीमें बहुत कम उत्तेजना होनेके कारण—पतिको आत्म-संयम करना पड़ता है। परन्तु, इसके विपरीत, कई ऐसे विवाह भी हैं जिनमें पति इतनी मन्द काम-वासनावाला होता है कि वह लम्बे लम्बे अन्तरोंके बाद ही समागम कर सकता है, नहीं तो उसके स्वास्थ्यकी घोर हानि होती है। यदि ऐसे पुरुषका विवाह किसी ऐसी स्त्रीके साथ हो जाय जिसमें असामान्यतः प्रबल और बहुत अधिक बार उद्दीप्त होनेवाली काम-वासना है तो उसको स्त्री-समागमसे हानि हो सकती है। और यदि वह संयोग करनेसे इन्कार करेगा तो उसकी स्त्रीको दुःख होगा। सम्भव है कि ऐसे लोगोंको करेज्ज़ा की विधि (इस विषयपर देखो डाक्टर ए० स्टाकहम की पुस्तक करेज्ज़ा"*) शायद स्वास्थ्य और शान्ति प्रदान कर सके; क्योंकि इससे पुरुषका वीर्य्य, जिसके नष्ट होनेसे उसे हानि होती है, रक्षित रहता है, परन्तु स्त्रीको जिस संयोग और शारीरिक उप-शान्तिकी चाह होती है वह भी पूरी हो जाती है। किन्तु भिन्न भिन्न निरोग लोगोंके मैथुन-सम्बन्धी प्रयोजन और मैथुन-सम्बन्धी धारणाएँ अमित हैं, और इतनी अधिक हैं कि इस छोटीसी पुस्तकमें नहीं लिखी जा सकतीं।

* यह डाक्टरीकी पुस्तक अमरीकामें प्रकाशित हुई थी, परन्तु अब अप्राप्य है। अब यह योरपके बड़े बड़े पुस्तकालयों, जैसे कि ब्रिटिश म्यूज़ि-यम, में देखी जा सकती है।

ऐलिस कहता है कि अरागानकी महारानीने यह नियम बनाया था कि धर्म-सम्मत विवाहमें दिनमें छः बार समागम करना समीचीन नियम है। ऐसी अस्वाभाविक मैथुन-शक्तिवाली स्त्री आज सम्भवतः थकावटसे ही लगातार कई पतियोंको मार सकती है, क्योंकि ऐसी काम-वासनाका मुक़ाबिला करनेकी शक्ति रखनेवाला पुरुष आज दुष्प्राप्य है। यद्यपि कदाचित् ऐसी स्त्रीकी अपेक्षा वह कम अलौकिक है।

समागम कितनी बार करना और किस समयपर करना चाहिये ये ऐसी बातें हैं जिनके विषयमें अनभिज्ञ और सदाशय लोग बहुत बार प्रश्न किया करते हैं; और जिनके विषयमें उनका ज्ञान अतीव भ्रमात्मक है। परन्तु इनके अतिरिक्त सुरत-सम्बन्धी कई दूसरे मूल तत्व ऐसे हैं जिनके विषयमें, आश्चर्य है कि, डाक्टर लोग भी अनभिज्ञ प्रतीत होते हैं। इनके विषयमें, शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी तथ्योंका एक सरल आवेदन आवश्यक है।

हमारे शरीरोंकी रचनाका अव्यक्तिगत और वैज्ञानिक ज्ञान लम्पट कौतूहल और काम-हेतुक तृष्णासे बचनेका सर्वोत्तम उपाय है। यह ज्ञान पत्नीकी पतिकी अनभिप्रेत क्रूरतासे भी रक्षा करेगा।

मैथुनकी क्रियामें वस्तुतः जो कुछ होता है उसका ज्ञान होना चाहिये। प्रारम्भिक बातोंद्वारा दम्पतिमें कामका उद्दीपन हो जानेके पश्चात् बढ़ा हुआ और कड़ा बना हुआ, उत्तेजित लिंग स्त्रीकी योनिमें घुसेड़ दिया जाता है। साधारणतः जब स्त्रीमें

कामका उद्दीपन न हुआ हो, तो योनिका द्वार, और साथ ही इसको घेरनेवाले कोमल कोश-समूहोंके बाहरी ओष्ठ, सूखे और झुर्रीदार होते हैं, और योनिका छिद्र पुरुषके फूले हुए लिङ्गसे छोटा होता है। परन्तु जब स्त्री संयोगके लिये तैयार और प्रचण्ड रूपसे उत्तेजित होती है, तब उसकी जननेन्द्रियमें भीतरसे बहुतसा रुधिर इकट्ठा हो जाता है जिससे वह पुरुषकी इन्द्रियके सदृश किसी कदर फूल जाती है, और क्लेदका एक स्राव (Secretion of mucus) योनिके छिद्रको चिकना बना देता है। योनिकी नालीकी दीवारें, बहुत ही फैल सकनेवाली, सलवटदार पेशियोंसे बनी होनेके कारण पुरुषके बढ़े हुए लिङ्गको ग्रहण करने तथा ठीक तौरपर पकड़ लेनेके लिये चटपट फैल जाती हैं। एक उत्सुक स्त्रीका योनि-द्वार अपने आप सिकुड़ और फैल सकता है। (हमारी शरीर-रचनापर विचारका प्रभाव इतना प्रबल होता है कि कई लोगोंमें ये सब शारीरिक परिणाम स्त्रीके विचार-मात्रसे, कोमल शब्दों तथा चुम्बनोंके आनन्दसे, लाड़प्यार तथा हावभावकी सुन्दर सूक्ष्मतासे उत्पन्न हो जाते हैं) इसलिये यह बात शीघ्र ही समझमें आ जायगी कि जब पुरुष किसी स्त्रीमें प्रवेश करनेका यत्न करता है जिसके साथ उसने पहले इतना लाड़प्यार इतना हावभाव तथा इतना आलिङ्गन-चुम्बन नहीं किया जिससे उसकी तैयारीकी प्राकृतिक शारीरिक प्रतिक्रियाएँ उत्तेजित हो जायँ, अर्थात् उसका योनि-द्वार स्रावसे चिकना हो जाय, तो मानों वह सूखी दीवारोंवाले छिद्रमेंसे, जो उसके लिये बहुत छोटा

है, बल-पूर्वक घुसनेकी चेष्टा करता है। पतिके इस प्रकार बे-परवाहीके साथ उसका उपभोग करनेसे पत्नीके मनमें उसके प्रति न केवल ग्लानि और घृणा ही उत्पन्न होगी, वरन् उसको उसकी इस कुचेष्टासे वस्तुतः पीड़ा भी होगी। इसके विपरीत, जिस स्त्रीमें कामका उद्दीपन हो चुका है, जो पहले ही प्राकृतिक रूपसे तैयार की जा चुकी है, उसका योनि-द्वार क्लेदसे चिकना हो जाता है, और उसके सब पट्ठे और नाड़ियाँ प्रतिक्रिया करने तथा पुरुषके प्रवेश करनेवाले लिङ्गको सुगमतासे ग्रहण करनेके लिए तैयार होती हैं। यह वृत्तान्त उन स्त्रियोंके समागमका है जिनका विवाह हुए देर हो चुकी है। अलबत्ता, क्वाँरी लड़कीके साथ पहली बारका समागम दूसरे सब समागमोंसे भिन्न होता है, क्योंकि उस समय उसकी कुँवार-झिल्ली (Hymen) फटती है। आप समझते होंगे कि तब तो विवाहके पहले प्रत्येक युवतीको इस झिल्लीके आवश्यक रूपसे फटने तथा इससे कुछ देरके लिए पीड़ा होनेकी बात बता दी जाती होगी, परन्तु दुःख है कि अभीतक भी बहुतसी लड़कियोंका विवाह पूर्ण अज्ञानकी दशामें होता है। कुमारी युवतीकी इस जननेन्द्रिय-सम्बन्धी रचनाकी विशेषताके विषयमें, और भी अधिक आश्चर्यजनक बात न केवल अनेक पुरुषोंकी, वरन् देरसे विवाहित पुरुषोंकी अज्ञता है। यदि एकदम विवाहके बाद ही नवविवाहिताकी योनिमें पुरुषके लिङ्गका पूर्ण प्रवेश हो जाय, तो यह झिल्ली बहुत काफ़ी रुकावट पेश करती है और स्त्रीको पीड़ा होती है। इसलिये प्रेम करनेवाले

तथा मृदु-प्रकृति पति इसका बहुत ध्यान रखते हैं, और इस पीड़ाको घटाने अथवा बिलकुल दूर कर देनेके उद्देश्यसे अपनी पत्नियोंके पास क्रमशः जाते हैं। कमसे कम कई दिनतक आत्म-संयमसे काम लेते हैं और झिल्लीको थोड़ा थोड़ा करके फाड़ते हैं। नववधुओंको हलकीसी पीड़ा सहन करनेके लिये तैयार रहना चाहिये। उन्हें बता दिया जाना चाहिये कि यह पीड़ा देर-तक रहनेवाली नहीं। इसकारण संकोच करके सहृदय पतिको घबराहटमें डाल देना उचित नहीं; वरन् आत्म-संयमको आत्म-समर्पणके साथ मिलाकर प्रत्येक प्रकारसे उसकी सहायता करनी चाहिये। एक बार रुकावटके टूट जानेपर संयोग सुगम तथा सुखदायक हो जाता है। सभी स्त्रियोंकी झिल्ली एक जैसी नहीं होती। कुछ स्त्रियोंमें तो झिल्ली इतनी कोमल होती है कि यह एक ही रातमें सुगमतासे फट जाती है, और कुछमें यह इतनी दृढ़ होती है कि कई बार यत्न करनेपर भी पुरुषके लिङ्गको प्रविष्ट नहीं होने देती। इससे कई बार बड़ी निराशा होती है। पुरुष समझने लगता है कि मुझमें पुँस्त्वकी कमी है, परन्तु इसका कोई कारण नहीं होता, क्योंकि मैं अनेक ऐसी स्त्रियोंको जानती हूँ जिन्हें विवाहके कई सप्ताह बाद (किसी डाक्टरनीसे) अपनी इस झिल्लीमें थोड़ासा छिद्र कराना पड़ा था, क्योंकि उनके रेशे असामान्य रूपसे दृढ़ थे।

यह बात भली भाँति समझ लेनी चाहिये कि पुरुषको विवाह हो जानेपर पहले समागमके लिये ही स्त्रीके साथ लाड़-प्यार

और अनुनय-विनय करनेकी आवश्यकता नहीं, वरन् उसे भविष्यमें भी प्रत्येक समागमके पहले इसी प्रकार उसके साथ लाड़-प्यार करना चाहिये, क्योंकि, जैसा कि दूसरे जन्तु जानते हैं, प्रत्येक समागम एक विवाहके अनुरूप होता है। जंगली जीव मनुष्यके समान मूर्ख नहीं। जङ्गली पशु अपनी मादासे तबतक कभी संयोग नहीं करता जबतक कि वह, अपनी जातिकी विशेष प्रथाके अनुसार, या तो दूसरे नरके साथ युद्धमें अपने बलका प्रदर्शन करके, अथवा अपने सुन्दर पंख दिखाकर, या गीत सुनाकर उसे मोहित नहीं कर लेता। हमें भूल नहीं जाना चाहिये कि जङ्गली जीवोंको प्रकृतिसे सहायता मिलती है; वे प्रायः केवल ठीक उसी समय लाड़-प्यार और प्रणय-प्रदर्शन करते हैं जब मादाको काम-वासनाका अनुभव होना आरम्भ होता है। परन्तु पुरुष समय-असमय सदा ही स्त्रीकी अभिलाषा करता है। इसलिये उसका कर्त्तव्य दुगना है। उसे स्वयं ही स्त्रीको लुभाना, उत्तेजित और कामातुर करना चाहिये ताकि उसकी (स्त्रीकी) जननेन्द्रिय उसके लिये तैयार हो जाय। यदि वह उस समयतक प्रतीक्षा करता जब कि स्त्रीमें काम-वासना स्वाभाविक रूपसे उत्तेजित होती है तो उसे योनि किसी हद्दतक अपने आप तैयार मिलती। परन्तु एक बात, जिसका जितना भी स्पष्ट रूपसे अनुभव किया जाय थोड़ा है, और जिसको दुहराना आवश्यक है, यह है कि स्त्रीका प्रेम *प्रारम्भ*में उसके हृदय तथा मनके द्वारा उत्तेजित होता है, इसलिये चतुर कान्तको स्त्रीकी शारीरिक

तथा स्वयंसिद्ध सहायताकी प्रतीक्षामें ही न बैठे रहना चाहिये। कामिनीका मन मोह लेनेसे कामोद्दीपन तथा उत्तेजन अपने आप हो जाता है।

उसके साथ संयोग करनेके पूर्व स्त्रीको तैयार करना केवल करुणाका ही कर्म नहीं, क्योंकि इससे स्त्री पीड़ासे बच जाती है, वरन् यह पुरुषकी विचार-दृष्टिसे भी बड़े कामकी बात है, क्योंकि (यदि पति उन अपेक्षाकृत कतिपय अस्वाभाविक और रुग्ण रूपान्तरित पुरुषोंमेंसे एक नहीं, जिन्हें स्त्रीपर बलात्कार करनेमें ही आनन्द आता है तो) इस प्रकार प्राप्त हुई अन्योन्यतासे पुरुषको बहुत अधिक सुरत-सुख मिलता है, और इसका स्त्री और पुरुष दोनोंके स्वास्थ्यपर बहुत ही हितकर प्रभाव पड़ता है।

अच्छा, मान लीजिये कि दोनोंमें मानसिक, आध्यात्मिक और अनुभव-सम्बन्धी एकतानता पूर्ण रूपसे है; अब किस आसन अर्थात् स्थितिसे सुरत-क्रिया करनी चाहिये ? पुरुष और स्त्रियाँ एक दूसरेकी आँखोंसे आँखें मिलाए, कोमलतासे मुख-चुम्बन करते, एक दूसरेको बाहुपाशमें लपेटे, आमने-सामने होकर संयोग करते हैं। प्रसन्नतापूर्वक संयोग करनेवाले जोड़ेके समागमका यही आसन प्रदर्शक है।

यह बात अविश्वास्य प्रतीत होती है कि आज भी ऐसे शिक्षित पुरुष मिलते हैं जो—बाहरी रूपसे धार्मिक कारणोंसे—किसी भी दूसरे आसनको पसंद करनेसे इनकार करते हैं। फिर

भी एक पत्नीने मुझे बताया कि उसका पति उसे ऐसा कुचल डालता और इतना दम बन्द कर देता था कि प्रत्येक संयोगके बाद उसे स्वस्थ होनेके लिये कई घंटे लगते थे, परन्तु 'सिद्धान्तके कारण' वह उस आसनके सिवा जिसे कि वह स्वाभाविक समझता था किसी भी दूसरे आसनकी चेष्टा करनेसे इनकार करता था, यद्यपि उसे इतनी मोटी सी बातका भी ज्ञान नहीं था कि अपना भार कुहनियोंपर डालना चाहिये।

एक दूसरेके हितका दोनोंको ध्यान रहना चाहिये। कई श्रेष्ठ और सदाशय लोगोंमें मानसिक तथा शारीरिक वृत्तिकी दृढ़ता विशेष रूपसे पायी जाती है। और जिनके विवाह,शारीरिक दृष्टि-से पूर्णताकी इस उच्चताको नहीं पहुँचते जिसकी वे बौद्धिक रूपसे आकांक्षा करते हैं उनमें या तो वे लोग हैं जिन्हें इस बातका बिलकुल ही ज्ञान नहीं कि सुरत कई और आसनों अर्थात् स्थितियोंमें भी किया जा सकता है, या फिर वे हैं जो अतीव सामान्य आसनके सिवा शेष सबको ग़लत समझते हैं।

फिर भी कौतूहलकी बात है कि कभी कभी कई ऐसे जोड़ोंका भी पता लगता है जिन्हें सामान्य आसनका भी ज्ञान नहीं। मेरे अपने अनुभवकी बात है कि बहुतसे दम्पति जिनके सन्तान नहीं होती, या जिन्हें समागममें पूरा पूरा आनन्द नहीं मिलता, उनकी स्त्रियोंको इतना भी ज्ञान नहीं था कि केवल बाहुपाशसे ही कान्त-को नहीं लपेटा जाता। इस दशामें पतिके लिये लिङ्गका प्रवेश करना कठिन और कभी कभी असम्भव हो जाता है।

इसके अतिरिक्त उस स्वयंसिद्ध गतिको, जो तीव्र रूपसे उत्तेजित जोड़ोंमें स्वभावतः ही उत्पन्न हो जाती है, हमारे बहुत-से आधुनिक युवकों और युवतियोंमें उत्साहित तथा परिवर्धित करनेका प्रयोजन है। जिस जोड़ेमें मदन उमड़ रहा है वह उसके प्रभावसे ऐसा ही लचकदार हो जाना चाहिये जैसा कि ज्वार-भाटेकी लहरोंसे हिलनेवाले समुद्री पौधे होते हैं, और उन्हें अपने लिये स्वयं पता लग जाना चाहिये कि साम्यके असंख्य आसनोंमेंसे किसमें दोनोंको सबसे अधिक तृप्ति होती है। इस विषयमें मदन-सम्बन्धी अनेक दूसरी बातोंके सदृश कोई कड़ा क्रम न बनाया जाय, वरन् प्रचण्ड काम-वासनाके हाथमें शरीर एक सुतीक्ष्ण और लचकदार साधन बन जाना चाहिये।

इस बातको समझनेवाले लोग प्रायः बहुत कम हैं कि स्त्री और पुरुषकी जननेन्द्रियोंकी विशालता, दीर्घता, आकार और स्थितिकी दृष्टिसे भिन्न भिन्न व्यक्तियोंमें कितना बड़ा अन्तर है। वास्तवमें उनके मुख-मण्डल और हाथोंके आकार-प्रकारमें उतनी भिन्नता नहीं, जितनी कि जननेन्द्रियोंमें है *। इसलिये अनेक बार ऐसा होता है कि जो आसन बहुतसे लोगोंके अनुकूल होता है वही कई दूसरोंके लिये सन्तोष-जनक नहीं होता। उदाहरणार्थ,

* योनिकी विशालता और लिङ्गकी दीर्घताके अनुसार स्त्री-पुरुषोंके भेद तथा इनसे पैदा होनेवाली विषम अवस्थाओंको दूर करनेके लिए भिन्न भिन्न आसनोंका वर्णन मेरी पुस्तक "रति विज्ञान" (साहित्य-सदन, लाहौर द्वारा प्रकाशित) में देखो। अनुवादक।

कई दम्पति ऐसे हैं जो सुरतसे तभी लाभ उठा सकते हैं जब वे दोनों अपने करवटके बल लेटे हुए हों। यद्यपि वैद्यककी दृष्टिसे इसे प्रायः गर्भाधानके अनुकूल और गर्भस्थितिका निरोधक समझा जाता है, परन्तु मैं अनेक स्त्रियोंको जानती हूँ जिनके अनेक सन्तान हैं और जिनके पति सदा इसी आसनका प्रयोग करते हैं।

अनेक पुरुष जो सुरतमें अपनी स्त्रीमें पूर्ण रूपसे काम-वासनाको उद्दीपित नहीं कर सकते और जो समागमके पश्चात् उसे कुचली हुई तथा थकी हुई पाते हैं, यदि वे करवटके बल लेटी हुई स्त्रीके साथ आप भी करवटके बल लेटकर उसका आलिङ्गन करें, मानों उसे अपने बाहुपाशमें उठाए हुए हैं, तो न केवल उन्हें ही बहुत अधिक लाभ हो, वरन् उनकी पत्नियोंके भी आरोग्य और सुखमें वृद्धि हो। इस विषयमें प्रत्येक दम्पतिको अपने लिये आप पता लगाना चाहिये कि जितने आसन सम्भव हो सकते हैं उन अनेकमेंसे कौनसा उन दोनोंको सबसे अधिक सुखदायक है।

दोनोंके मिलने और संयुक्त हो जानेके बाद सामान्य और स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि लम्बे या छोटे अन्तरके पश्चात् पुरुषकी मानसिक तथा शारीरिक उत्तेजना अपनी चरम सीमाको पहुँच जाती है। इसकी निशानी यह है कि पुरुषपर मस्ती-सी छा जाती है और उसका वीर्य क्षरित हो जाता है। जहाँ पति पत्नीकी आपसमें पूर्ण व्यवस्था हो, वहाँ स्त्री भी उसी समय पुरुषके सदृश नाड़ीगत और पेशीगत प्रतिक्रियाओंकी पराकाष्ठा-

को प्राप्त कर लेती है। यह पारस्परिक कामावेग अतीव महत्व-पूर्ण है। परन्तु कई जोड़ोंमें पुरुष अपनी चरम सीमाको इतना शीघ्र पहुँच जाता है कि अभी स्त्रीकी प्रतिक्रियाएँ लगभग तैयार भी नहीं होतीं, और वह इससे वञ्चित रह जाती है*, अर्थात् उसकी चरम धातु अभी क्षरित नहीं होती। यद्यपि कई दम्पति ऐसे होंगे जिनमें पुरुषके क्षरित होनेके पूर्व स्त्री एक या अधिक बार क्षरित हो चुकती है, तथापि कदाचित् इस कथनमें कुछ भी अतिशयोक्ति नहीं कि (मध्यम श्रेणीकी) हमारी विवाहिता स्त्रियोंमें ७० या ८० प्रतिशतक ऐसी हैं जो, पतिकी प्रति-क्रियाओंके बहुत अधिक वेगके कारण, या उनकी जननेन्द्रियोंके सापेक्ष्य आकार तथा स्थितियोंकी ठीक व्यवस्था न होनेके कारण, पूर्ण कामावेगको कभी प्राप्त ही नहीं होतीं—उनका पूर्ण रूपसे कभी क्षरण नहीं होता। स्त्रीकी जटिल काम-वासना तथा इन्द्रियाँ इतनी दुर्ज्ञेय और इतनी छिपी हुई होती हैं कि उनको उत्तेजित करनेमें पुरुष मानों उसके सारे शरीर तथा आत्माको उत्तेजित करता है। और इसमें समय लगता है। जितना समय इसके लिये एक सामान्य और काम-शास्त्रसे अन-भिज्ञ पति देता है, वास्तवमें उससे कहीं अधिक समयकी आव-श्यकता है। फिर भी, स्त्रीके सतहपर एक छोटीसी, चिन्ह-मात्र

* कामवेग, प्रमाण और भाव आदिकी दृष्टिसे रतके अनेक प्रकार हैं। जब इन सबकी समानता हो, तभी समरत होता है। विस्तृत वर्णनके लिये देखो मेरा बनाया "रति विज्ञान"।

इन्द्रिय होती है। इसको क्लिटोरिस* कहते हैं। यह आकारमें पुरुषके लिङ्गके समान होती है, और उसीके सदृश, स्पर्शसे बहुत शीघ्र उत्तेजित हो जाती है। यह छोटासा शृङ्ग, जो योनिके इर्द-गिर्दके भीतरी ओष्ठोंके बीच बाहरकी ओर होता है, स्त्रीके वस्तुतः कामातुर होनेपर बढ़ जाता है, और चेष्टाके उत्तेजनसे यह बहुत अधिक उद्दीपित हो जाता है और उस उद्दीपनका सञ्चार उसके शरीरकी प्रत्येक नाड़ीमें कर देता है। किन्तु स्त्रीकी निद्रित काम-वासनाके जाग उठने और उसकी सत्ताकी सभी जटिल प्रतिक्रियाओंके आरम्भ हो जानेके पश्चात् भी उसकी तृप्तिके लिये दससे बीस मिनटतक वास्तविक शरीर-संयोगका होना आवश्यक है। परन्तु जो पुरुष यह नहीं जानता कि मुझे अपनी प्रतिक्रियाओंका निग्रह करनेकी आवश्यकता है जिससे हम दोनोंको एक ही कालमें क्षरित होनेके लाभका अनुभव हो, वह सुरतमें दो-तीन मिनटसे अधिक नहीं लगाता। कई इन्द्रिय-सम्बन्धी बातें ऐसी हैं जिनके तनिकसा भी अस्वाभाविक होनेपर विशेष डाक्टरी चिकित्साका प्रयोजन होता है। परन्तु अतीव नीरोग पुरुषोंकी द्रुतता—जल्दी—अधिकतर केवल मानसिक अज्ञानके कारण ही होती है, और यदि संकल्प-शक्तिको अविच-

* 'रति रहस्य' में लिखा है कि योनिके बीचमें लिंगके समान एक नाड़ी रहती है। वह काम गतिसे चञ्चल हो जानेके कारण 'मदन गमन दोला' कहलाती है।

देखो "रति विज्ञान" (साहित्य-सदन, लाहौर द्वारा प्रकाशित)

अनुवादक।

लित रूपसे तथा जान-बूझकर इसके दमनमें लगाया जाय, तो यह काबूमें आ सकती है।

कई सदाशय लोग चाहते हैं कि सन्तानोत्पत्तिके सिवा पुरुषको और कभी स्त्री-समागम नहीं करना चाहिये। वे इस क्रियासे सम्बन्ध रखनेवाली असंख्य शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी प्रतिक्रियाओं और संयोगकी सूक्ष्म आध्यात्मिक रससिद्धिकी उपेक्षा करते हैं और इस मतका प्रतिपादन करते हैं कि "सन्तान उत्पन्न करनेके सिवा पुरुषको कभी समागम नहीं करना चाहिये, इस मतके विरोधियोंके पास केवल एक ही युक्ति है, और वह है क्षुधा-स्वार्थपरता।" ("दि वे ऑव गॉड इन मैरिज।")

मैं कहती हूँ, इस बातको समझ लेना चाहिये कि समागमकी पूर्ण क्रियामें त्रिगुणित सिद्धि होती है। यह आध्यात्मिक संयोगके सदृश है और उसको वस्तुतः बढ़ाती है। आत्माकी रचनाओंकी असंख्य ऐसी सूक्ष्मताएँ हैं जो इस रस-सिद्धिमें एक दूसरेके साथ मिलकर एक हो जाती हैं। साथ ही सुरतसे वह अतीव प्रचण्ड दैहिक सुख और हित होता है जिसका कि शरीर अनुभव कर सकता है, और यह सुख तथा लाभ *पारस्परिक* है, स्वार्थपर नहीं। इस महायज्ञमें भाग लेनेवाले दोनोंमें अवर्णनीय सदयता और प्रेमको जितना यह बढ़ाता है उतना और कोई चीज़ नहीं बढ़ाती। तीसरे, असंख्य नरशुक्रकीटोंमेंसे एक कीटकी नारीके गर्भाण्ड (Egg-cell) के साथ विलीनताको सम्भव करके, यही क्रिया एक नवीन जीवनको उत्पन्न करती है।

आजकल बहुधा ऐसा होता है कि, ख़र्चके डरसे और प्रसवसे पत्नीपर पड़नेवाले शारीरिक आयासके डरसे, पति क्षरणसे ठीक पहले लिङ्गको योनिसे बाहर निकाल लेता है, परन्तु ऐसे समयमें निकालता है जब कि वह पहले ही इतना उत्तेजित हो चुका होता है कि क्षरण अपने आप हो जाता है। इस प्रकार वीर्य तो नष्ट हो जाता है, परन्तु, क्योंकि वह पत्नीके शरीरमें प्रवेश नहीं करता, इसलिये गर्भाण्ड हरा नहीं होता, और, फलतः, सन्तानोत्पत्ति नहीं हो सकती। इस कर्मसे स्त्री चाहे अवाञ्छित सन्तान उत्पन्न होनेके कष्टसे तो बच जाय, परन्तु फिर भी यह उसके लिये बहुत हानिकारक है, और त्याज्य है। इस कर्मसे स्त्रीकी उत्तेजना शान्त नहीं होती और वह अतृप्त रह जाती है। इसलिये इसका, विशेषतः यदि यह बहुत बार किया जाय तो, उसकी नाड़ियों तथा सामान्य स्वास्थ्यपर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। स्त्रीको पुरुषके स्रावका कुछ अंश योनिकी भीतरी त्वचाद्वारा सोख लेनेसे जो लाभ होता है (और मुझे निश्चय है कि इससे बहुत अधिक शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी लाभ होता है) उससे वह वञ्चित रह जाती है। यदि, जैसा कि शरीर-विज्ञानने पहले ही प्रमाणित कर दिया है, जननेन्द्रियोंसे निकलनेवाले स्रावोंको भीतर सोखनेका शरीरके दूरस्थ अवयवोंके स्वास्थ्य तथा गुणपर इतना भारी प्रभाव पड़ता है, तो यह बहुत ही संभव है कि पुरुषके वीर्यके साथ निकलनेवाले अत्युत्तेजक स्राव स्त्रीके समस्त शरीरमें प्रवेश कर सकते और करते हैं और प्रभाव डालते

हैं। वास्तविक प्रयोगद्वारा सिद्ध हुआ है कि आयोडीनको घोल-कर यदि योनिमें रख दिया जाय तो भीतरकी सूक्ष्मत्वचा उसे इतनी शीघ्रतासे सोख लेती है कि एक घण्टेमें वह शरीरमें केवल प्रविष्ट ही नहीं हो जाती वरन् उसमेंसे निःसृत होने लगती है। अभीतक ऐसे वैज्ञानिक प्रयोग नहीं निकले जो हमें वीर्य्यके द्रवसे निकलनेवाले भिन्न भिन्न पदार्थोंको सोखनेके प्रभावोंका अध्ययन करनेमें समर्थ बना सकें। प्रास्टेटिक स्रावोंके प्रभावोंके सम्बन्धमें सर डब्ल्यू अर्बथनाट लेनके पर्यवेक्षण, जो उन्होंने मुझे इस पुस्तकके पहले संस्करणोंके प्रकाशित होनेके पश्चात् बताए थे, मेरे मतकी इतनी अधिक पुष्टि करते और विश्वास दिलाते हैं कि स्त्रियाँ पुरुषके क्षरणके कुछ उपादानोंको *अवश्य* सोखती हैं और उनसे उनको लाभ भी होता है। इसके विपरीत, लिङ्गको चटपट निकालकर बाहर क्षरित करना पुरुषके लिये सदा हानिकारक नहीं, क्योंकि उसकी सुरत-क्रिया तो पूर्ण हो जाती है, यद्यपि कई पुरुष यह समझते हैं कि उनपर इसके अवा-ञ्छनीय प्रभाव पड़ते हैं। इससे पत्नीके प्रति पतिकी कामनाके न रहने या पतिके नपुंसक हो जानेका डर है। इसमें नाड़ीगत तनावके पूरी तरहसे शान्त न होनेके कारण बहुत शीघ्र ही पुरुष-में फिर काम-वासना उत्तेजित हो सकती है। परिणामोंसे बचनेके लिये जब यह कर्म पुरुषको बार बार मैथुन करनेका प्रलोभन देता है तो यह निश्चत रूपसे बुरा है, क्योंकि जो शक्ति *उत्पादन-क्षम* हो सकती है उसको इस प्रकार व्यर्थ बखेरना अपनी जीवनी

शक्ति तथा कार्य करनेकी शक्तिको घटाना है। जो लोग अपने वीर्यके मूल्यको समझते हैं, और जो इसका नाश किए बिना पारस्परिक सुख और संयोगकी वृद्धि जानना चाहते हैं, उन्हें इस विधिका कभी अभ्यास नहीं करना चाहिये।

इस बातको कभी न भूलना चाहिये कि आत्म-संयमके अभ्यास-के बिना कभी भी सुरतमें चिरस्थायी सुख नहीं मिल सकता। सर्वथा शारीरिक अर्थोंमें भी पूर्ण आनन्द केवल उन्हींको प्राप्त हो सकता है जो अपने प्राकृतिक आवेगका नियन्त्रण और पथ-दर्शन करते हैं।

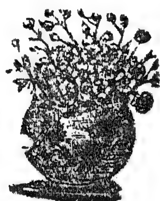
इस सम्बन्धमें डाक्टर सेलबीके शब्द उपयुक्त हैं (फ़ोरल प्रणीत 'सैक्षुएल एथिक्स' की भूमिका १६१८):—प्रोफ़ेसर फ़ोरल काम-वासनाका निग्रह करनेको कहता है। "मैं इसका रूपान्तर करनेको कहता हूं। सीधे तौरपर आक्रमण करना प्रायः व्यर्थ होता है; उसमें प्रयत्नकी सदा कमी रहती है; परन्तु अपनी मैथुन-शक्ति—वीर्य्य—को अपने व्यक्तिगत जीवनके उच्चतर रूपोंमें परिणत कर देना हमारे लिए सम्भव है। इस प्रकार इस विकास तथा शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी विवादका प्रतिपादन हो जाता है, कि मनुष्यकी उच्चतर चेष्टाओं, नैतिक अमर्ष, और 'चञ्चल शक्ति' के स्रोतने ही पृथिवीतलको परिवर्तित किया है।"

फ़ोरल कहता है ("दि सैक्षुएल क्वेश्चन" १६०८)—"आजन्म संयोगमें सम्बद्ध होनेके पूर्व, युवक और युवतीको एक दूसरे-के सामने अपने काम-वासना-सम्बन्धी भावोंको प्रकट कर देना

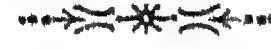
चाहिये, जिससे वे बादको धोखे और विसदृशतासे बचे रहें।"
यह उपदेश बड़ा ही प्रशंसनीय है यदि कुमारी कन्याके लिए अपने मन तथा शरीरपर सुरत-क्रियाके परिणामों तथा प्रतिक्रियाओंके विषयमें बहुत कुछ जानना सम्भव हो। परन्तु इस सम्बन्धमें वह कुछ भी नहीं जानती। वह इसे ही एक सम्पूर्ण नियम मानती है कि जबतक पुरुषके हाथका उसके हाथके साथ स्पर्श और उसके ओष्ठोंका संसर्ग उसे मधुर और स्वादिष्ट न जान पड़े, तबतक वह पुरुष कभी भी सच्चा पति नहीं हो सकता। यह आवश्यक है कि जो दो व्यक्ति जीवनभरके लिए मिलकर एक होनेको हैं वे, क्या विवाहके पूर्व और क्या पश्चात्, एक दूसरेपर अपने भावों तथा कामनाओंका एक कोमल तथा भद्र भाषामें सरलताके साथ प्रकाश कर दें। उत्सुक तथा समझदार जोड़ोंको वस्तुतः एक दूसरेको पूर्ण रूपसे समझने और विवाहके बहुत अधिक गम्भीर शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी तथा आध्यात्मिक परिणामोंके विस्तार तथा अर्थको मालूम करनेमें बहुधा कई वर्ष लग जाते हैं। परन्तु यह सत्य है कि आरम्भमें ही सरलता-पूर्वक सब कुछ कह देनेसे दोनों बहुतसे क्लेशोंसे बच सकते हैं, विशेषतः उस समय, जैसा कि बहुधा होता है, जब दम्पतिमेंसे एक सन्तान न उत्पन्न करनेका गुप्त संकल्प लेकर विवाह करता है।

व्यक्तियोंके रूपमें हम सब इतने नानाविध हैं, समागमकी सब प्रतिक्रियाएँ तथा अन्तःक्रियाएँ इतनी जटिल हैं कि (इस विषयमें) कोई भी दृढ़ और अपरिवर्तनीय नियम नहीं बनाया जा

सकता। विवाहके बाद प्रत्येक दम्पतिको अपने आपका अध्ययन करना चाहिये और पति-पत्नीको वे बातें अवश्य जाननी चाहिये जो उन दोनोंको काम देती हैं और जिनसे उनको अधिकसे अधिक पारस्परिक आनन्द तथा शक्ति मिलती है। किन्तु, कुछ ऐसे नियम हैं जिनको कभी भी तोड़ना नहीं चाहिये। उनका सविस्तर वर्णन अगले पृष्ठोंमें मिलेगा। उनका थोड़े शब्दोंमें निचोड़ है—"पत्नीका पति कोई अमङ्गल नहीं करता।"



छठवाँ अध्याय



निद्रा

वह अपनी कान्ताको निद्रा देता है।

निद्राकी उपशमकारिणी मायासे प्रायः सब ही परिचित हैं। नींदका न आना प्रकृतिके इतने भिन्न भिन्न नियमों-को तोड़नेका दण्ड है कि मनुष्य-समाजमें जो संख्यातीत दुःख बहुत अधिक पाए जाते हैं उनमेंसे कदाचित् एक यह है। मानवी शरीर-विज्ञानके विशेषज्ञोंने निद्रा तथा निद्राभावके अनेक रूपों-पर तो बहुत ध्यान दिया है, परन्तु निद्रा तथा सुरतके बीच जो सम्बन्ध है उसका लोगोंको बहुत कम ज्ञान है। तो भी स्वाभाविक रूपसे शरीरको स्वस्थ करनेवाली शयन-शक्तिका साङ्गोपाङ्ग सुरत-क्रियाके अनन्तर ताज़गी पैदा करनेवाली शक्तिके बीच एक घनिष्ठ सम्बन्ध है।

सामान्यतया नीरोग पुरुषमें हम इस शक्तिका प्रभाव बहुत स्पष्ट रूपसे देखते हैं। यदि, किसी कारणसे, उसे पत्नीके साथ भौतिक संयोगके लिये प्रचण्ड उत्तेजना उत्पन्न हो जानेके पश्चात् कुछ कालतक अतृप्त रहना पड़े, तो इस बीचमें उसे नींद बहुत कम आती है। वह अशान्त सा रहता है और उसकी नाड़ियाँ तनी हुई सी रहती हैं।

जब प्रणय-क्रीड़ाके बाद, बढ़ती हुई वासना फैल जाती है,

यहाँतक कि सुरतकी सशब्द पूर्णताके साथ काम-वासनाका हर्षावेश समाप्त हो जाता है, तब चटपट सारे शरीरका तनाव ढीला पड़ जाता है और उसके पट्ठे शिथिल परन्तु शान्ति सी प्राप्त करके मुलायम तथा ढीलेसे हो जाते हैं। और कुछ ही समयमें वह पुरुष नींदके खुर्राटे लेने लगता है।

यह उत्कृष्ट तथा श्रमहारिणी निद्रा विस्मृतिकी कोमल यवनिकाके समान गिरती और पुरुष-चेतनाकी बहुत बड़ी निराशा तथा कर्कशतासे रक्षा करती है। परन्तु हर्षावेशके उत्साहपूर्ण आयासके बाद यह निद्रा केवल स्वास्थ्य-विधायक ही नहीं, वरन् इसमें तरोताज़ा करनेकी भी शक्तियाँ हैं, और कई पुरुष अनुभव करते हैं कि ऐसी निद्राके बाद हमारे सारे शरीरमें नवजीवनका सञ्चार सा होने लगता है।

परन्तु इस कामसे स्त्रियोंकी क्या दशा होती है? जहाँ उनकी भी पूर्ण रूपसे तृप्त हो जाती है वहाँ वे भी उसी प्रकारसे ढीली और निःसत्व सी होकर सो जाती हैं।

परंतु जैसी दशा आजकल है, इस कथनमें कुछ भी अतिशयोक्ति नहीं कि अधिकांश स्त्रियाँ उनींदी सी रहती हैं। उनकी नाड़ियोंका तनाव और दर्द शान्त नहीं होता। वे बेचारी गहरी नींदमें सोए हुए पतियोंको, या तो जैसे माता सोए हुए बालकको मृदुभावसे देखती है वैसे देखती हैं, या कटु और जीमें जलन उत्पन्न करनेवाली ईर्ष्याके साथ उनपर दृष्टिपात करती हैं—उन्हें हसरतकी नज़रसे देखती हैं। ये पति अज्ञान अथवा

असावधानीके कारण इस बातका ध्यान नहीं रखते कि पत्नियोंके भी नाड़ीगत तनावको ढीला करनेकी आवश्यकता है।

अनेक विवाहिता स्त्रियोंने मुझे बताया है कि पतियोंके साथ संयोग हो चुकनेके बाद हम, कभी तो कुछ घंटे, और कभी सारी रात ही, अशान्त रहती हैं। मुझे दृढ़ विश्वास है कि प्रत्येक संयोगमें पतियोंका पत्नियोंमें पूर्ण रूपसे कामका उत्तेजन न कर सकना ही बहुतसी विवाहिता स्त्रियोंमें निद्राभाव और नाड़ी-गत रोगोंका एक बहुत सामान्य कारण है।

स्त्रीकी सुरत-क्रिया-सम्बन्धी पूर्णता और निद्राके बीच जो सम्बन्ध है, वह श्रीमती क० की अवस्थासे भलीभाँति स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि वह पत्नियोंकी एक बहुत बड़ी श्रेणीका नमूना है। उसने एक ऐसे पुरुषसे विवाह किया जिसे वह बहुत ही प्रेम करती थी। न उस स्त्रीने किसी दूसरे पुरुषसे, और न उसके पुरुषने किसी दूसरी स्त्रीसे समागम किया था। वे दोनों बड़े समझदार और प्रखर बुद्धिवाले थे। उनको जीव-शास्त्रका भी कुछ ज्ञान था। परन्तु उनमेंसे कोई भी सुरत-क्रियाकी छोटी छोटी बातोंको नहीं जानता था। कई वर्षतक वे मैथुन करते रहे। उन संयोगोंमें पतिकी कुछ तृप्ति हो जाती थी और उसके झट ही बाद वह सो जाता था। पति-पत्नीको यह ज्ञान नहीं था कि स्त्रियोंको भी क्षरित होना चाहिये। प्रत्येक संयोगके बाद वह अतृप्त सी रह जाती थी। कई घंटोंतक उसे नींद ही न आती। बहुधा वह रातभर जागती ही रहती थी।

पतिकी मृत्युके बाद उसका स्वास्थ्य सुधरा और एक या दो वर्षके बाद उसने पुनर्विवाह कर लिया। उसका यह नया पति स्त्रियोंकी आवश्यकताओंको जानता था और उनपर पर्याप्त ध्यान तथा समय देता था ताकि उसके अपने लिए तथा पत्नीके लिए सुरत-क्रिया पूर्ण हो जाय। इसका परिणाम यह हुआ कि शीघ्र ही पत्नीको खूब नींद आने लगी, जिससे उसका स्वास्थ्य बहुत अच्छा हो गया।

निद्रा एक ऐसी जटिल क्रिया, और नींदका न आना इतनी भिन्न भिन्न अननुकूलताओंका परिणाम है, कि यह सम्भव हो सकता है कि स्त्री, पूर्ण संयोगसे मिलनेवाले विश्राम तथा सुखसे वञ्चित होनेपर भी, अच्छी तरह सोए। परन्तु इतनी विवाहिता स्त्रियोंमें नींदके न आने और उसके फल-स्वरूप नाड़ीगत दशाका कारण सुरत-क्रियाकी पूर्णताका अभाव है कि वैद्यको अपने उन स्त्री-रोगियोंसे, जो दुर्बल हों और जिन्हें नींद न आती हो, पहले यह प्रश्न पूछना चाहिये—क्या तुम्हारा पति शारीरिक सम्बन्धमें वस्तुतः अपने पति-धर्म्मको पूरा करता है?

उनके प्रकाशित आवेदनों, और उनकी मेरे सामने स्वीकार की हुई बातोंसे यह प्रतीत होता है कि बहुतसे डाक्टरोंको या तो स्त्रियोंमें कामावेग और क्षरणके अस्तित्वका ज्ञान ही नहीं, या वे इसको एक प्रयोजनाधिक तथा आकस्मिक घटना समझते हैं। तो भी किसी समयमें कमसे कम कामावेग तथा क्षरणकी एक परिमित संख्याका होना, स्त्रीके स्वास्थ्य तथा उसकी समस्त शक्तियोंके पूर्ण विकासके लिए आवश्यक है।

क्योंकि यह पुस्तक विवाहित लोगोंके लिए लिखी गई है; इसलिये जो अभी अविवाहित हैं उनके जीवनोंके विषयमें मैं यहाँ कुछ नहीं कहती, यद्यपि, विशेषतः तीस वर्षकी आयुको पहुँचनेके बाद वे बड़े ही कठिन हो जाते हैं और उनके अध्ययन तथा विचारका बड़ा प्रयोजन होता है। परन्तु यह बात भी ज्ञातव्य है कि ऐसी स्त्रियोंमें, जिनका कभी पूर्ण रूपसे क्षरण नहीं हुआ या जिनकी काम-वासना कभी पूर्ण रूपसे तृप्त नहीं हुई, उनमें नींद न आनेका रोग कितना फैल रहा है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि स्वाभाविक रूपसे पूर्ण कामावेगका सर्वथा अभाव उन अनेक कारणोंमेंसे एक है जिससे अनेक मध्यम आयुकी अविवाहित स्त्रियोंको नींद नहीं आती और वे बहुत जल्दी घबरा जाती हैं।

तो भी अविवाहिता स्त्रीके लिए यह अभाव इतना दुःख-दायक नहीं जितना कि यह उस विवाहिता स्त्रीके लिए है जिसकी काम-वासनाके प्रत्यक्ष रूपसे उत्तेजित हो जानेके बाद उसकी प्राकृतिक पूर्ति नहीं होती। एक अविवाहिता स्त्रीमें, जब-तक वह किसी विशेष पुरुषपर आसक्त न हो, उत्पादनक्षम शक्तिके प्राकृतिक उफानके अतिरिक्त, उसकी काम-वासनाको उभारनेवाला कोई निश्चित उत्तेजन नहीं होता। परन्तु विवा-हिता स्त्री न केवल अपने पतिकी उपस्थितिमें सविस्तर रूपसे आन्दोलित हो जाती है, वरन् उसके साथ अपने सम्बन्धसे भी प्रखर रूपसे स्थानीय तथा शारीरिक रूपसे उत्तेजित होती है।

अब यदि उस समय वह अतृप्त रह जाय, तो उसकी दशा अविवाहितासे भी कहीं अधिक बुरी होती है।

यदि पतिकी उपेक्षाके कारण पत्नी उनींदी रह जाय और पति उसके पास लेटा हुआ खुर्राटे ले रहा हो, तो आश्चर्य नहीं कि स्त्री उन लम्बे घंटोंको अपनी पारस्परिक स्थितिकी आलोचना-में व्यतीत करे। इस आलोचनामें उसे अधिक सुख या सन्तोष नहीं मिल सकता। क्योंकि, पारस्परिक कामावेग तथा क्षरणसे मिलनेवाले शारीरिक सुख तथा आरोग्यवर्द्धक लाभसे वञ्चित होकर (यद्यपि, अनेक दूसरी पत्नियोंके सदृश जो कुछ यह दे सकता है उस सारेका कुछ भी ज्ञान न रखती हुई) वह सम्भोग-को एक ऐसी चीज़ समझती है जिससे आनन्द, विश्राम, और उसके पश्चात् नींद, सब पतिको ही मिलती है, और वह स्वयं उसके भोगका एक अकर्मक साधनमात्र होती है। इतना ही नहीं, यदि प्रत्येक संयोगके बाद उसे कई कई घण्टे जागती रहना पड़े, तो वह स्पष्ट देखती है कि स्वास्थ्यको बिगाड़कर पति अपना उल्लू सीधा करता है, और इस सुरत-क्रियामें मैं केवल अकर्मक ही नहीं, वरन् मेरा सकर्मक रूपसे दुरुपयोग किया जाता है।

अपूर्ण सुरत-क्रियाका एक और परिणाम यह होता है कि बहुधा, प्रारम्भिक कामोद्दीपनके कारण (जिसके पूरे उद्देश्यका ज्ञान कदाचित् उसे न हो) क्षुब्ध होनेसे जब उन्निद्रता तथा उत्फुल्लता उत्पन्न हो जाती है, तब रसिक तथा विचारशील स्त्री

मृदु तथा गूढ़ बातें करनेमें—ऐसी बातें कहनेमें जिनको वह अपने हृदयमें छिपाकर रखती है—समर्थ हो जाती है। इस समय पतिके उसकी बातोंपर ध्यान न देनेसे उसके हृदयपर भारी आघात होता है, क्योंकि, कुछ ही देर पहले जो इतनी उत्सुकता-पूर्वक उसपर प्रेम दिखला रहा था अब वही इतना कठोर देख पड़ता है। इससे पति उसे विवाहके उच्चतम पक्ष—आध्यात्मिक तथा अद्भुत समागम—के प्रति उदासीन सा मालूम होने लगता है। इस प्रकार अपनी प्रेमवार्तामें पुरुषको सोता देख, हो सकता है कि, वह उसे एक गर्ह्य और अनवधान पशु समझने लगे। और इन सब बातोंका कारण यह है कि उसे कभी अपने शारीरिक तनावकी पराकाष्ठा—कामावेग तथा पूर्ण क्षरण—का अनुभव नहीं हुआ, और वह नहीं जानती कि इसकी स्वाभाविक प्रतिक्रिया नींद होती है।

कोमलसे कोमल और अति प्रेम करनेवाली स्त्रीके लिए भी ये विचार इतने उद्वेगजनक, और ख़ासकर उसके लिए जिसके पास शिकायतके और भी कारण हों इतने कटु होते हैं, कि समयानुसार वे सारे शरीरपर प्रभाव डालते और केवल उन्निद्रतासे होनेवाली हानिको बढ़ा देते हैं।

पुराने सम्प्रदायोंके शरीर-शास्त्रियोंकी विधियाँ इतनी भद्दी थीं कि उनसे हमारे विचारोंके शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी परिणामोंका पता नहीं लगता था। परन्तु अब यह मानी हुई बात है कि क्रोध और कटुताके शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी प्रभाव इतने स्पष्ट

होते हैं कि वे प्रयोगोंद्वारा पहचाने जा सकते हैं, और सारे शरीरके लिए हानिकारक होते हैं।

यह देखनेके लिए थोड़ी सी कल्पना-शक्तिकी आवश्यकता है कि ऐसी कड़वी उन्निद्र अवस्थाके मासों तथा वर्षोंके पश्चात्, स्त्रीको न केवल नाड़ीगत दुर्बलताका रोग हो जानेका, वरन् पतिके प्रति कर्कश तथा रूखे स्वभाववाली हो जानेका भी डर रहता है। सम्भवतः वह अपने शरीर-विज्ञानके सम्बन्धमें इतने अधिक अज्ञानमें होती है और उसका इतना कम पर्यवेक्षण करती है कि जो कुछ हो रहा है उसके पूर्ण अभिप्रायका उसे ज्ञान नहीं होता। वह अनिश्चित रूपसे अनुभव करती है कि इसमें पतिका ही दोष है, और समझती है कि उस चीज़के लिये जो, पुरुषके शरीर-शास्त्रके विषयमें अपने और भी अधिक अज्ञानके कारण, उसे पतिका सुख तथा आत्मासक्ति प्रतीत होती है, मेरी बलि दी जा रही है।

पुरुषका स्वास्थ्य उसके प्राकृतिक निकास और उसके बाद आनेवाली आरोग्यकारी निद्रासे बना रहता है। इसलिए यह अधिक सम्भव नहीं कि वह उन अव्याख्येय क्षुद्र अपकारों तथा अनिश्चित दूषणोंकी तमसावृत और विषादमय अवस्था देखनेको तैयार हो, जो पत्नीके उन शारीरिक क्लेशोंका प्रकाशमात्र होते हैं जिनको वह भलीभाँति स्पष्ट नहीं करती। इसलिये अधिक सम्भव यही है कि पत्नी जो भी प्रकोप प्रकट करे उसे पति "झगड़ालूपन" की 'सनक' समझकर दबानेका यत्न करे; पहले वह

उसकी बाह्य रूपसे अयुक्ति-सङ्गत शिकायतोंके प्रति उद्विग्न, और फिर अधीर हो जाय।

यदि वह, जैसे कि बहुतसे पुरुष होते हैं, सहृदय और विवेकवान् है, तो वह, समागमके समयोंकी संख्याको उस सीमातक कम करके जहाँतक कि उसके लिये सर्वथा आवश्यक है, बखेड़ोंको शान्त करनेका यत्न करेगा। इस प्रकार अज्ञानतः वह इस मामलेको और भी अधिक तूल देता है, क्योंकि, साधारणतः, वह अपनी पत्नीकी मदन-तरङ्गसे बिलकुल अनभिज्ञ होता है, इसलिए वह ऐसी व्यवस्था नहीं करता जिससे उसका पत्नीके साथ संयोगका समय, चाहे वह संयोग बहुत कम बार होता हो, वही हो जो मदन-तरङ्गके चढ़ावका समय है। अब वह सम्भवतः अलग कमरेमें सोता है और रात्रिको प्रेमालाप और लाड़प्यार करनेके लिए, जो कि विवाहका एक मुख्य अधिकार है, नहीं आता। इसलिये उसके सदाशयसे, परन्तु ग़लत रास्तेपर, किये हुए आत्म-संयमके प्रयत्न दम्पतिको एक दूसरेसे और भी अधिक दूरीपर पहुँचा देनेके साधन बनते हैं। निद्राके सम्बन्धमें अपने विचारकी उपयुक्तताको स्पष्ट करनेके लिये उन अतीव गम्भीर प्रभावोंमेंसे कुछ एकका उल्लेख कर देना आवश्यक है जो अब मालूम हुआ है कि काम-वासना डालती है, चाहे उस समय वह अपने निर्दिष्ट उपयोगके लिए उद्दीपित न भी हो।

जो लोग, विशेषतः बाल्यावस्थामें, अपनी जननेन्द्रियोंसे वञ्चित कर दिये जाते हैं, उनमें शरीरकी कोई दूसरी विशेषताए

तथा इन्द्रियाँ अस्वाभाविक रूपसे बढ़ जाती या प्रकट ही नहीं हो सकती हैं। बधिया किए हुए लड़के (कंचुकी) के, बड़ा होनेपर, या तो दाढ़ी-मूँछ उगती ही नहीं, यदि उगती है तो बहुत थोड़ी। उनका कण्ठ-स्वर बहुत ऊँचा हो जाता है और ऐसी ही अन्य कई विशेषताएँ प्रकट हो जाती हैं जो उनको स्वाभाविक पुरुषोंसे अलग करती हैं।

जननेन्द्रियोंसे इतनी दूरस्थ इन्द्रियों तथा रचनाओंकी उदाहरणार्थ कण्ठ-नालीकी, वृद्धिपर जननेन्द्रियों और उनकी सहायक गिल्टियोंसे निकले हुए स्रावोंके रासायनिक उत्तेजनका प्रभाव देखा गया है। ये स्राव बाहरी नालियोंद्वारा बाहर नहीं निकल जाते वरन् सीधे रुधिरमें प्रविष्ट हो जाते हैं। ऐसे स्राव जो नाली-रहित गिल्टियोंसे सीधे शिराओंमें चले जाते हैं हमारे प्रायः सभी शारीरिक व्यापारोंके लिए बड़े ही महत्वके हैं। उनका हालमें अध्ययन किया गया है,और स्टार्लिंग महाशय*ने उनको होर्मोनस (Hormones) का व्यापक नाम दिया है। शरीरकी प्रत्येक भीतरी इन्द्रियके साथ किन्हीं विशेष स्रावों या रसों ("ह्यूमरों") का सम्बन्ध है, यह विचार बहुत पुराना है। परन्तु अभीतक हमें इन सूक्ष्म रासायनिक पदार्थोंद्वारा किये जानेवाले अनेक चमत्कारोंमेंसे कुछ एकका ही केवल बहुत ही अनिश्चित और बहुत ही प्रारम्भिक ज्ञान है। इस प्रकार हम देखते हैं कि पका-

* प्रोफ़ेसर Prof. Ernest H. Starlings, Croonian Lecture to the Royal Society, 1905.

शयमें भोजनका प्रवृत्ति-कारण पाचक-प्रणालीमें एक नाली-रहित गिलटीसे एक रासायनिक पदार्थ, रुधिरमेंसे दौड़ता हुआ, एक दूसरी गिलटीके पास भेजता है, जो आगे एक भिन्न पाचक स्राव तैयार करती है। हम जानते हैं कि गर्दनमें थाइरायड गिलटीके फूलने तथा सिकुड़नेका जननेन्द्रियोंके साथ बहुत ही सूक्ष्म तथा गहरा सम्बन्ध है; हम यह भी जानते हैं कि बढ़ते हुए भ्रूणसे, या जिस कोश-समूहमें वह बढ़ता है उससे, निकलनेवाला कोई रासायनिक स्राव माताके सुदूर स्तनोंको अपना रासायनिक उत्तेजन भेजता है, यदि किसी लड़कीके बीजाधार (ओवरी) या लड़केके अण्डकोश (टॅस्टीज़) पूर्णतया काट डाले जायँ, तो वे दूरतक पहुँचनेवाले प्रभाव, जो उनसे निकलनेवाले स्राव डालते थे, उनके अभावसे शरीरमें उत्पन्न होनेवाले नाना परिवर्तनों और अस्वाभाविकताओंसे, प्रत्यक्ष हो जाते हैं।

परन्तु हम नहीं जानते, क्योंकि शरीर-शास्त्रियोंने अभी इसका अध्ययन नहीं किया, कि जननेन्द्रियोंकी गिलटियोंपर मैथुन और अनुभवके अमित उत्तेजनका कितना और कैसा प्रभाव पड़ता है, या वे कैसे मनुष्यके सम्पूर्ण जीवन और शक्तियोंको प्रभावित करते हैं।

'मण्डलियन' और 'म्यूटेशन' सम्प्रदायोंवाले जो आकार-शास्त्र-सम्बन्धी (मारफालोजीकल) परम्परागत घटकोंपर इतना अधिक बल देते हैं (मेरे विचारसे उनका इस आशयपर इतना बल देना उचित नहीं), इस समय जनताका ध्यान शरीर-शास्त्र-

योंकी अपेक्षा अपनी ओर अधिक आकृष्ट कर रहे हैं। परन्तु यह बड़ी आवश्यक बात है कि प्रत्येक युवक और युवतीको यह ज्ञात हो कि नाना रासायनिक पदार्थों या "दूतों" (जिनको स्टार्लिंग 'होरमोनस' कहता है) के द्वारा, एक या दूसरी भीतरी इन्द्रियपर पड़नेवाले प्रभावोंके कारण, शरीरके दूरस्थ भागोंमें स्थित इन्द्रियों-के व्यापारोंपर अत्यन्त द्रुत, प्रायः तात्कालिक, असर होता है।

इसलिये यह स्पष्ट है कि ऐसी गम्भीर रूपसे महत्वपूर्ण इन्द्रियोंपर, जैसी कि मैथुनसे सम्बन्ध रखनेवाली इन्द्रियाँ हैं, प्रभावोंके पड़नेसे अनेक अचिन्तित क्षेत्रोंमें बहुत दूरतक पहुँचने-वाले परिणामोंका होना अवश्यम्भावी है।

पूर्ण रूपसे सम्पन्न हुई सुरत-क्रियाके परिणामस्वरूप नारी-शरीरमें क्या क्रिया होती है?

यह सत्य है कि स्त्रीमें मैथुनसे केवल बहुत थोड़ा, और वह भी मुख्यतः क्लेद्का, बाह्य स्राव होता है। परन्तु पाचन-क्रियामें और पाचक रसोंकी उत्पत्तिमें जो जटिल क्रियाए तथा प्रतिक्रियाएँ होती हैं, हमारे पास उन सबका कोई भी बाह्य चिन्ह नहीं। जब, जैसा कि अतीव कामावेगके बाद चरम धातुके क्षरणकी दशामें होता है, प्रचण्ड और स्फुट नाड़ीगत, शिरागत और स्नायुगत प्रतिक्रियाए हों, तो वहाँ उनके अनुरूप गम्भीर भीतरी अन्योन्य सम्बन्धोंका होना अवश्यम्भावी है।

क्या इस बातकी कल्पना की जा सकती है कि ऐसी मौलिक रूपसे स्थित इन्द्रियाँ, जिनका केवल अस्तित्व ही स्त्रयोंके

व्यक्तिगत चरित्रोंको प्रभावित करता है, प्रचण्ड आदिम उत्तेजन तथा क्षरणके तीक्ष्ण अनुभवसे शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी परिणामों-से बच सकती हैं ?

इस प्रश्नका पूछना ही इसका उत्तर देना है। मेरा मन इस बातकी कल्पना भी नहीं कर सकता कि पुरुषके सदृश स्त्रीमें कामावेगके बाद होनेवाले क्षरणसे गम्भीर शरीर-विज्ञाम-सम्बन्धी प्रभाव न हों। यदि हमें इस विषयका पर्याप्त ज्ञान हो तो आधु-निक स्त्रीके "मज्जातन्तुगत ध्वंस" और ज्ञानतन्तुगत रोगोंके प्रति झुकावका कारण मैथुनका पूर्ण रूपसे उत्तेजित न होना ही है और फलतः उसकी स्वाभाविक पूर्तिका अभाव, जो आधुनिक विवाहोंमें बहुत अधिक देखा जाता है, प्रत्यक्ष रूपसे समझा जा सकता है।

यह विषय और इसकी बहुसंख्यक शाखाएँ इस योग्य हैं कि अतीव उच्च कोटिके सधे हुए शरीर-शास्त्री उनका सावधानीके साथ अनुसन्धान करें। समष्टि रूपसे आधुनिक मनुष्य-समाजके लिए रतिके स्वरूप तथा स्त्रियों और पुरुषोंकी रति-सम्बन्धी आवश्यकताओंको समझनेकी अपेक्षा और कोई भी दूसरी बात अधिक गम्भीर या अधिक महत्वपूर्ण नहीं है।

केवल एक सूचनाके तौरपरसे मैं यह बता दूँ कि पुरुषकी जननेन्द्रियाँ *बाहरी* और *भीतरी* दोनों प्रकारके स्राव उत्पन्न करती हैं। बाहरी स्राव तो उनको उत्पन्न करनेवाली गिलटियोंको एक नियत उत्तेजनके होनेपर ही छोड़ते हैं; भीतरी स्राव थोड़ी

थोड़ी मात्रामें सतत रूपसे होते रहते हैं और सदा सारे शरीरमें प्रवेश करके उसे प्रभावित करते मालूम होते हैं। हम जानते हैं कि स्त्रियोंमें भी इनके अनुरूप सतत भीतरी स्राव हैं जो केवल सारी सुरत-क्रियाके नियत उत्तेजनसे ही छूटते हैं।

अँगरेज़ और अमेरिकन लोगोंमें, जो अनेक बातोंमें संसारके अगुआ हैं, ऐसी विवाहिता स्त्रियोंका एक अभूतपूर्व उच्च अनुपात है जो, यद्यपि सन्तान उत्पन्न करती हैं और प्रत्येक दूसरी दृष्टिसे गृहस्थका जीवन सुखपूर्वक व्यतीत करती प्रतीत होती हैं, परन्तु अपने पतियोंके साथ शारीरिक संयोगसे पूरी तरह तृप्त नहीं हो पातीं।

इस देशकी सभ्य स्त्रियाँ इतनी जल्दी घबरा जाती हैं कि उनपर अनोखी कहावतें भी गढ़ी गई हैं। इसका कारण क्या है?

मुझे निश्चय है कि इस क्लेशका एक बड़ा कारण पूर्ण सुरत-क्रियाके न केवल भीतरी शरीर-विज्ञानके सम्बन्धमें, वरन् बाहरी रूपके विषयमें भी, पुरुषों और स्त्रियों दोनोंकी *अज्ञता* है।

अनेक डाक्टर अब इस बातको स्वीकार करते हैं कि स्त्रियोंमें स्वाभाविक या उत्तेजित काम-वासनाकी शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी अतृप्ति बहुसंख्यक नाड़ीगत तथा अन्य रोग उत्पन्न कर देती है। ऐलिस एक आस्टरियन स्त्री-रोग चिकित्सककी सम्मति उद्धृत करता है *। वह चिकित्सक कहता है कि "गर्भाशय-

* H. Ellis, "Sex in Relation to Society," 1919, P. 551.

सम्बन्धी रोगोंवाली प्रत्येक सौ स्त्रियोंमें जो मेरे पास आईं, सत्तरको गर्भाशयमें लहूके जम जानेकी तक्लीफ (Congestion of the womb) थी, जिसका कारण मैं अधूरा मैथुन ही समझता हूं।" ब्रिटिश मैडिकल जर्नल † की एक हालकी संख्यामें एक लेखकने कई ऐसे रोगियोंके वृत्तान्त लिखे हैं जिनमें पत्नियोंको सर्वथा शोचनीय मज्जातन्तुगत व्याधियाँ उनके पतियोंका बहुत शीघ्र क्षरित हो जानेका रोग दूर कर देनेपर अपने आप शान्त हो गईं।

निद्रा, जिसके साथ मैंने इस अध्यायका प्रारम्भ किया था, मैथुनकी प्रतिक्रियाओंके साथ घनिष्ट सम्बन्ध रखनेवाली और आन्तरिक क्रियाओंके असंख्य लक्षणोंमेंसे केवल एक है। जब सुरत-क्रिया, प्रत्येक भावसे, ठीक तौरपर सम्पन्नकी जाती है, तो निद्रा देवी पुरुष और उसके बाहु-पाशमें पड़ी हुई स्त्री,दोनोंको आरोग्य दान करती है। उनके शरीरोंकी प्रत्येक इन्द्रिय प्रभावित और उत्तेजित होकर अपना कार्य करती है, और उनकी आत्माएँ आनन्दकी उच्चतम उँचाइयोंपर पहुँचनेके पश्चात् शनैः शनैः बहती हुई विस्मरणमें पहुँच जाती हैं। और वहाँसे फिर धीरे धीरे दैनिक चेतनाके साधारण मैदानमें उतर आती हैं।

---

† देखो Porosy, 'British Medical Journal', April 1, 1911 P. 784.

सातवाँ अध्याय



विनय और रसिकता

कोई व्यक्ति प्रेम करने अथवा प्रेम न करनेका उतना नपा-तुला वचन नहीं दे सकता जितना कि वह चिरकालतक जीते रहनेका वचन दे सकता है। हाँ, वह केवल अपने जीवन तथा अपनी प्रियतमाके बहुत खयाल रखनेका वचन ज़रूर दे सकता है।— एल्लन की।

शिल्पियोंने स्पष्ट रूपसे, और कवियोंने रस-पूर्ण प्रौढ़ भाषामें, सभी युगोंमें नग्न मानव-शरीरकी महिमा गाई है। माइलोकी देवी वीनसके सम्मुख उसके पैरिसवाले घरमें, हसोड़े ढंगसे कपड़े पहने हुए खाली-दिमाग़, फ़ैशनके पुतले भी एक पलके लिये अवाक् खड़े रह जाते हैं। देवीकी उस नग्न मूर्तिको देखकर उनके अन्दर यही भाव पैदा होता है कि यह कोई ईश्वरीय रहस्योंसे भरी हुई चीज़ है। एक दिन, जब मैं इस पुरातन देवीको प्रणाम कर रही थी, और उसकी देहकी वक्र-रेखाओंकी एकतानताओंसे मुझे शक्ति और सुखका चरणामृत मिल रहा था, असङ्गत रूपसे अंगिया (कार्सेट) धारण किए एक गुड़िया मूर्तिके पास आकर ठहर गई, और रोकर अपने पास ही खड़े पुरुषसे बोली—"देखिए, इसका कैसा मनोहर आकार है!"

यदि निर्जीव संगमरमर हमपर इतना प्रभाव डाल सकता है तो सजीव सौन्दर्यका अनुराग और चैतन्य तो इससे कहीं

अधिक प्रभावशाली होता है! कोई सुगठित देहवाला युवक या युवती जब आधुनिक वेषकी लटकती हुई मूर्खताओंसे रहित होती है—कपड़े उतार नंगा होती है—तब वह अपरिमेय रूपसे अधिक सुन्दर देख पड़ती है। एक सुन्दर रमणीकी देहमें ऐसा दिव्य लावण्य रहता है जिसका केवल एक कवि ही थोड़ा-बहुत दिग्दर्शन करा सकता है। हमारी जातिने मानव-देहकी संस्कृतिकी इतनी देरतक उपेक्षा की है कि परिपक्व पुरुषों और स्त्रियोंका एक विषण्ण अनुपात अनाकर्षक हो गया है। परन्तु अधिकांश युवक और युवतियोंमें सौन्दर्यके तत्व मौजूद हैं, और उन्हींके लिये मुख्यतः यह पुस्तक लिखी गई है।

पूर्ण रूपसे नंगे युवक या युवती भद्दे नहीं मालूम होते। चिथड़े, नाम-मात्रके 'अलङ्कारों' की भङ्गुर वक्र-रेखाएँ, असदृश लकीरें तथा रंग मात हो जाते हैं, और उनके अस्त-व्यस्त ढेरसे ऊपर ऊपर निकलती हुई नग्न प्रतिमा अपनी परम सरलतामें देखी जाती है। गलीमें खेलनेवाले छोटे छोटे कङ्गाल बच्चे भी जब नदी या तालाबके किनारे अपने फटे-पुराने वस्त्र उतारकर पानीमें कूदते हैं तो वे कैसे मनोहर जान पड़ते हैं!

इसलिये यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं कि इस सजीव सौन्दर्य्यके ख़जानेको, एकका दूसरेके सामने, प्रकट करना प्रणयके संख्यातीत मधुर आवेगोंमेंसे एक है। आपसमें एक दूसरेको उस दृश्यमें प्रवेश करने तथा उसका आनन्द लेनेका अधिकार देना जो संसारके सभी दृश्योंसे अधिक शिल्पीके नेत्रोंको आकर्षित तथा तृप्त करता है।

परन्तु, यह आवेग स्त्रीमें उसके मदन-प्रवाहोंके प्राकृतिक परिणामोंमेंसे कमसे कम दोके द्वारा आन्दोलित होता है। प्रत्येक मासमें कुछ कालतक इस पुरानी परम्पराने कि वह "अपवित्र" होती है, और इसके साथ ही उसकी प्रत्यक्ष आवश्यकताओंने, स्त्रीको अपने पतिकी दृष्टिसे भी छिप जानेपर विवश किया है। परन्तु, इसके विपरीत, नियमपूर्वक ऐसे समय आते हैं जब छातियोंके गोल तथा असाधारण रूपसे परिपूर्ण हो जानेपर उसके शरीरकी कान्ति अपेक्षाकृत अधिक बढ़ जाती है। (यह मदन-प्रवाहोंके उतार-चढ़ावकी उन क्रियाओंके नियमित शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी परिणामोंमेंसे एक है, जो उसके भीतर हो रही हैं, और यह प्रायः उसकी प्राकृतिक काम-वासनाके तरङ्ग-शृङ्गोंके अनुरूप है जैसा कि नकशोंमें दिखलाया गया है।) अपने सौन्दर्य-की दीप्ति तथा पूर्ण निर्दोषिताको अंशतः या पूर्णतः न जानती हुई, वह उस सौन्दर्यको अपने पतिकी आँखोंके सामने, जब वह उसके साथ प्रेम करता है, प्रकट करनेके लिए उसकी मृदु प्रेरणाओंसे प्रसन्न होती है। परन्तु, यह निष्पाप, यह देवी-सदृश आत्म-विश्वास, उसकी जीवनी शक्तिके स्वाभाविक भाटा (उतार) के समय पीछे हट जाता है।

पुरुषके लिये यह कितने सौभाग्यकी बात है कि उसकी कान्ताके इन मधुर परिवर्तनोंको निरोधपूर्वक एक रूप नहीं बना दिया जाता। पुरुष-जातिके पुरखे शिकारसे अपनी गुज़र किया करते थे। इसलिये उसके रक्तमें अभीतक प्राचीन शिकारीका

इतना अधिक अंश मौजूद है कि सौन्दर्य जो सदा उसके पास और सामने रहता है वह नियमानुसार मदनोदयके धोखा देने-वाले और परिवर्तनशील प्रलोभनोंकी अपेक्षा उसे बहुत कम आकर्षित करता है। अतीव विकसित और संस्कृत स्त्री जिसमें अपनी सत्ताके बड़े बड़े तालों—आवेगों—को सीमाबद्ध करनेके बदले उनका पूर्ण विकास करनेकी बुद्धि है, अपनी सदा बदलती रहनेवाली अवस्थाओंके द्वारा पुरुषके बहुतसी पत्नियाँ करनेके सहज भावको तृप्त तथा वशीभूत कर सकती है। और उसके प्राकृतिक रूपोंमेंसे एक यह है कि वह किसी समय वापस हट जाती है, गम्भीर काम-सम्बन्धी उदासीनताका अनुभव करती है, और एकान्तमें या किसी प्रकारका आक्रमण होनेपर प्रचण्ड रूपसे चुटेली नागिन सी क्रुद्ध हो जाती है।

यही एक बात है जिसे स्त्री बहुत अधिक बार भूल जाती है। पुरुषने उसको इतना 'पालतू' बना लिया है कि वह शीघ्र ही इस बातका अनुभव करने लगती है कि विवाहके बाद वह उसकी हो गई।

शिकारको पकड़नेमें जिस प्रकार शिकारीको उल्लास, धड़कन या सनसनाहट और आश्चर्य होता है, वैसा ही स्त्रीके मन-मृगयाको यत्नपूर्वक वशीभूत करनेमें पुरुषको होना चाहिये। परन्तु स्त्री-पुरुषकी लगातार माँगोंको, पालतू गायकी तरह, बिना किसी रुकावटके, स्वीकार कर लेती है, इसलिए पुरुषको वैसा उल्लास नहीं होता।

हमारे मलिन आधुनिक जीवनके क्षुद्र व्यवहारमें यह उल्लास अनेक विवाहोंमें कुछ कुछ आगे लिखे ढंगसे कार्य करता है—विवाहित दम्पति एक ही कमरेमें सोते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि वे दोनों न केवल हर्ष और रुचिके समयोंमें ही, इकट्ठे होते हैं वरन् हार-शृंगारकी बहुतसी अमनोहर तथा हास्यजनक क्रियाओंमें भी, एक जगह होते हैं। यह हो सकता है कि पुरुष अपनी देवीको बाल सँवारते और साबुन मलते देखकर एक बार—शायद दो बार भी—या लम्बे लम्बे अन्तरोंके पश्चात्—मुग्ध हो जाय। परन्तु स्वभावतः यह इतनी अमनोहर क्रिया है कि इससे सदा सम्मोहन नहीं हो सकता। एक रूपवती रमणीको गम्भीर, निर्मल जलमें नग्न स्नान करते देखना—पुरुषको सदाके लिए मोहित कर सकता है, क्योंकि यह बड़ा मनोहर दृश्य होता है, परन्तु साधारण बातें, जो दैनिक शृङ्गारके लिये आवश्यक हैं, चित्रको केवल कलङ्कित करने और कान्ताके शरीरपर जो योग और रुचि देनी चाहिये उसको मन्द करनेका काम करती हैं। इसलिए, अन्ततः, प्राकृतिक दैनिक प्रयोजनोंमें प्रतिदिनका संग उस तीव्र आनन्दको घटाता है जो पति-पत्नीको एक दूसरेसे मिलाता है। और, इसलिए, उस आवश्यक और करुणाजनक रीतिसे यद्यपि चोरीसे और छिपकर, उस उत्तेजनकी तीक्ष्णता को, जो पति-पत्नी एक दूसरेमें उत्पन्न करते हैं, घटाता, और उनकी सुरतक्रियाकी प्रचण्डताको कम करता है। इससे सम्भोग-का शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी मूल्य बहुत कम हो जाता है।*

* टामस (विलियम टामसकी पुस्तक 'सेक्स एंड सोसायटी' का

सारांश यह कि स्त्रीकी व्यक्तिगत लज्जाका दूर करना, जो प्रायः विवाहमें जहाँ स्त्री पूर्णतः पुरुषकी हो जाती है, एक आवश्यक परिणाम समझा जाता है। इसने हमारी स्त्रियोंमें एक परम्परा उत्पन्न कर दी है कि अपने पतियोंके सामने वे व्यक्तिगत तथा गार्हस्थ्य-कर्तव्योंमेंसे कोई एक या सब सम्पादन कर सकती हैं। इसके अनुरूप पुरुष भी उनके सामने स्तब्धता रखनेमें असावधान होनेका साहस कर लेते हैं। दोनोंको जीवनके उथले

पृष्ठ ११२, सन् १९०७) का एक उदाहरण यहाँ बहुत उपयुक्त है, यद्यपि वह पुरुषोंके विषयमें नहीं, वरन् मादा पक्षियों और पशुओंद्वारा प्रकट की जानेवाली काम-केलि और लज्जाके विषयमें कह रहा है।

"हमें इस बातको स्वीकार करना चाहिये कि सन्तानोत्पत्तिकी क्रियामें प्रचण्ड उत्तेजनका होना आवश्यक है; नहीं तो इसकी उपेक्षा की जायगी और जातिका उच्छेद हो जायगा। और इसके विपरीत, यदि मादाका जीतना बहुत सुगम हो, तो सुरतके एक खेल और औबाशी, शक्ति-विनाशक और वंशके लिए घातक बन जानेका डर है। हम मान लेते हैं कि निर्वाचन तथा योग्यतमके ही जी बचनेकी क्रियाद्वारा प्रकृति सन्तानोत्पत्ति कराती और उसकी रक्षा करती है। बहुत अधिक नाड़ीगत कामोद्दीपनकी दशाके सिवा (जैसा कि विशेष रूपसे अच्छी तरह पक्षियोंके प्रणय-सम्बन्धी लाड़-प्यारमें देखा जाता है) मादा आक्रमणसे वशीभूत नहीं होती, और नरको इस तरहसे आचरण करना चाहिये कि मादा उसके हाथमें आ जाय; और, अधिक सकर्मक कर्त्ता होनेसे, वह इस प्रयोजनके लिये बड़ी बड़ी विस्मयोत्पादक विधियोंका प्रदर्शन करता है। यह मादाके उस हाव-भाव तथा लज्जाका प्रत्युत्तर है जिसके द्वारा वह समान रूपसे नरको मोहित तथा आकर्षित करती और उसमें नाड़ीगत कामोद्दीपनकी वैसी ही अनुरूप दशा उत्पन्न करनेकी चेष्टा करती है।"

तथा प्रारम्भिक अनुभवोंका होना उनके जीवनके उच्चतर तथा अधिक काव्यमय प्रलोभनोंको नष्ट करनेका, असंख्य विवाहोंमें, एक कारण हो चुका है।

स्त्रीका सौन्दर्य उतना आयुसे नहीं घटता जितना उपेक्षासे। हो सकता है कि पुरुष अपनी वधूके देदीप्यमान चित्रकी दिनपर दिन नीरस होनेवाली दशाओंके कारण दूषित हो जानेपर, लाड़-प्यारकी चेष्टाओंद्वारा उसको यह स्मरण कराना बन्द कर दे कि तुम्हारा शरीर अमूल्य है। किन्तु कई पुरुषोंको, जो अपनी पत्नियोंकी प्रत्येक अवस्थाको ध्यानपूर्वक देखते हैं, स्त्रीकी मूर्खता या अपने शरीरकी उपेक्षासे बहुधा भारी दुःख होता है। स्त्रियाँ बनावटी हड्डियों तथा अकड़ानेवाले साधनोंके भरोसे रहकर अपनी गतिका सौन्दर्य खो बैठती हैं, और भारी तथा भद्दे फैशनके कपड़े पहनकर अपने चलने फिरनेमें बाधा उपस्थित करती हैं। वे भूल जाती हैं कि न केवल अपने कपड़ोंमें ढके हुए रूपको, वरन् अपने शरीरकी रचनाको भी, उन चीज़ोंके द्वारा जिन्हें वे खातीं, उन कामोंके द्वारा जिन्हें वे करतीं, और उन बातोंके द्वारा जिनपर वे विचार करती हैं, वे कितने अपरिमेय रूपसे अपने वशमें कर सकती हैं।

एक बुद्धिमानका कथन है कि सोलह वर्षकी आयुमें स्त्री सौन्दर्यके लिये प्रतिष्ठाकी पात्री नहीं, किन्तु साठ वर्षकी आयुमें सुन्दरता उसकी अपनी आत्माकी कृति होती है। मैं चाहती हूं कि सारा संसार सौन्दर्यके लिये इतना प्यासा हो उठे कि

हम सारी जातिको यूनानियोंको तरह मनोहर शकलोंवाली बना दें।

इस दृष्टिसे मैं समझती हूं कि स्त्रीकी अपेक्षा पुरुषकी अधिक हानि होती है। क्योंकि पुरुष मूलतः अभीतक शिकारी ही रहा है। उसे शिकारकी चटखारेभरी चाट तथा सनसनाहटका अब भी अनुभव होता है। वह वनमें रूपवती डायना (देवी) के पास अकस्मात् पहुँच जानेके सदा स्वप्न देखा करता है। इसके विपरीत, विवाहिता स्त्री, एक बार सब कुछ समर्पण कर चुकनेपर, पुरुषके साहचर्य्यमें अकर्मक रूपसे रहती है।

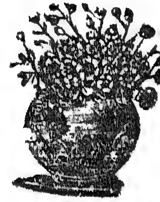
पिछले अध्यायोंमें जिन गम्भीर शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी बातोंपर विचार किया गया है उनके सामने चाहे यह क्षुद्र जान पड़े, परन्तु मैं समझती हूँ कि पतियोंकी भलाईके लिए पत्नियोंको एक महत्त्वपूर्ण उपदेश* यह है:—"सदा अधम, क्षुद्र, और मलिनसे बचती रहो। जहाँतक सम्भव हो (और यह जितना पहलेपहल ऊपरसे प्रतीत होता है उससे कहीं अधिक सम्भव है और इसके लिए गृहस्थीके स्वभावोंमें केवल थोड़े ध्यान तथा सुव्यवस्था-शक्तिकी ज़रूरत है) इस बातपर दृढ़ हो जाओ कि तुम पतिको केवल उसी समय अपने पास आने दोगी जब मिलनेमें आनन्द प्राप्त होता है। जहां आमदनी आज्ञा दे, पति और पत्नीके सोनेके

---

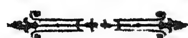
* इस सम्बन्धमें देखो मेरी पुस्तक "रति विज्ञान" ('साहित्य-सदन' लाहौर द्वारा प्रकाशित) का 'वामाचरित—प्रकाश' नामक प्रकरण। सं० रा०

कमरे अलग अलग होने चाहिये। यदि ऐसा न हो सके तो सोनेके कमरेमें एक परदा लगा लेना चाहिये, जिसे स्वेच्छानुसार गिरानेसे कमरा दो हिस्सोंमें बँट जाय। एकान्त-विचारके बिना कोई भी आत्मा पूर्ण विकासको प्राप्त नहीं हो सकती। एक विवाहिता स्त्रीकी देह तथा आत्मापर उसका अधिकार अवश्य अखण्ड रहना चाहिये। यह बात तभी हो सकती है जब उसके पास कोई ऐसा एकान्त हो जिसे कोई भङ्ग न कर सके। परन्तु इसके साथ ही अलग अलग कमरे रखनेका यह मतलब नहीं, जैसा कि बहुधा समझा जाता है, कि पति केवल उसी समय पत्नीके कमरेमें आए जब वह उससे संयोग करना चाहता है। एक सहृदय स्त्रीके इस बातको पहलेसे जाननेसे बढ़कर कि मेरा पति किस प्रयोजनसे मेरे पास आ रहा है, चाहे वह कितने ही प्रेमसे क्यों न आए, उसकी संयोग-कामनाको रोकनेवाली कोई और चीज़ नहीं। इसकारण तथा जुदाईके भावसे कुछ लोग अलग अलग कमरोंमें सोनेपर आपत्ति करते हैं। यह सत्य है कि अलग अलग कमरोंमें सोना बहुधा विवाहके सुखके भङ्ग होनेकी पूर्व-सूचना होती है, परन्तु इसका कारण यह है कि खराबी दूसरी बातोंमें हुई होती है। हर रात को जबतक कोई विशेष बात बाधक न हो, पति और पत्नीको एक दूसरेसे मिलना ही चाहिये। इस प्रकार वे प्रेमभरी गूढ़ बातें कर सकते हैं। कुछ लोगोंका विचार है कि यह आलाप-संलाप अँधेरेमें होना चाहिये। जो हो, पुरुष भी हृदयोंमें सदा बच्चे ही रहते हैं और जिस प्यार-

दुलारसे बच्चोंको सुख मिलता है वही एक युवकके जीवनको सरस तथा प्रेममय बना देता है। उनके परस्पर 'नमस्ते' करके एक दूसरेसे अलग होनेका समय वर्षोंके बाहरी दागोंको सहर्ष भूल जाने और विश्वासोंके कोमल, सरस, कदाचित् विलासमय विनिमयका समय होना चाहिये। ये बातें पिछले वर्णनोंसे टकराती नहीं हैं। इसलिये जब इस तरह आचरण किया जाय तो ये उस आपत्तिको भी दूर कर लेती हैं जो कुछ लोग अलग अलग कमरोंको स्नेह-निवृतिका कारण मानकर करते हैं।



आठवाँ अध्याय



ब्रह्मचर्य्य

स्त्री और पुरुषका वह तेज़ मदिराके समान प्रेम बस्तुतः कितना मादक और कितना मर्मस्पर्शी है ! यह संकल्पके जादूसे विकृत तथा आध्यात्मिक रूपमें अन्तरित हो जाता है। और केवल अदूर दृष्टि तथा आनन्द-विधानके कारण शारीरिक नलीद्वारा इसका बेरोक निकास कितना हानिकारक है ! इसलिये पति-पत्नीको आपसमें किसी भी दूसरी बातसे इतना नहीं डरना चाहिये जितना कि इससे प्रणयको अशिष्ट व्यवहारमें लानेसे। यह प्रेमका बिगड़ा तथा अशिष्ट चित्र है। यही वह चट्टान है जिसके साथ टकराकर विवाहरूपी नौका बहुधा टूट जाया करती है।

एडवर्ड कार्पेन्टर।

बहुधा ऐसा होता है कि विवाहरूपी नौका इस चट्टानसे टकराकर टूट जाती है। इसी कारण प्रत्येक युगमें आध्यात्मिक सौन्दर्यकी लालसाकी जा रही है। बहुतसे पुरुष ऐसे भी हुए हैं जिन्होंने अपने आपको शरीरके सभी दृष्टि-मधुर व्यवहारोंसे परे रक्खा है। अपने शरीरपर अधिकार प्राप्त करनेके लिए पुरुषके आयास, और उच्चतर प्रेमके मन्द तथा बहुधा पीछेको फिसलनेवाले विकासमें, निस्सन्देह मनुष्य-समाज यतियोंका बहुत ऋणी है। परन्तु यह ऋण आजकलका नहीं है। अब तो हम निम्न शक्तियोंपर अधिकार पा रहे हैं, अपनी शारीरिक प्रतिक्रियाओंके जटिल अर्थों और आध्यात्मिक रूपान्तरोंका ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं, और *भविष्यमें* उच्चतम सामाजिक मान स्त्री-पुरुषका

जोड़ा ही माना जायगा, जो प्रेमकी अग्निसे पिघलकर इस प्रकार एक हो जाता है कि केवल पूर्ण प्रेमके मार्गसे ही पाई जा सकनेवाली ऊँचीसे ऊँची सभी मानवी सम्भाव्यताएँ (गुप्त शक्तियाँ Potentialities) उनकी ही रहती हैं।

तो भी, जैसा कि आज हमारा जीवन है, अर्थात् हमारे भीतर तथा बाहर प्राचीन आदर्शोंके अभीतक अनेक बचे हुए अंश हैं, हमें यतिको समझानेका यत्न अवश्य करना चाहिये। यति पुरुष (बहुत कम यति स्त्री) क्वचित् ही विवाहकी उपज होता है। बहुधा ऐसा होता है कि दोनोंकी प्रसन्नतासे विवाह होने और जिसे सुख समझा जाता है उसके कुछ बरस बाद, हो सकता है कि स्त्री या पुरुष मैथुन करना एक नीच कर्म समझकर उसे छोड़ दें और अपनेको इस प्रकार एक उच्च समतलपर पहुँचा हुआ समझने और मानने लगें। परन्तु ऐसे लोग क्वचित् ही अपनेसे यह पूछते हैं कि क्या हम गृहस्थ करनेके दिनोंमें उस जीवनके उच्चतम समतलपर पहुँच गए थे?

विवाहित संयमीका एक बहुत विख्यात उदाहरण टालस्टाय है, जिसकी पीछेसे सम्मति यह थी कि ऊँचा मनुष्य ही अपनी काम-वासनाओंको पूर्ण रूपसे रोककर ब्रह्मचर्य्यका जीवन व्यतीत करता है। किन्तु यतियोंको क्वचित् ही मानव-शरीर शास्त्रका अधिक ज्ञान होता है। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि उनमें सब तरहकी सुन्दरता तथा धार्मिक कट्टरताके होते भी, उनमें बहुधा उस गूढ़ ज्ञानकी कमी होती है जो पुरुष तथा स्त्रीके उच्चतम

संयोगसे उत्पन्न होनेवाली नवीन सृष्टि—भावी संतान—के अर्थ तथा सम्भाव्यताओंका पूर्ण रूपसे अनुभव करनेके लिए आवश्यक है। निस्सन्देह यदि हम एक घण्टेके लिये आक्सीजन या हाइड्रोजनके अलग अलग रासायनिक परमाणुओंके स्थानमें अपनेको रखकर देखें, तो हमें उस जल-बिन्दुके भौतिक गुणोंका ज्ञान भी न होगा, जो उन दोनोंके मिलनेसे बनता है। इसी प्रकार यतिको सच्चे वैवाहिक संयोगके आश्चर्यों और सनातन परमेश्वरके साथ इसकी उच्चतर सम्भाव्यताओं (Potentialities) तथा सम्बन्धोंका कुछ भी ज्ञान नहीं हो सकता।

बहुतसे दूसरे धर्म्मोंके सदृश, ईसाई धर्मके आरम्भिक कालमें, वैराग्यका एक प्रबल प्रवाह चला था। यद्यपि यह एक रूखा वैराग्य था,जैसा कि अब भी है,परन्तु मज़ेकी बात तो यह है कि इसके साथ एक सरस वैराग्य भी था जो, अपने मूर्तिपूजक समकालीनोंकी विषयासक्तिसे घृणा करते हुये भी, पारस्परिक साहचर्य्यकी चारुता तथा सुखका सर्वथा निषेध नहीं करता था। इससे ऐसा मालूम होता है कि ये आरम्भिक कालके ईसाई यति, खण्डित रूपमें, विवाहके थोड़ेसे निरर्थक लाभोंको प्राप्त कर लेते थे। एलिस (खण्ड ६, 'सेक्स एण्ड सोसायटी,' १९१३) इन यतियोंके प्रणय-संयोगका एक मनोरञ्जक वृत्तान्त देता है:—

"क्रिसोस्टोम. ('उनके विरुद्ध जो अपने घरोंमें कुमारियाँ रखते हैं') कहता है कि हमारे पूर्वज केवल दो ही प्रकारका स्त्री-पुरुषका सम्बन्ध मानते थे

—एक विवाह, दूसरा व्यभिचार। अब एक तीसरा रूप प्रकट हुआ है—पुरुष जवान लड़कियोंको अपने घरोंमें ले जाकर, उनके कौमार्यका सम्मान करते हुए, उन्हें स्थायी रूपसे रखते हैं। क्रिसोस्टोम पूछता है कि "इसका क्या कारण है ?। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि वैवाहिक संयोग और विषय-संसर्गको छोड़कर भी, स्त्रीके साथ मिलकर रहनेसे जीवन मधुर हो जाता है। यह मेरा अनुभव है और कदाचित् केवल मेरा ही नहीं, हो सकता है कि उन लोगों का भी हो। वे अपनी प्रतिष्ठाको इतनी सस्ती न बनाते और न ऐसे अपवादको ही फैलने देते यदि यह सुख इतना प्रचण्ड और दुःखदायक न होता। ······इसमें वस्तुतः सुख है जो वैवाहिक संयोगकी अपेक्षा अधिक उत्तम प्रेम उत्पन्न करता है— इस बातसे तुम्हें पहलेपहल आश्चर्य होगा। परन्तु जब मैं तुम्हें प्रमाण दूँगा तो तुम मेरे साथ इस बातमें सहमत हो जाओगे कि विवाहित जीवनमें काम-वासना-को लगाम न लगानेसे बहुधा शीघ्र ही घृणा उत्पन्न हो जाती है और इसके सिवा मैथुन, गर्भधारण, प्रसव, बच्चोंको छातियों से दूध पिलाना, उनका पालन-पोषण तथा शिक्षण और वे सब कष्ट तथा चिन्ताएँ जो इन बातोंके साथ रहती हैं, शीघ्र ही यौवन को नष्टकर डालतीं और सुखको फीका कर देती हैं। कुमारी इन बोझोंसे रहित होती है। उसकी शक्ति और जवानी बराबर बनी रहती है और चालीस वर्षकी आयुमें भी वह एक विवाहके योग्य युवतीका मुकाबला कर सकती है। इस प्रकार पास रहने वाले पुरुषके हृदयमें दुगुना अनुराग भड़कता है। वासनाकी सन्तुष्टि उस चमकती हुई अग्नि-शिखाको नहीं बुझाने पाती जिसकी शक्ति सदा बढ़ती है।" क्रिसोस्टोम उन सब छोटे छोटे आदरों और उपसेवाओं का सविस्तर वर्णन करता है जो उस युगकी नई युवतियाँ चाहती थीं। उस समय सबके सामने या छिपकर लोग लड़कियाँ दिया करते थे। लेखकका कहना है कि जो ऐसे पुरुष किसी स्त्रीका अपरिमित रूपसे आलिंगन तथा चुम्बन करते हैं वे आप किस कदर तरसते हैं। परन्तु कोमल सतीत्वकी यह नई शुद्रता,

जो पूर्वकालके उन ईसाईयोंपर एक स्वादिष्ट आविष्कारके रूपमें आई थी जिन्होंने मूर्तिपूजक जगत्की विषयासक्तिको दृढ़तापूर्वक परे ढकेल दिया था, बहुत गहरी गड़ी हुई थी। क्योंकि हम अपवादकी शंकासे पादरियोंको इसकी बारबार निन्दा करते पाते हैं, यद्यपि उनकी निन्दा कभी कभी गुप्त सहानुभूतिके लेशसे रहित नहीं होती।

इस प्रकार जेरोम, यूस्टोचियम को पत्र लिखते हुए, उन जोड़ोंकी ओर सङ्केत करता है जो "एक ही कमरेमें," वरन् बहुधा "एक ही पलङ्गपर" सोते थे, और यदि हम कोई अनुमान करें तो वह हमें शङ्काशील कहता है; परन्तु साईपरियन ("एपिस्टोला," ८६) उन पुरुषोंकी प्रशंसा करनेमें असमर्थ है जिनके, एक डीकनके, विषयमें वह सुनता है कि वे कुमारियोंके सुपरिचित संसर्गमें रहते हैं, यहांतक कि उनके साथ एक ही बिछौनेपर सोते हैं, क्योंकि, वे स्त्रियां दुर्बल-हृदय और युवक विलासी थे।"

परन्तु वास्तविक यति वह है जिसे यति शब्द प्रायः मानसिक नेत्रोंके सामने उपस्थित करता है। चाहे वह आत्म-संयमके चमत्कार दिखलाये, और चाहे काम-वासनाका दमन करे, प्रकृतिकी अवज्ञाका संकल्प करके वह बहुधा बलवान् बननेके स्थानमें दुर्बल हो जाता है। जो सचमुच महान् है उसको छोड़कर शेष सबमें विवेककी सीमासे अधिक उस काम-वासनाको दबानेसे, जो आदि सृष्टिकी नर-नारियोंके हृदयोंमें उस समय गाड़ी गई थी जब उनको फूलने-फलनेको कहा था, सङ्कोच तथा वक्रता उत्पन्न होती है।

एलन की ("लव एण्ड मैरिज" में) कहता है:—

"जो यति काम-देवको वशमें करनेके लिये केवल आत्म-संयमकी ही सिफ़ारिश करते हैं, उस समय भी जब कि ऐसा संयम जीवनके मार्गमें

केवल बाधक होता है, वे उस चिकित्सककी तरह हैं जो रोगीके ज्वरको केवल मारकर भगा देनेकी चेष्टा करता हो—उसे इस बातकी कुछ परवाह नहीं रहती कि चिकित्सासे रोगी मर जायगा।

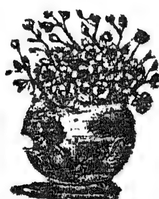
हो सकता है कि ये यति दो भिन्नभिन्न मार्गोंसे अपने धर्मोन्मादपर पहुँचे हों। एक समूह—जिसमें अधिकांश यति स्त्रियां हैं—कामदेवसे इसलिये घृणा करता है, कि उसने कभी उनको अपनी कृपाका पात्र नहीं बनाया। दूसरा समूह—जिसमें अधिकांश पुरुष यति हैं—उसको इसलिये कोसता है क्योंकि वह उनको कभी शान्तिसे नहीं बैठने देता।"

यदि इस विषयपर निष्पक्ष अन्वेषणद्वारा अधिक नव्य तथा वैज्ञानिक भावसे विचार किया जाय तो एक चिकित्सक पुरुष तथा स्त्रियाँ दोनोंमें थोड़े-बहुत केवल-ब्रह्मचर्य्य-से-ही-उत्पन्न-होने-वाले रोगोंकी एक लम्बी-चौड़ी सूची बना देगा। न्यूरल जिया (स्नायुवेदना) से लेकर 'फाईब्राइड ग्रोथ्स' तक सब रोग इसके अन्तर्गत हैं। और यह बात भी ध्यान देनेयोग्य है कि, हो सकता है कि, ये रोग ऐसे समयमें भी मौजूद हों जब कि रोगी (जैसा कि अनेक अविवाहित स्त्रियोंकी दशामें होता है) को इस बातका कुछ भी ख़याल न हो कि कामका आवेग मुझमें बे-लगाम फिर रहा है।

इस प्रकार यति और लम्पट (चाहे धर्म्य विवाहमें, चाहे वैसे ही) दोनोंको रोगका शिकार होना पड़ता है। परन्तु मेरे ज्ञानमें कोई भी ऐसा रोग नहीं जो स्वाभाविक तथा परस्पर सुखी विवाह-सम्बन्धसे उत्पन्न होता हो—यह एक ऐसा सम्बन्ध है जो,

निश्चय ही बहुतसे लोगोंको, आरोग्य तथा जीवन-शक्ति प्रदान करता है।

जिस गम्भीर सचाईका अनुभव यति करते हैं, वह यह है कि कामदेवकी उत्पादनक्षम शक्तिको दूसरे कार्योंमें रूपान्तरिक किया जा सकता है। इस सचाईको वैवाहिक जीवनमें कभी नहीं भूलना चाहिए; उन अवसरोंको छोड़कर जब कि मैथुन स्वाभाविक, सुखद और उत्तेजक होता है, शेष सारे समयोंमें पूर्ण ब्रह्मचर्य्य धारण करके नीरोग मैथुन-शक्ति—वीर्य्य—को प्रत्येक प्रकारके दूसरे कार्य्योंमें परिणत करते रहना चाहिए।



नवाँ अध्याय



सन्तान

मैं तेरे हित, तू मेरे हित है यह प्रिये विश्व विख्यात,
पर हित-साधन हेतु, न केवल तव हित है यह निश्चित बात—
बड़े बड़े रणधीर वीर तव सुभग गर्भमें सोते हैं।
जो न अन्य से, बस मेरे ही द्वारा जागृत होते हैं।

वाल्ट ह्विटमैन तथा श्रीमणिराम गुप्त ॥

समाधिकी अवस्थामें योगी अपने व्यक्तित्वके संगमके द्वारा विश्वकी दैवी शक्तियोंके साथ एकत्वका अनुभव करता है।

परन्तु साधारण पुरुष तथा स्त्रियाँ इस योगानन्दको नहीं जानतीं, और साधारण मानवी चेतना सृष्टिकी प्राणभूत शक्तियोंके साथ इसकी एकताकी अपेक्षा उससे इसकी भिन्नताको अधिक जानती है, फिर भी वह उस अर्द्ध-मूर्च्छित प्रहर्षके तापकी तुलना जिसमें योगीकी सारी सत्ता पिघल जाती और ईश्वरीय शक्तिके आलोकमें तैरती है, प्रेमी तथा प्रेमिकाके बीच पाये जानेवाले प्रहर्षसे की जाती है।

जब दो ऐसे व्यक्ति, जो प्रत्येक दृष्टिसे उपयुक्त दम्पति हैं, असंख्य शक्तियोंरूपी अग्निसे भीतर ही भीतर जलने लगते हैं, जिससे उनके शरीरोंमें यह लालसा उत्पन्न होती है कि हम एक दूसरेके बीच घुस जायँ और एक दूसरेको घेर लें, तब आनन्द

और उल्लासका विलय केवल भौतिक ही नहीं होता। संगमका अर्द्ध-मूर्च्छित भाव जो उस शाश्वत क्षणमें जब कि प्रहर्ष चरम सीमातक पहुँच चुका होता है आत्माको आ दबाता है, स्त्री और पुरुषके समस्त सारको अपने प्रदीप्त प्रवाहमें बहा ले जाता है, और ऐसा जान पड़ता है मानों समागमकी गरमी उनकी चेतनाको भाफ़ बनाकर उड़ा देती है जिससे सारा अन्तरिक्ष भर जाता है। उस घड़ी वे दिव्य विचारोंमें, सनातन शक्तिकी उन तरङ्गोंमें तन्मय हो जाते हैं, जो योगीको बहुधा स्वर्णीय आलोकके रूपमें देख पड़ती हैं।

परमानन्दके प्रवेशमें प्रविष्ट होनेके बाद जब दोनों पति-पत्नी वहाँसे लौटते हैं तो वे अपने साथ उस आलोककी एक चिनगारी लाते हैं जिसे हम जीवन कहते हैं।

और उनके यहाँ एक बालकका जन्म होता है।

जटिल घटकोंके सारे लुभावने ताने-बानेमें, कान्त और कान्ताको फुसलाकर एक दूसरेके बाहुपाशमें जकड़नेमें, प्रकृतिका परम प्रयोजन यही है। दोके एक दूसरेमें विलीन होनेसे ही नया जीवन अस्तित्वमें आ सकता है, और इस प्रकार एक नये जीवनकी सृष्टि करके ही हम उस दीपको दूसरोंके सिपुर्द कर सकते हैं जो प्राकृतिक जगत्में हमारी चेतनाको आलोकित करता है।

अभीतक ऐसा कवि उत्पन्न नहीं हुआ जिसने इस गूढ़ार्थक तथा आश्चर्यजनक सचाईका पूर्ण रूपसे बखान किया हो, परन्तु

जिनको सच्चे प्रेमका ज्ञान है उन सबके हृदयोंमें उस पवित्रता-की सिद्धि विद्यमान है जो उनको सृष्टिकी क्रिया—समागम—के समय प्राप्त होती है।

यदि हमारे शरीर विशेष रूपसे इस परम प्रयोजनके लिये संगठित किए गए होते, तो नये जीवको उत्पन्न करनेके लिए दो व्यक्तियोंको केवल परस्पर विलयकी पवित्र अग्निमेंसे होकर जाना पड़ता। भले ही हमारी आत्माएँ बहुत विकसित हो चुकी हों, परन्तु हमारे शरीर उस प्रकृतिके बने हुए हैं जिसपर उन अनेक गत रूपोंकी छाप बनी हुई है जिनमेंसे होकर कि हम अपनी वर्तमान स्थितिको पहुँचे हैं। निम्नश्रेणीके जीवोंमें जितने बच्चे पैदा होते हैं उनमेंसे बहुत अधिक नष्ट हो जाते हैं, और थोड़ीसी संख्याके परिपक्वताको प्राप्त होनेके लिये यह आवश्यक है कि असंख्य जीव गर्भमें जाएँ। इसलिये हमारे शरीरोंमें (यद्यपि निम्नश्रेणीके जीवोंकी तुलनामें हमारी इन्द्रियाँ विशेषताको प्राप्त हैं) स्त्री और पुरुष दोनों हरा होनेके' लिये अभीतक भी उससे कहीं अधिक बीज पैदा करते हैं जितने कि वस्तुतः फलवान् और जीवन-सम्पन्न हो सकते हैं। हमारे इतिहासका क्रम हमपर इतना गहरा अंकित है कि प्रत्येक बीज, इस बातको न जानता हुआ कि यदि वह अननुकूल समयमें परिपक्वताको प्राप्त होगा तो वह व्यर्थ जायगा, अपने विकासके लिए वैसा ही अड़ रहा है जैसा कि वह अनुकूल अवस्थाओंवाला अड़ता है जो पूरा जीवन भोगता तथा नये जीवको जन्म देता है।

इस समय हमारे शरीरोंका जिस प्रकारका संगठन है, हमारे लिये धर्म्म-पण्डितोंके आदेशोंको मानना और संभाव्य जीवन—शुक्रकीट तथा रजके अण्डों—के विनाशसे रुकना सर्वथा असम्भव है। स्त्रीके सूक्ष्म अण्डे (जर्म-मॅल) यद्यपि पुरुषके शुक्रकीटोंसे अपरिमेय रूपसे कम होते हैं, तथापि वे प्रत्येक ब्रह्मचारिणी तथा विवाहिता स्त्रीमें व्यर्थ ही बार बार विकासको प्राप्त हुआ करते हैं; दूसरी ओर असंख्य शुक्रकीट समागमकी उस क्रियाहीमें नष्ट हो जाते हैं जो एक ही अनुकूल शुक्रकीटके द्वारा स्त्रीको हरा कर सकती है। यदि धर्म्म-पण्डितोंका अभिप्राय वही है जो वे कहते हैं,और प्रत्येक पुरुषसे चाहते हैं कि वह, सन्तानोत्पत्तिके प्रयोजनके सिवा पूर्ण ब्रह्मचर्य रखनेके लिये स्वेच्छापूर्वक यत्न करे, तो इससे समस्त संभाव्य जीवनके विनाशको रोकनेका उनका उद्देश्य पूर्ण न होगा; और प्रति मास स्त्रियोंमेंसे न-हरे हुए अण्डों (न गर्भीकृत गर्भाण्डों)के निकलनेको लाख यत्न करनेपर भी रोका नहीं जा सकता। मनुष्यने नहीं, वरन् प्रकृतिने संभाव्य जीवन—रजःस्रावमें निकलनेवाले सूक्ष्म अण्डों—के विनाशका विधान किया है,जिसके विरुद्ध कि पादरी लोग इतना कोप करते हैं।

तब यदि, अपने जीवनोंके अधिकांशमें स्त्री और पुरुष दोनोंके सूक्ष्म बीज (Germinal cells) भ्रूणकी सृष्टिके किये बिना अवश्य ही वियुक्त हो जाते हैं, तो इन सूक्ष्म बीजोंमेंसे पहलेके गर्भाधानके लिये यथासम्भव अतीव अनुकूल समय चुननेमें कुछ

भी दोष नहीं, जिससे वह एक नये जीवनोंकी सृष्टि करनेके परमाधिकारसे सम्पन्न हो जाय।

जहाँ इस बातका विचार नहीं किया जाता वहाँ विवाहमें प्रायः यह होता है कि सबसे पहले होनेवाले समागमोंमेंसे किसी एकमें स्त्री गर्भवती हो जाती है, जिसका फलस्वरूप, विवाहके नौ मास, या इससे कुछ अधिक समय, बाद तरुण दम्पतिके बच्चा हो जाता है।

यदि वे बुद्धिमान् होते और जो कुछ वे करते थे उसके पूर्ण आशयको समझते, तो वे अपने जीवनका परम कार्य आरम्भ करनेके पहले कमसे कम छः मास या एक वर्ष अवश्य व्यतीत हो लेने देते, क्योंकि इस कार्यका भार मुख्यतः स्त्रीपर पड़ता है।

अनेक कारणोंसे बच्चोंका अपने आप तथा आरम्भमें ही होना अधिक आदर्श है *; परन्तु यदि आर्थिक दशा अच्छी न हो, जैसी कि बहुधा "सभ्य" जीवनमें होती है, तो बिलकुल विवाह न करनेसे तो यह अच्छा है कि विवाह कर लिया जाय और बच्चे देरसे पैदा किए जायँ (देखो मेरी पुस्तक "वाइज़ पेरण्ट हुड।")

यदि जोड़ेने छोटी अवस्थामें ही विवाह कर लिया हो, और वे बच्चोंका पालन-पोषण करनेमें असमर्थ हों, तो उन्हें कुछ देर ठहरकर सन्तान उपन्न करनेमें ही लाभ है। मेरे जाने हुए जोड़ोंमेंसे जो बहुत सुखी हैं उनमेंसे एककी दशा अपवाद-स्वरूप है।

---

*—अवाञ्छित सन्तानको रोकनेके उपाय मेरी पुस्तक 'सन्तान-संख्याका सीमा-बंधन' (सरस्वती-आश्रम, हस्पताल रोड, लाहौर) में सविस्तर दिए गए हैं। अनुवादक।

जोड़ेने तब विवाह किया था जब वे अभी विश्वविद्यालयमें पढ़ते ही थे, और चौदह वर्ष बाद उनके पहला पुत्र उत्पन्न हुआ, जो कि बड़ा ही स्वस्थ था। यद्यपि इतने लम्बे अन्तरकी सबके लिये सिफ़ारिश नहीं की जा सकती, क्योंकि कहा जाता है कि इससे बाँझपन पैदा हो जाता है, परन्तु उनकी अवस्थामें यही अच्छा था कि चौदह वर्षतक विवाहके लिये ठहरने और पुरुषको "गिरने" की जोखममें डालनेकी अपेक्षा दोनों स्वाभाविक रूपसे सन्तुष्ट सुखी जीवन व्यतीत करते रहें।

उनके अपने तथा बच्चेके, दोनोंके, निमित्त, अनेक कारण हैं जिनसे, जबतक विशेष अवस्थाओंके कारण दम्पति अनवरत रूपसे इकट्ठे रहनेकी आशा न कर सकते हों, संभाव्य माता-पिताको कुछ देर ठहर जानेकी पूर्वावधानता – एहतियात— करनी चाहिए।

जिस बच्चेका गर्भाधान प्रहर्ष तथा आशामें हुआ है उसे प्रत्येक ऐसा भौतिक सुयोग दिया जाना चाहिए जिसके उपायकी कल्पना माता-पिताकी बुद्धि तथा प्रेम कर सकता है। और उसके स्वास्थका पहला और *अतीव* आवश्यक नियम यह है कि जब-तक वह गर्भमें रहे उसकी माता तन्दुरुस्त, सुखी, और सब प्रकारकी चिन्ताओंसे मुक्त रहे।

स्त्रीके सारे शरीरपर विवाहके अति दारुण और दूरतक पहुँचनेवाले परिणाम उसको कुछ देर बादकी अपेक्षा विवाहके बिलकुल आरम्भमें ही बच्चा पैदा करनेके कम योग्य बना देते हैं

क्योंकि बादको शरीर अपनेको नई अवस्थाओंके अनुकुल बना लेता है।

न केवल बच्चे के लिए ही, वरन् विवाहित कान्त-कान्ताको भी स्थायी सुखकी प्राप्तिके लिये, पहला गर्भाधान कुछ देरसे करना चाहिए। बुद्धिमत्ता प्रायः (यद्यपि कदाचित् सदा ही नहीं) इसीमें है कि उस अपरिहार्य संधिच्युति—जोड़के हिल जाने—तथा पुनर्व्यवस्थाके पहले, जिसका होना भार्याके गर्भ तथा बालकके प्रसवके लिए आवश्यक है, वे दोनों एक दूसरेके साथ अपने संबंधको पूर्ण रूपसे स्थापित कर लें।

इस पुस्तकमें मैं उतनो सार्वत्रिक स्त्री-पुरुष-संबंधका नहीं, जितना कि उन लोगोंका वर्णन करती हूँ जो आज अपनेको इङ्गलिश भाषा-भाषी लोगोंके अतीव सभ्य तथा कृत्रिम समाजोंमें पाते हैं; और हमारे वर्तमान समाजमें, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं, सन्तानका जल्दी पैदा होना पुरुषसे बहुत अधिक आत्म-त्याग तथा आत्म-निग्रह चाहता है। इसका एक प्रत्यावर्तित स्पंदन यह है कि पुरुषमें क्षतिका एक अनिर्वचनीय भाव हो जाता है,और पत्नीसे जुदाई हो जाती है।यह बात मुझे अनेक ऐसे पुरुषोंने एकान्तमें कही है जिन्होंने मुझे उदारतापूर्वक अपने जीवनोंके रहस्य बतानेका पात्र समझा है। श्रीयुत स० इस श्रेणीके लोगोंका एक नमूना है।

वह बड़ा शान्त और सुसस्कृत था।उसमें सरस प्रेमका प्रबल भाव मौजूद था। वह प्रेम सर्वथा उसकी पत्नीमें ही केन्द्रीभूत

था। उसमें मैथुनको आवश्यकताका अनुभव करनेके लिये पर्याप्त पुरुषत्व तथा वीर्य था, परन्तु वह (अनेक दूसरे पुरुषोंके सदृश) स्त्रीकी अनुरूप आवश्यकतासे अनभिज्ञ था; और वह अपनी स्त्रीमें कभी कामका प्रचण्ड आवेग उत्पन्न न करता था। इस-लिये स्त्रीको सुरत-क्रियामें कुछ भी आनन्द न मिलता था। क्योंकि यह उसके लिये अधूरी होती थी।

विवाहके शीघ्र ही पश्चात् उसे गर्भ हो गया, और विवाहके दिनके दस मास पश्चात् एक बालक उत्पन्न हुआ।

बालकके जन्मके दो वर्ष बादतक उसकी जीवन-शक्ति इतनी कम हो गई कि उसे सुरतसे इतना विराग हो गया कि उसने अब पतिसे समागम करनेसे इनकार कर दिया; और इस प्रकार विवाहके तीन वर्ष बाद ही वे दुबारा स्वाभाविक रीतिसे मिल सके। इस समयतक, सम्भोगसे देरतक अलग रहने, पुरुषपर पड़नेवाले आयास, और उसके साथ घरमें प्रति दिनके मेल-जोलने पुरुषकी रसिकताको यदि सर्वथा नष्ट नहीं, तो मंद तो अवश्य कर दिया था। वह स्वाभाविक उत्तेजन जो एकको दूसरेसे उत्पन्न होना चाहिए नष्ट हो चुका था, फलतः समागममें वे प्रहर्षकी परस्पर गरमीका कभी अनुभव नहीं करते थे।

एक और जोड़ा भी इसी प्रकार दुःखित था। श्रीमान् तथा श्रीमती द०को पत्नीकी वास्तविक तथा कल्पित बीमारीके कारण कई वर्षतक सम्भोगसे रोक दिया गया था। कुछ समयके बाद वह निरोग होकर सम्भोगकी तीव्र लालसा करने लगी, परन्तु

अब पतिको रत करना असम्भव जान पड़ा। उसके अपने ही शब्दोंमें, उस समय पत्नीके साथ समागम करना उसे मानों "अपनी बहिनपर बलात्कार करना" प्रतीत होता था।

एक बार ऐसा भाव पुरुषके मनमें अङ्कुरित हो जानेपर "पहले सुन्दर आदि आनन्दको पुनः प्राप्त करना" बहुत कठिन हो जाता है। और उस आदिमें मिलनेवाले आनन्दके छिन जानेसे दोनों, अपने शेष जीवनोंके लिए, उस देदीप्यमान हर्षको खो बैठते हैं जो, न केवल अपने सौंदर्यके कारण, वरन् उस जीवनी शक्तिके कारण भी जिसके साथ कि इसके पङ्ख लदे हुए हैं, अमूल्य है।

इसके विपरीत, यदि कुछ मासतक (अथवा यदि वे किशोर हों तो कुछ वर्षतक) विवाहित जोड़ेने अपनेको परस्पर व्यवस्थित करना सीख लिया है और पूर्ण प्रणयकी पूरी सम्भावनाओंका अनुभव कर लिया है, तो बालकके जन्मसे होनेवाला संक्षोभ उनके सुखके लिये किसो प्रकार हानिकारक नहीं होता, वरन् वह इसका मुकुट और पूर्णता सिद्ध होता है।

एक पुरुषने एक बार मुझसे कहा—"प्रिय पत्नीके लिये पुरुष सब कुछ सहन कर सकता है।" परंतु *पत्नी* केवल उस समय परम प्रिया होती है जब वह और उसका कान्त न केवल इकट्ठे स्वर्ग भोगते हैं, वरन् जब वह, अपने अनुभवोंसे प्राप्त की हुई अन्तर्दृष्टिके द्वारा, उस चीज़के वास्तविक स्वरूपको समझ लेती है जिससे वह, जबतक उसकी शारीरिक दशा पतिके साथ

शारीरिक संयोगको असम्भव बनाए हुए है तबतक, पतिको वंचित रखती है।

जब स्त्री गर्भवती हो तब पति और पत्नीको सम्भोग करना चाहिये या नहीं करना चाहिए, इस विषयमें लोगोंने बहुत कुछ लिखा है, और स्त्री-पुरुष-धर्म्म सम्बन्धी समस्याओंकी असंख्य पुस्तकोंमें देखा जा सकता है। इस विषयमें अनुभव नानाविध हैं, इसलिए प्रत्येक जोड़ेकी पूरी पूरी अवस्थाओंको जाने बिना कोई निश्चित परामर्श देना असम्भव है।

किन्तु जब हम वनमें रहनेवाले जीवोंकी गर्भवती नारियोंकी प्रशंसनीय पवित्रताको देखते, और जब हम स्त्रीकी आवश्यकताओंके असाधारण अज्ञात और अनादरपर, जो हमें अपनी अनेक आधुनिक प्रथाओंमें देख पड़ता है, विचार करते हैं, तो इस संदिग्ध विषयका यही हल ठीक जान पड़ता है कि गर्भिणी बालकके जन्मसे कमसे कम छः मास पहलेतक पूर्ण ब्रह्मचर्यसे रहे। परन्तु मैंने अनेक स्त्रियोंसे सुना है कि इस समय उन्हें संयोगकी प्रबल कामना होती है, पर कई ऐसी भी हैं जिन्हें इसका विचार भी अविश्वास्य प्रतीत होता है।

स्मरण रहे कि अधिक प्राथमिक जीवोंका दृष्टान्त बहुत दूरतक नहीं घटाया जा सकता, क्योंकि सहस्रों रीतियोंसे हम बहुत उच्च सभ्यता-प्राप्त मानव अपने पैतृक स्वभावोंको छोड़कर नवीन दिशाओंमें विकसित हो चुके हैं। गर्भवती स्त्रीके साथ संयोग करना चाहिये या नहीं, यह एक ऐसा प्रश्न है जिसपर वैज्ञानिक

खोज होनी चाहिए। ऐसे स्त्री-पुरुष बहुत थोड़े हैं जिनका मन इतना पवित्र और हृदय इतना उदार हो कि वे इस संबंधमें अपने भावोंको लेखबद्ध करें, और ऐसे डाक्टर बहुत थोड़े हैं जिनमें इतनी कोमल समवेदना हो कि वे इन बातोंको, यहाँतक कि उन स्त्रियोंमें भी जिनको व्यक्तिगत रूपसे उनका ज्ञान है, पूछकर मालूम कर सकें। जो प्रमाण मैंने इस विषयमें सीधे तौरपर व्यक्तिगत विश्वासके द्वारा इकट्ठे किए हैं वे एक दूसरेसे सर्वथा विपरीत परिणामोंपर ले जाते हैं, और इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि इस विषयमें, गर्भवती स्त्रियोंमें स्वास्थ्य, आवश्यकताएँ, और मानसिक अवस्थाकी दृष्टिसे भारी अन्तर होता है। मैंने एक प्रसिद्ध डाक्टरी विशेषज्ञसे यह मनोरञ्जक सूचना प्राप्त की है कि उसके अपने ही रोगियोंमेंसे एक या दोमें, जहाँ संभवनीय माता—गर्भवती स्त्री—संयोग करना चाहती थी परन्तु पतिने उसीके हितसे ऐसा करनेसे इनकार कर दिया था, डाक्टरने देखा कि उनकी सन्तान बड़ी होकर अशान्त तथा दुर्दमनीय प्रतीत होती थी और उसमें हस्त-मैथुन आदिकी प्रवृत्ति मर्यादासे बहुत अधिक देख पड़ती थी। इस अतीव प्रबोधक तथा महत्वपूर्ण कल्पनापर मुझे माता-पिता तथा चिकित्सकोंसे साक्षी प्राप्त करके बड़ी प्रसन्नता होगी; क्योंकि बहुत बड़ी संख्यापर विचार करनेसे ही विश्वास्य सिद्धान्त नहीं बनाए जा सकते। परन्तु जिस प्रकार सर्वसाधारणका यह मत है कि गर्भिणी जिस भी निर्दोष पदार्थके खानेकी इच्छा करे वह उसे दे देना चाहिए, क्योंकि

इसमें माता तथा बच्चे दोनोंकी भलाई है, इसी प्रकार, मेरी सम्मतिमें, यह बहुत अधिक संभव जान पड़ता है कि संभाव्य माता तथा आनेवाले बच्चे के पितामें मर्यादित तथा सावधानता-पूर्वक संभोगकी यदि कोई कामना उत्पन्न हो तो उसे तीनोंके हितके लिये तृप्त कर देना चाहिये। इस बातका निश्चय करनेके लिये अब मेरे पास पर्याप्त प्रमाण हैं कि कई स्त्रियोंको गर्भकी अवस्थामें संभोग करनेसे बड़ा लाभ होता है। सम्भोगके लिए अमर्यादित तथा बहुत अधिक इच्छाको निस्सन्देह एक अशुभ लक्षण समझना चाहिये, और इसके संबंधमें किसी योग्य डाक्टरसे परामर्श लेना चाहिए।

जिस स्त्रीके गर्भमें उस पुरुषके वीर्यसे बालक है जिसपर उसका घनिष्ट प्रेम है, उसके मनमें यह प्रबल लालसा होती है कि वह पुरुष, जहांतक सम्भव हो, उस बालकपर गर्भहीमें प्रभाव डालनेमें मेरा हाथ बटाए, और वह बच्चे के तथा मेरे इतना निकट तथा समीप हो जितना कि सम्भव हो सकता है। हम कल्पना कर सकते हैं कि इस लालसाका मूल, यही नहीं कि केवल मस्तिष्कका कोमल भाव ही हो, वरन् इसका निर्भर सूक्ष्मदर्शक यंत्रसे भी न दिखाई देनेवाले अतीव सूक्ष्म कणोंके उस शोभन वैषयिक विनियमपर है जो शारीरिक संसर्गके समय त्वचा और त्वचाके बीच अवश्य ही होता है। इस कल्पनाका पूर्वाभास कारपेण्टर रचित "लव्स कमिंग ऑव एज"में बड़ी सुन्दर रीतिसे दिया गया है।

जिस स्त्रीके पेटमें बच्चा है उसे प्रचण्ड प्रकारका स्नायु-संबंधी कामावेग नहीं होना चाहिए—वास्तवमें, उसे हो ही नहीं सकता, परन्तु यह सूक्ष्मतर तथा गम्भीरतर मिठास तथा एकतानता उत्पन्न करनेवाला संयोग न केवल अद्भुत समर्थन ही रखता है, वरन्, मैं समझती हूं, जब विज्ञान ऐसी सूक्ष्म बातोंपर विचार करनेके लिये पर्याप्त शीघ्रग्राहक (Sensitive) हो जायगा, तो वह इसका एक वास्तविक जीव विद्या-संबंधी रासायनिक आधार (Biochemical basis,) सिद्ध कर देगा।

अधिकांश लोगोंमें नेत्रोंके सामने कल्पनाका चित्र खींचनेकी उचित शक्ति नहीं, इसलिये मुझे यह कहनेकी आवश्यकता है कि इस कालमें स्त्रीके लिए संयोगका साधारण आसन उपयुक्त नहीं—सच पूछो तो, बहुत हानिकारक है, परन्तु स्त्री और उसका पति बड़ी सुगमतासे आपसमें इस प्रकार लिपट सकते हैं कि दोनोंका भार बिछौनेपर या तकियोंपर पड़ता है, और स्त्रीपर कुछ भी दबाव नहीं पड़ता।

जिन दिनों पत्नी गर्भवती हो या बालकको दूध पिला रही हो, उन दिनोंमें टालस्टाय समागमका घोर निषेध करता है, और उस पतिको दोषी ठहराता है जो "स्त्रीपर एक ही साथ प्रणयिनी, थकानसे चकनाचूर हुई माता और रुग्ण, चिड़चिड़ा, वायुग्रस्त व्यक्ति होनेका असह्य भार लाद देता है। और पति उससे प्रणयिनीके तौरपर प्रेम करता, माताके रूपमें उसकी उपेक्षा करता, उस चिड़चिड़ापन तथा गर्भाशयोन्माद (हिस्टीरिया) के लिए

उससे घृणा करता है जिनको उसने आप ही उत्पन्न किया है।" उनके इस मतको हमारे अनेक श्रेष्ठ पुरुषोंने ग्रहण कर लिया है।

जब पत्नी अनुभव करती है कि जिस समय मेरा शरीर एक वृद्धिशील जीवका पवित्र मन्दिर बन चुका है मैं पतिको उसकी डेवढ़ीमें प्रवेश करनेकी आज्ञा नहीं दे सकती, तो उसे उस सतत आयासका भी विचार करना चाहिये जो प्रकृति पुरुषपर डालती है। तब सहृदय तथा प्रेममयी पत्नी शीघ्र ही पुरुषको वह शारीरिक विश्राम देनेका कोई साधन निकाल लेगी जो पतिकी प्रकृति चाहती है।

जो पत्नी पुरुषकी आवश्यकताओंको समझनेके कारण, उसके साथ सहानुभूति दिखलाती है, उसके साथ मानसिक तथा आध्यात्मिक एकतानताके भावसे पुरुषमें एक उत्कृष्ट, स्वार्थ-रहित कोमलता जाग्रत होती है। यह विवाहकी सबसे अधिक मनोहर बातोंमेंसे एक है। जो पत्नी पुरुषमें इस कोमलताको जाग्रत करनेकी विधि जानती है वह उसको उस दलदलमेंसे बाहर निकाल देती है जिसमें बहुतसे पुरुष दुःखसे डूब रहे हैं।

एक उत्तप्त पुरुषकी दशामें, जो एक पत्नीव्रती हो और चिरकालसे पत्नीसे न मिला हो एक समय ऐसा आयेगा जब उसको स्त्रीके निकट जाना तथा उससे लाड़-प्यार करनामात्र, मैथुनके बिना ही, उसे शान्त करनेके लिए पर्याप्त होगा।

पहले बालकके जन्मके पश्चात् माता तथा शिशु दोनोंका स्वास्थ्य चाहता है कि शीघ्र ही दूसरे शिशुका आरम्भ न कर

दिया जाय। *कमसे कम* एक वर्ष बीतनेके पश्चात् ही दूसरे शिशुको गर्भमें प्रवेश होने देना चाहिए, जिससे दूसरे बालकके जन्मके पूर्व *कमसे कम* लगभग दो वर्ष अवश्य बीत जायँ।

इसको, महत्वको, माता और शिशु दोनोंके लिए, डाकृरीके विशेषज्ञ प्रायः पर्याप्त रूपसे स्वीकार कर चुके हैं, और कई प्रसिद्ध स्त्रीरोग-चिकित्सक तो यहाँतक कहते हैं कि एक दूसरेके बाद उत्पन्न होनेवाले दो बच्चोंके जन्मोंके बीच तीन या पाँच वर्षका अन्तर होना चाहिये। एक ओर जहाँ सारे मानवी सम्बन्धमें कोई भी दासता या यातना इतनी भीषण नहीं जितना कि माता बननेकी इच्छा न रखनेवाली स्त्रीको डराकर बलात् माता बनाना, वहाँ, दूसरी ओर, उस स्त्रीके आनन्द तथा गर्वसे बढ़कर और कोई दूसरा आनन्द और गर्व भी नहीं है जो उस पुरुषके शिशुको गर्भमें धारण कर रही है जिसकी वह आराधना करती है। हमारी विषाक्त "सभ्यता" पर यह एक घोर कलंक है कि एक गर्भवती स्त्रीको बाज़ारमें आनेसे लज्जा हो। यह जाति तबतक कभी भी सच्चा स्वास्थ्य-लाभ न करेगी जबतक इसका कंडूल रोग दूर नहीं होगा; और जबतक कि गर्भिणी उसी प्रकार अभिमानके साथ न फिर सकेगी जिस प्रकार कि भक्त लोग आर्तिके समय फिरते हैं।

यद्यपि गर्भिणीके स्वास्थ्यके साधरण प्रबंधसे संबन्ध रखनेवाली अधिक आवश्यक और अधिक ज्ञात बातोंके विषयमें उपदेश देना इस पुस्तकके क्षेत्रसे बाहर है,तो भी दो एक बहुत ही

महत्वपूर्ण बातें ऐसी हैं जिनपर प्रायः ध्यान नहीं दिया जाता और जिनका स्त्रीके स्वास्थ्य तथा सुख दोनोंपर गहरा असर पड़ता है; और जो बच्चेपर भी प्रभाव डाल सकती हैं। उदाहरणार्थ, प्रसिद्ध चिकित्सक "सवेरेकी बीमारी" (जिसमें गर्भिणीको सवेरे वमन होते हैं) को, जो गर्भके पहले महीनोंमें बहुत अधिक हुआ करती है, एक "शरीर-विज्ञान-संबंधी क्रिया" समझते और सुशीलता-पूर्वक इसे बिलकुल स्वाभाविक बताकर इसको सहन करनेका उपदेश देते हैं। यह शोचनीय तौरपर स्वास्थ्यका बहुत नीचा आदर्श है। स्त्रीके जीवनके जो सबसे अधिक आनन्दमय सुन्दर मास होने चाहियें उनके साथ यह अपेक्षाकृत थोड़ा परन्तु जी मतलाने-वाला अनुभव क्यों हो ? मेरी सम्मतिमें इसके लिये बिलकुल कोई कारण नहीं, सिवाय इसके कि डाक्टर लोग अन्धोंके अंधे नेता हो रहे हैं; सदा दुर्बलों तथा अर्द्ध-दुर्बलोंके साथ व्यवहार करनेका स्वभाव होनेके कारण, उनमें वह सहज-बुद्धि ही नहीं रही जिससे वे मनुष्योंमें स्वास्थ्यकी उच्च तथा प्रसन्न दशाकी माँग कर सकें। उधर स्त्रियाँ अनियमित मैथुनके अनुचित निकाससे इतनी दुःखित हैं,व "सभ्य" जीवनने उनकी जीवनी-शक्तिको इतना घटा दिया है, कि अपने चारों ओर एक दूसरीको बीमार देखते देखते वे भी स्वास्थ्य तथा देदीप्यमान शारीरिक सौन्दर्यकी जातीय स्मृतिको खो बैठी हैं।

अपवाद-स्वरूप ही कोई कोई स्त्री ऐसी देख पड़ती है जिसे गर्भके महीनोंमें जी मतलानेका रोग न होता हो। उसको एक

अपवाद समझनेके स्थानमें, जैसा कि आजकल सब समझते हैं, एक ऐसा स्वाभाविक आदर्श ख़याल करो जो सबको प्राप्त करना चाहिए ! यदि हम चाहते हैं कि प्रत्येक भावी माता इस आदर्शको प्राप्त कर ले तो सब तरुणी स्त्रियोंको यह ज्ञान होना चाहिये कि, ज्योंही उन्हें मालूम हो कि हम गर्भवती हैं, उन्हें न केवल कोर्सेट (अंगरेज़ स्त्रियोंकी कुरती) ही वरन् प्रत्येक प्रकारके वे सब कपड़े जो चुस्त, तंग, भारी हों या जो कसकर बाँधे जाते हों फ़ौरन छोड़ देने चाहियें। विशेषज्ञ केवल इतना कहकर ही सन्तुष्ट हो जाते हैं कि तीसरे या चौथे मासतक " सुखदायक" कोर्सेट (अंगिया) पहननेसे स्त्रीको कोई हानि नहीं होती। मैं इसे एक पथभ्रष्ट करनेवाली मूर्खता समझकर इसका प्रतिषेध करती हूँ ।

ऐसे समयमें स्त्रीकी प्रकृति दबाव या भारको असाधारण-रूपसे पालती है, यद्यपि बहुधा उसे इसका ज्ञान नहीं रहता, और हलकेसे हलके दबावका भी दण्ड 'सवेरेका रोग' अर्थात् जीका मतलाना होता है। कपड़े इतने हलके और इतने ढीले होने चाहियें कि यदि एक तितली कपड़ोंके नीचे नंगी त्वचापर चले तो उसके पंख न टूटने पायँ। हो सकता है कि मेरी यह बात प्रायः प्रत्येक-को अतिशयोक्ति जान पड़े, परन्तु यह एक बहुत बड़ी सचाई है।

इस कालमें गर्भिणीके स्वास्थ्यको उत्तम रखनेके लिये दूसरी आवश्यक बात यह है कि वह जितने भी अधिक परिमाणमें हो सके न-राँधे हुए फल, विशेषतः संतरे, सेव, नाशपाती, आम और बेर, भोजनके रूपमें खाय।

गर्भिणीकी स्वास्थ्य-रक्षापर नाना पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं, यद्यपि उनमेंसे बहुत थोड़ी ही ज्ञानवर्द्धक हैं। इसमें अव्याकृत रसायन-शास्त्र-संबंधी अनेक शोचनीय भूलें होनेपर भी, इस विषयकी जितनी भी पुस्तकोंका मुझे ज्ञान है उनमें सबसे उत्तम डाकृरनी एलाईस स्टाकहमकी "टोकालोजी" (Dr, Alice Stockham's Tokology) है। इसकी अपेक्षाकृत तुच्छ अशुद्धियाँ, जैसे कि कार्बोनिसियस सामग्रीको कार्बोनिट कहना, एक वैज्ञानिकको उसकी पुस्तकके अवशिष्टांशके विरुद्ध कर देनेके लिए पर्याप्त होते हुए भी, वस्तुतः उसके संदेशके निचोड़की गहरी सचाईपर असर नहीं डालता। यह संदेश बहुत देर हुई पहलेपहल एक बुद्धिमान वृद्ध अँगरेज़ने जनताको दिया था।

मैं उन असंख्य समस्याओंके विषयमें यहाँ कुछ नहीं कहूँगी जिनका संबंध माता-पिताके सन्तानमें जानेवाले गुणोंके साथ है, और जिनका अध्ययन सुप्रजाजनन-शास्त्र (यूजेनिक्स) का विषय है; न ही मैं जन्म तथा शिशुपालन तथा शिक्षणके प्रश्नोंपर विचार करूँगी। अनेक लेखक इन विषयोंपर विचार कर चुके हैं। मेरा उद्देश्य इस पुस्तकमें स्त्रीपुरुष-धर्म्म-संबंधी उन अवस्थाओंको उपस्थित करना है जिनकी दूसरोंने थोड़ी या बहुत उपेक्षा की है।

मैं इस सारी पुस्तकमें नियमातिरिक्त अवस्थाओंपर विचार करनेसे बचती रही हूँ, परन्तु एक अवस्था ऐसी है जो नियमातिरिक्त कहलानेकी ओर झुकी हुई है, किन्तु कई ऐसे विवाहित

लोगोंके जीवनोंके साथ लगाव रखती है जो व्यक्तिगत रूपसे स्वाभाविक तथा नीरोग दोनों हैं। इसके संबंधमें कुछ शब्द कहनेकी आवश्यकता है।

बहुधा ऐसा होता है कि एक नीरोग, एक दूसरेसे प्रेम करनेवाला जोड़ा बिना किसी व्यक्त कारणके, सन्तान उत्पन्न करनेमें असमर्थ प्रतीत होता है।

कुछ तो हमारी उस शारीरिक रचनाके कारण जिसमें एक युवक और युवतीके लिये न केवल विवाह-बंधनमें बंध जाना वरन् वर्षों विवाहित रहना सम्भव है, कभी कभी व्यक्त रूपसे निःसंतान संयोगोंका कारण जोड़ेमेंसे किसी एक की, किसी भी अर्थमें, माता-पिता बननेमें असमर्थता नहीं होता, किन्तु कई बार तुच्छसी रुकावटोंके कारण, जो सहजहीमें दूर की जा सकती हैं, या शरीर-रचनाकी क्षुद्र विशेषताओंके कारण, जो बहुत सरलतापूर्वक दबाई जा सकती हैं, सन्तान उत्पन्न नहीं होती।

एक ओर तो विवाहित जोड़ोंकी एक बहुत बड़ी संख्या, संयमसे काम न लेनेके कारण, बहुत अधिक बार गर्भ रहनेसे वस्तुतः दुःख पा रही है या पायगी, दूसरी ओर, अभीतक भी—विशेषतः मध्यम तथा उच्च श्रेणियोंमें—अनेक ऐसे भावी माता-पिता हैं जो सन्तानके लिये तरस रहे हैं परन्तु किसी रहस्यपूर्ण रीतिसे वे उनसे वंचित किये गए हैं। हो सकता है कि डाक्टरोंने स्त्री और पुरुष दोनोंकी परीक्षा करके उनको बिलकुल स्वाभाविक, सर्वथा नीरोग, सन्तान उत्पन्न करनेमें पूर्णतया समर्थ बताया हो,

और फिर भी सन्तान न हो। कभी कभी इसका कारण स्त्रीकी योनिमेंसे निकलनेवाला ज़रा-सा खट्टा रस होता है। यह अम्ल-स्राव स्त्रीको तो कुछ हानि नहीं पहुँचाता, और इसका उसको ज्ञान भी नहीं होता, परन्तु यह सकर्मक शुक्रकीटको अशक्त बना देनेके लिये पर्याप्त होता है, इसलिये कई बार मैथुनसे थोड़ा पहले योनिको सोडियम कार्बोनेट जैसे अम्लको निर्बल कर देने-वाले किसी हलकेसे घोलके साथ पिचकारीद्वारा धो डालनेसे गर्भ रहनेकी पर्याप्त आशा हो जाती है। एक और कारण, जिससे कभी कभी प्राणभूत शुक्रकीट उसकी प्रतीक्षा करनेवाले स्त्रीके सूक्ष्म अण्डेमें प्रविष्ट नहीं हो पाता, गर्भाशयके मुखपर क्लेद—वमी—की प्रचुरताका होना है। ऐसी दशामें स्त्रीके लिये आवश्यक है कि वह, पुरुषके वीर्यके क्षरित होनेके पहले नहीं वरन् उसके साथ एक ही समयमें या उसके बाद, वस्तुतः पूर्ण और बहुत ही प्रचण्ड कामावेशको प्राप्त करे। बहुधा यह युक्ति दी जाती है कि स्त्रीके पूर्ण कामावेगको प्राप्त करने या न करनेसे कोई अन्तर नहीं पड़ता, क्योंकि बहुतसे ऐसे दृष्टान्त मौजूद हैं जिनमें स्त्रियोंको कभी भी कामावेगका अनुभव नहीं हुआ परन्तु बच्चे कई हो गए हैं; किन्तु प्रायः इस बातको भुला दिया जाता है कि स्त्रियोंके अनेक भिन्न भिन्न प्रकार हैं, और जहाँ एक प्रकारकी स्त्री, जो बड़ी ही फलवती माता और चौड़ी योनि तथा थोड़ेसे भीतरी क्लेदवाली होती है, कामावेगके बिना भी एक दर्जन बार गर्भवती हो सकती है, वहाँ एक बहुत ही शीघ्र घबरा

जानेवाली, समान रूपसे पूर्ण, स्त्री, हो सकता है कि, केवल उसी समय गर्भवती हो जब कि शुक्रकीट वस्तुतः उसकी योनिमें हो और वह कामावेगका अनुभव करती हो।

जो स्त्री कम गर्भवती होनेवाली नहीं उसके गर्भवती होनेमें एक दूसरी बाधा गर्भाशयके मुखकी स्थिति तथा योनिकी नालीका संबंध है। हो सकता है कि यह नाली ऐसी हो कि वीर्य गर्भाशयके द्वारमें प्रविष्ट होनेके बिना ही साराका सारा नष्ट हो जाय। इस बाधाको दूर करनेके लिये बहुधा इतना ही पर्याप्त होता है कि सुरत-क्रियाके पूर्ण होते ही स्त्री उलट जाय और मुँहके बल कुछ घंटोंतक लेटी रहे।

यह बात निर्विवाद है कि, सब स्त्रियोंमें ऐसे समय आते हैं जब उनमें सन्तानोत्पत्तिकी शक्ति ज़ियादह या कम हो जाती है, परन्तु कई स्त्रियोंमें यह बात औरोंकी अपेक्षा कम स्पष्ट होती है, और कई एककी अवस्थामें गर्भकी स्थिति चान्द्रमासकी प्रायः किसी भी तिथिमें हो सकती है; परन्तु दूसरी स्त्रियोंकी अवस्थामें तीन-चारसे लेकर एक दर्जन या अधिक दिनोंका एक समूह होता है जिसमें गर्भकी स्थिति असम्भव जान पड़ती है; फिर दिन, नपुंसक दिनोंके इस समूहके दूसरी ओर, अधिक जनन-विषयक प्रभाववाली एक तिथिकी ओर क्रमशः ऊपरको उठते हैं। अतएव, उस पत्नी और पतिको, जो सन्तानकी आकांक्षा करते हैं, परन्तु जिन्हें विवाहके कुछ वर्ष पश्चात् माता-पिता बननेका सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ, अपने समागमोंके लिये वे

दिन चुनने चाहियें जिनमें गर्भस्थितिकी बहुत अधिक सम्भावना होती है। प्रायः यह देखा गया है कि—बहुत थोड़े अपवादोंके सिवा—गर्भस्थितिकी सबसे अधिक निश्चित तिथि मासिक अवधिके अन्तिम दिनके लगभग, या इसके चटपट एक या दो दिन बाद है; इसलिये जो पति बड़ी उत्सुकतासे चाहता है कि मेरी पत्नीको गर्भ रह जाय, उसे चाहिए कि, उसकी अनुमतिसे, यथासम्भव ऐसी ही तिथियोंमें समागम किया करे।

इसके विपरीत, इस बातको भी न भूलना चाहिए कि गर्भवती होनेकी लालसाका सारे मज्जातन्तुजालपर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। बहुत उन्मत्त लालसा, जिसके कारण बहुत अधिक बार समागम किया जाय, सम्भवतः अपने उद्देश्यकी पूर्तिमें बाधक हो जाती है, क्योंकि शुक्रकीटके सूक्ष्म अण्डेके साथ मिलकर एक हो जानेसे ही गर्भाधान पूर्ण नहीं हो जाता, वरन् इसके लिए उस अण्डेके, जो हरा हो चुका है, गर्भाशयकी दीवारके साथ चिपक जानेकी भी आवश्यकता है, और हो सकता है कि लालसाका प्रचण्ड नाड़ीगत क्षोभ इसको चिपकनेसे रोक दे। वास्तवमें, गत शताब्दीके एक प्रामाणिक डाक्टरने कहा है कि उन जातियोंमें, जिनके यहाँ स्त्रीपुरुष-धर्म्म-विषयक ज्ञानका निषेध नहीं, ऐसी स्त्रियाँ हैं जो जब चाहें अपनी इच्छापूर्वक गर्भवती हो सकती हैं, और केवल नाड़ियोंका बल लगाकर शुक्रकीटके मिलनेसे हरे हुए अण्डे (गर्भीकृत गर्भाण्ड) को जानबूझकर गर्भाशयसे बाहर निकाल

सकती हैं *। आधुनिक समाजमें जो स्त्री अत्यन्त चंचलताकी दशामें रहती है, जैसा कि उसके बार बार सिग्रट पीने तथा उत्तेजना चाहनेमें प्रकट हो सकता है,हो सकता है कि वह(यद्यपि यह बात सार्वत्रिक रूपसे सच नहीं हो सकती) बार बार गर्भ-वती हो और उस अण्डेके गर्भाशयकी दीवारके साथ चिपक जानेके पूर्व, जिसका फल कि सच्ची गर्भस्थिति होता है, शुक्रकीट-द्वारा हरे हुए अण्डेको निरन्तर बाहर निकालती रहे। अतएव माता बननेकी उत्कट इच्छा रखनेवाली स्त्री यदि अपनेमें सदा तमाकू पीते रहनेका दुर्व्यसन देखे, या अपनी नाड़ियोंमें शान्तिके अभावका कोई लक्षण पाय, तो उसे चाहिए कि, न केवल तमाकू पीना बन्द कर दे, जो कि एक गहरी आवश्यकताका एक चिह्न है, वरन् दीर्घ निद्रा, खुली हवामें अधिक रहने, प्रचुर ताज़ा मक्खन या किसी भी और सादा उपायके द्वारा जो उसकी नाड़ियोंको वह चीज़ दे सकता है जिसका उनमें अभाव है, और जिसके लिए वह अज्ञानतः याचना कर रही है, यथासम्भव अपने सारे शरीरमें एक प्रशान्त तुल्यता स्थापित करे।

यद्यपि यह बात कई लोगोंको अविश्वास्य जान पड़ेगी तो भी यह उतनी कम मिलनेवाली नहीं जितनी कि शायद समझी जायगी, कि तरुण जोड़ा कई वर्षतक विवाहित रहे, और इसपर

*—इस संबंधमें देखो मेरा बनाया 'सन्तान-संख्याका सीमा-बंधन' सरस्वती-आश्रम, हस्पताल रोड, लाहौर द्वारा प्रकाशित, मूल्य ३॥)—अनुवादक।

भी पत्नी, जोड़ेमेंसे किसी एकको भी इस बातका ज्ञान न रहनेसे कि लिङ्गका प्रविष्ट करना आवश्यक है,शारीरिक रूपसे कुमारी ही बनी रहे। आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि इस प्रकारके चार-पाँच मनुष्य, जो सबके सब व्यक्त रूपसे समझदार जान पड़ते थे, केवल एक ही वर्षमें मेरे ज्ञानमें आए हैं। एक दूसरा कारण यह है कि स्त्री सम्भोग-कालमें उचित स्थिति ग्रहण न करनेसे लिङ्गके पूर्ण प्रवेशको कठिन या असम्भव बना देती है। ऐसे लोग आसनोंका यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर लेनेपर शीघ्र ही गर्भाधान कर सकते हैं।

ये ऐसी सूचनाएँ हैं जिनपर डाकृरनियाँ बहुधा ध्यान ही नहीं देतीं। उनके पास स्त्री काँपती हुई जाती है और पूछती है कि क्या मेरे शरीरकी रचना कहींसे अस्वाभाविक है, क्योंकि मेरे सन्तान नहीं होती, यद्यपि मैं उसके लिए इतनी लालायित हूँ। मेरा उपर्युक्त उपदेश केवल उन्हीं लोगोंको काम देगा जो सारतः स्वाभाविक हैं और जिनमें कोई अपरूपता नहीं। सन्तान होनेमें यदि अधिक घोर रुकावटें हों तो, केवल स्त्री हीको नहीं, वरन् जोड़ेको, किसी योग्य डाकृरसे परामर्श लेना चाहिये।

पुराने ढर्रेके लोगोंका यह विचार था कि दोष स्त्रीमें होता है। इसलिए बाँझ होनेके दूषणसे अनेक हृदयोंको अकथनीय दुःख होता था। परन्तु अब यह बात मानी जाने लगी है कि संभोगसे सन्तान न होनेमें बहुधा पुरुषका भी उतना ही "दोष" है, यदि इसे दोष कहा जा सकता है, जितना कि स्त्रीका,

विशेषतः जब कि पति नगरमें मस्तिष्क-सम्बन्धी कार्य करनेवाला हो।

यद्यपि यह स्वाभाविक है कि दम्पतीको उस बालकसे, जो उनके अपने संयोगसे उत्पन्न नहीं हुआ, वैसा ही आनन्द प्राप्त न हो, तो भी, एक वदान्य और विशाल-हृदय पुरुषको अपनी पत्नी-के बालकमें बहुत आनन्द मिल सकता है, यदि उस बच्चेकी प्राप्ति माताके शरीरको किसी दूसरे पुरुषके बाहुपाशमें अर्पित करनेके साथ युक्त न हो, क्योंकि यह प्रायः और स्वभावतः पतिके लिये घृणोत्पादक चेष्टा होती है। अब यहाँ विज्ञानकी भावी संभावनाएँ आती हैं। अठारहवीं शताब्दीके अन्तमें प्रसिद्ध डाक्टर हण्टरके परीक्षण, तथा उनके बादकी नवीन पुस्तकें हैं। उदा-हरणार्थ, "रायल सोसायटीको कार्यवाही, १८६७" में श्री०हीपके विचार और मार्शलकृत दि फिज़ियालोजी आव रीप्रोडक्शन,१९१०" नामक पाठ्य-पुस्तक देखिये।

प्रत्येक गर्भवती स्त्रीका पति बालकके दायमें प्रति दिन एक महत्वपूर्ण कार्य करता है, और उसकी आत्माकी सृष्टिमें वह एक बहुत बड़ा भाग ले सकता है। परन्तु खेद है कि मनुष्य-समाजने इसकी संभाव्यताओं—सुप्त शक्तियों—को प्रायः समझा ही नहीं।

जिन महीनोंमें बालक माताके गर्भमें बढ़ रहा होता है, माता अपनी मानसिक अवस्थाके द्वारा उसकी आत्मा तथा चरित्रपर जितना भी चाहे प्रभाव डाल सकती है, इस कल्पनाके

अविश्वासकी दृष्टिसे देखे जानेका डर है, क्योंकि इसका प्रमाणित करना कठिन है, और पुरुषकी बुद्धिको यह घृणित प्रतीत होती है, क्योंकि अब उसे जीवनको रासायनिक क्रियाका परिणाम समझने-का अभ्यास हो गया है।

तो भी मेरी जानी हुई सभी बुद्धिमती माताएँ माताकी इस शक्तिमें विश्वास रखती हैं। अन्तर केवल इतना है कि किसीका विश्वास कम है और किसीका कुछ अधिक। इस विश्वासमें सभी सहमत हैं कि माताकी आध्यात्मिक और मानसिक अवस्था तथा परिस्थिति बालकके चरित्र और मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियोंपर गहरा प्रभाव डालती है। "देदीप्यमान मातृत्व" नामक पुस्तकमें इसका सविस्तर वर्णन दिया गया है।

मार्शलने (यद्यपि इस सम्बन्धमें नहीं) एक ऐसी मनोरञ्जक बात उद्धृत की है जो स्त्रीके विचारका समर्थन करती है *। वह कहता है:—"यह देखा गया है कि जो मादा पहले ही रोगसे छुटकारा पा चुकी है उसका स्तन पान करनेसे पशुओंके बच्चे रोगसे मुक्ति लाभ कर सकते हैं, क्योंकि रोगका प्रतिविष उसके दूधमें घुला रहता है।" इस विशेष बातकी रसायन-शास्त्रकी दृष्टिसे व्याख्या की जा सकती है;परन्तु इन नालीहीन गिलटियों-से होरमोनस (रस) के निकलनेके दिनोंमें किसी व्यक्तिके लिये "रासायनिक दूतों" को उत्पन्न करनेवाली मातामें मानसिक

*—"दि फिज़ियालोजी आव रीप्रोडक्शन" पाठ्य-पुस्तकका पृष्ठ ५६६ देखो।

अवस्थाओंकी सम्भावनासे इनकार करना दु:साहससे अधिक प्रतीत होता है, क्योंकि ये द्रुत वृद्धिशील शिशुकी शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी प्रतिक्रियाओंपर अपने गुणोंकी स्थायी छाप लगा सकते हैं। एलिस (खण्ड ६, "सेक्स एण्ड सोसायटी", १९१३) कहता है:—"माता-पितामेंसे शिशुके लिये माता ही प्रधान है। गर्भाधानके समयसे लेकर जन्मतक भावी मनुष्यके स्वास्थ्यपर केवल वही प्रभाव असर डाल सकते हैं जो माताके द्वारा कार्य करते हैं।"

प्रसिद्ध प्राणिशास्त्रवेत्ता, एल्फ्रड रसल वालस, मानसिक प्रभावके संक्रमणको न असम्भव समझता था और न बहुत असंभाव्य ही *। मुझे विश्वास हो गया है कि यह संक्रमण सदा होता, और पैतृक घटकोंको ढालता तथा प्रभावित करता रहता है।

बहुतसे लोग ऐसे हैं जिनके आदर्श बहुत श्रेष्ठ हैं परन्तु जो अपने आदर्शोंकी सच्ची सिद्धिके लिये जीवनकी भौतिक क्रियाओं-को अनुकूल बनानेमें आश्चर्यजनक रीतिसे अक्षय हैं। इस प्रकार हमारे समाजका एक ऐसा भाग है जो इस बातपर हठ करता है कि विवाहित लोगोंके यहाँ उत्पन्न होनेवाले बच्चोंकी संख्यापर किसी प्रकारका सीमाबंधन नहीं होना चाहिए। वे गर्भविरोध को पाप समझते हैं। उनकी युक्ति यह है कि संभाव्य जीवनको

* देखो वैज्ञानिक पत्रिका, नेचर, को अगस्त २४ सन् १८९३ को उसकी लिखी हुई चिट्ठी (पृष्ठ ३८९ तथा ३९०)

नष्ट कर डालनेका हमारा कोई अधिकार नहीं। किन्तु यदि वे मनुष्योंके या पशुओंके शरीर-शास्त्रका थोड़ासा भी अध्ययन करेंगे तो वे देखेंगे कि न केवल प्रत्येक अविवाहित वरन् प्रत्येक विवाहित पुरुष भी अनवरत तथा अपरिहार्य रूपसे उन असंख्य शुक्रकीटोंका नाश करता है जिनमें स्त्रीके सूक्ष्म अण्डेके साथ संयुक्त होने, और फलतः, यदि उन्हें अवसर दिया जाय तो, बालक उत्पन्न करनेकी शक्यता है। इन बहुसंख्यक शुक्रकीटों-मेंसे, जिनका मरना स्वाभाविक तथा अपरिहार्य है, एक या दोके कल्पित निमित्त वे एक दूसरेके बाद जल्दी जल्दी बच्चे पैदा करनेको अच्छा बताते हैं। ये बच्चे एक दूसरेके बहुत निकट उत्पन्न होनेके कारण दुर्बल होते हैं। यदि इनका गर्भाधान एक दूसरेसे अधिक अन्तरपर किया जाता तो वे बलवान् और नीरोग हो सकते थे।

ऐसे लोग, यद्यपि उस बालकके अधिकारोंका, जो अभी उत्पन्न नहीं हुआ, वरन् जो अभी गर्भमें भी नहीं गया, तो ध्यान रखते हैं, परन्तु उस देवीके स्वत्वोंका उन्हें कुछ भी विचार नहीं जो पतिको सबसे प्यारी होनी चाहिये, और जिसके स्वास्थ्य तथा सुखका दायित्व उसपर है। पुराने सिद्धान्तोंको माननेवाला पुरुष अपनी पत्नीको प्रति वर्ष बच्चा पैदा करने देगा, वरन् बलात् बच्चा पैदा करता रहेगा। असाधारण स्त्रीको छोड़कर शेष सभी स्त्रियोंमें, एकके बाद जल्दी ही दूसरा बच्चा पैदा होते रहनेसे माताकी जीवनी-शक्ति, जो सन्तानके बनानेके लिये उसे मिली होती है,

सूख तथा बँट जाती है। इससे प्रायः एक दूसरेके बाद पैदा होनेवाले बच्चोंकी जीवनी-शक्ति बहुत कम हो जाती है, और, यद्यपि धीरे धीरे परन्तु निश्चित रूपसे, उनको उत्पन्न करनेवाली स्त्रीकी मृत्यु हो जाती है।

अलबत्ता स्त्रीपर इस आयासका प्रभाव उसके मौलिक स्वास्थ्य तथा जीवनी-शक्ति, उसकी परिस्थिति तथा भोजनकी प्राप्तके लिये उसके परिवारके प्रयासकी प्रचण्डताके अनुसार भिन्न भिन्न होता है। नगरकी तंग अँधेरी कोठड़ियोंमें रहकर बच्चोंका पालन-पोषण करनेवाली माता, जिसे पेट भरकर कभी भोजन नहीं मिलता, देहातमें सुखपूर्वक रहने तथा पेटभर खानेवाली माताकी अपेक्षा साधारणतः अधिक बच्चे मृत्युके मुखमें डालती है। फिर भी, अवस्थाएँ ही सब कुछ नहीं; सर्वोत्तम अवस्थाओंमें, एक बड़े परिवारके, एक दूसरेके बाद थोड़े थोड़े अन्तरपर उत्पन्न हुए, पिछले बच्चोंकी मृत्युके सुयोग पहले उत्पन्न होनेवाले बच्चोंकी अपेक्षा बहुत अधिक होते हैं।

डाक्टर प्लोट्ज़ (Ploetz) ने मालूम किया है कि जेठे बच्चोंकी मृत्युकी दर हज़ार पीछे २२०, सातवें स्थानमें उत्पन्न होनेवालोंकी लगभग ३३०, बारहवें स्थानमें पैदा होनेवालोंकी हज़ार पीछे ५९७ है। इसलिए यदि "प्रकृति" को अपना काम करने दिया जाय, और स्त्रीकी जीवनी-शक्तिको चूस लेनेके लिये बारह बच्चे पैदा हो लें, तो फिर उसमें इतनी थोड़ी शक्ति शेष रह जाती है कि बादको पैदा होनेवालोंमेंसे सौ पीछे लगभग

६० मर जाते हैं। अहो! जीवनी-शक्तिका कितना घोर अपव्यय है। माताओंके लिये मनस्तापमें ऐसे दुखी बालक उत्पन्न करना, जिनकी अल्पकालमें ही मृत्यु अवश्यम्भावी है, सन्तापका कैसा भीषण भैरवी-चक्र है!

फोरल ("दि सेक्सुएल क्स्चन," १६०८) कहता है:—यह बात प्रायः अविश्वास्य जान पड़ती है कि कई देशोंमें डाक्टर लोग, जिनको युवकोंको वेश्याओंके बाहुपाशमें फेंकते लज्जा नहीं होती, गर्भ-निरोधके उपायोंका नाम सुनते ही लज्जित हो जाते हैं। यह झूठी विनय, जो कि लोक-प्रथा तथा पक्षपातकी उपज है, निष्पाप बातोंपर तो कोप प्रकट करती है परन्तु बड़े बड़े कलंकोंको उत्साहित करती है।

हालेण्ड एक ऐसा देश है जो इस बातका सबसे अधिक ध्यान रखता है कि उसके बच्चे अच्छे हों और स्वेच्छापूर्वक उत्पन्न किये जायँ। इससे, यह बात द्रष्टव्य है कि, वहाँ मौतसे बचे रहनेवाले वालोंकी दर बढ़ गई है। इससे उसकी जन-संख्या, घटी नहीं, वरन् बढ़ी है। योरुपमें बच्चे सबसे कम वहीं मरते हैं। दूसरी ओर, अमरीकामें दुर्दान्त "कमस्टाक कानून" उत्तम वैज्ञानिक गर्भ-निरोधकी कानून-विरुद्ध गर्भपातके साथ गड़बड़ करके उन दोनोंको "अश्लील" ठहराते हैं, और इस प्रकार लोगोंको उचित स्वास्थ्यरक्षा-संबंधी ज्ञान प्राप्त करनेसे रोकते हैं। इसलिये जितना भयंकर तथा दण्डनीय गर्भपात वहाँ होता है उतना किसी भी दूसरे देशमें नहीं होता।

यह बात समझ लेनी चाहिए कि गर्भ-निरोधके जितने भी उचित, वैज्ञानिक उपाय हैं, वे पहलेसे गर्भमें पड़े हुए भ्रूणकी हत्या नहीं करते, वरन् वे शुक्रकीटको स्त्रीके अण्डेके साथ मिल-कर बच्चा बनानेसे रोक देते हैं। यह काम या तो शुक्रकीटोंको गर्भाशयके छिद्रसे बाहर ही रोक देनेसे, या स्त्रीमें प्रवेश करनेवाले बीस करोड़से लेकर साठ करोड़तक सभी शुक्रकीटोंको नष्ट कर डालनेसे (वैसे भी ये एक को छोड़कर शेष सब अपने आप मर जाते हैं) हो सकता है। जब शिशुको माताके गर्भमें बढ़ने भी दिया जाय, तो भी ये सब करोड़ों शुक्रकीट, जब जब पुरुष क्षरित होता है, अवश्य ही और अपने आप नष्ट हो जाते हैं, और प्रकृति-द्वारा इन करोड़ों मारे जानेवालोंमें एक औरकी वृद्धि कर देना निश्चय ही कोई अपराध नहीं! क्षरित शुक्रकीटोंको, जो अन्यथा अपने आप मरकर सड़ जाते हैं, चटपट मार डालना एक बहुत सरल सी बात है। उनके सूक्ष्म तथा नग्न शरीरोंको हलके अम्लमें, डालकर, जैसा कि सिरका और पानी, या कुनीनके घोल (सोल्यू-शन), या अनेक दूसरे पदार्थोंके द्वारा छिन्न-भिन्न कर दिया जाता है। गर्भ-निरोधकी यथार्थ विधियोंका ज्ञान न होनेसे बहुतसे लोग अज्ञानवश हानिकारक तथा विनाशक उपायोंका प्रयोग कर रहे हैं, इसलिए मैंने गर्भ-निरोधकी हितकर तथा वैज्ञानिक विधियोंका प्रचार करनेके उद्देश्यसे "वाईज़ पेरएटहुड"*नामकी एक छोटीसी

*—"वाईज़ पेरएटहुड"के बाद हालमें डाक्टर स्टोपसने गर्भ-निरोध-पर एक बड़ी व्यापक पुस्तक लिखी है। उसका नाम "काएटरासेपशन"

अलग पुस्तक लिखी है। इसमें विविध प्रकारके उपायोंके नीति तथा शरीर-शास्त्र-संबन्धी रूपोंपर भी विचार किया गया है, और जो उपाय, सब प्रकार, शरीर-विज्ञानकी दृष्टिसे सर्वोत्तम है, उसीका समर्थन किया गया है।

जो लोग प्रतिवाद करते हैं कि हमें प्रकृतिके कार्योंमें हस्तक्षेप करनेका कोई अधिकार नहीं, उनको इतना बता देना ही पर्याप्त है कि सारी सभ्यता—प्रत्येक ऐसी बात जो मनुष्यको पशुसे अलग करती है—जिसे ये लोग सामान्यतः "प्रकृति" कहते हैं उसमें हस्तक्षेप है। इस जगत्में कोई बात भी प्रकृतिके विरुद्ध नहीं हो सकती; क्योंकि यह सब विश्वकी महान् क्रियाओंका भाग है।

परन्तु चीज़ोंके अनुक्रममें, अपनी सापेक्ष स्थितियोंकी दृष्टिसे, कर्मोंमें भेद है। केवल वही कर्म करनेयोग्य हैं जो जातिकी शक्तिको उच्चतर और पूर्णतर बनानेकी ओर ले जाते हैं, जो जातिको जीवन तथा शक्तिकी उस नदीकी प्रधान धारामें ले जाते हैं जो हममें प्रवाहित है और जो हमें आगेकी ओर धकेल रही है।

जो लोग एक नई आत्माको संसारमें बुलानेका साहस करते हैं उन सबका यह परम पवित्र कर्तव्य है कि वे उसे एक योग्य और सर्वाङ्ग पूर्ण पात्र देनेका भरसक यत्न करें अर्थात् जहाँतक

है। उसमें गर्भ-निरोधकी सभी विधियों का सविस्तर वर्णन है। उसके सभी आवश्यक प्रकरणोंका हिन्दी अनुवाद मैंने अपनी पुस्तक "सन्तान-संख्याका सीमाबंधन, अर्थात् दम्पतिमित्र" में दे दिया है। यह पुस्तक आश्रम, हस्पताल रोड, लाहौरसे मिल सकती है। सं० रा०

भी उनसे हो सके भावी बालकके लिये सुदृढ़ और सुन्दर शरीर तैयार करनेमें कोई कसर न उठा रक्खें, ताकि वह संसारके जीवन-संग्राममें विजयी हो सके।



दसवाँ अध्याय



संगति

प्रेमका पोषण जो कुछ यह दूसरोंसे लेता है उससे नहीं, वरन् जो कुछ यह दूसरोंको देता है उससे होता है, और पुरुष और स्त्रीका उत्कृष्ट दुहरा प्रेम उस प्रेमसे भी पोषित होना चाहिए जो वे दूसरोंको देते हैं—एडवर्ड कार्पेंण्टर।

पुरुष, जहाँतक कि एक सामान्य अर्वाचीन पुरुष भी, रसिक होता है। वह ज्ञानतः या अज्ञानतः उस स्वतंत्रता, उस सौन्दर्य, और उस साहसिक कार्यकी लालसा करता है जो उसके पूर्वज वनोंमें पाते थे। उसकी यह लालसा, यद्यपि इतनी रूपान्तरित हो गई है कि सभ्य जीवन और आधुनिक अवस्थाएँ उसे पहचान नहीं सकतीं, तथापि वह एक ऐसी बात है जिसकी स्त्रियों तथा पुरुषोंके सम्बन्धमें उपेक्षा नहीं की जा सकती।

"विवाह-बन्धन", जिनका बहुधा अश्लील हास्यके साथ उल्लेख किया जाता है, अत्यन्त रसिक तथा पत्नीभक्त पतिपर भी असर करते, और कदाचित् गुप्त रूपसे उसको सताते हैं। "पुरुषके लिए विवाहित जीवनमें सबसे कठिन बात क्या है?" यदि इस सरल तथा मित्रोचित प्रश्नका सरल और अनुतप्त उत्तर मिले—तो उस उत्तरका संक्षेप इन दोनों शब्दों "सतत समीपता"—में दिया जा सकता है।

इसका पत्नीको, विशेषतः जब वह वस्तुतः प्रेम करती हो, क्वचित् ही पूरा ज्ञान होता है। यदि उसका पति उसका सच्चा

प्रेमी है, तो उसकी सदयता और सच्ची भक्ति उसे इसको छिपानेमें समर्थ कर देगी। किन्तु इस छिपानेसे चाहे उनका सुख ऊपरसे अक्षुण्ण दिखाई देने लगे परन्तु पुरुषके घूमते फिरनेकी—पर-स्त्रीगमनकी—लालसा पूर्ण रूपसे शान्त नहीं होती। सच्चा प्रेम करनेवाले पतिमें यह अनुक्त अपरिचित लालसा कदाचित् उतनी नवीन यात्रा आरम्भ करने—किसी दूसरी स्त्रीसे सम्बन्धी जोड़ने—की नहीं होती जितनी कि लौटनेके तीव्र आनन्दका पुनः अनुभव करनेकी अभिलाषा होती है; अर्थात् वह चाहता है कि जिस प्रकार विवाहके आरम्भमें प्रिया मेरे साथ इतनी खुली हुई नहीं थी और मुझे उसके साथ यत्नपूर्वक विशेष परिचय प्राप्त करनेमें आनन्द आता था, आरम्भिक कालका वही आनन्द मुझे पुनः मिले, हम दोनोंका जीवन एक बार फिर वैसा ही प्रेममय और उत्सुकतामय हो।

जिन्होंने पूर्ववर्ती प्रकरणोंको ध्यानपूर्वक पढ़ा है वे समझ गए होंगे कि स्त्री-पुरुषका विवाह हुए चाहे अनेक वर्ष ही क्यों न हो गए हों, परन्तु जब जब भी समागम करना हो, पुरुष हर बार नए सिरेसे पत्नीको लाड़-प्यार इत्यादिद्वारा उसी प्रकार अपनेपर रिझानेका यत्न करे जैसे कि वह किसी दूसरी स्त्रीसे अनुचित सम्बन्ध पैदा करनेके लिये उसे रिझाता है,और जबतक पत्नी समागमके लिये स्वयं उत्सुक न हो जाय तबतक कभी रमण न करे।

परन्तु जिस पत्नीको वह अपनेपर रिझाना चाहता है यदि

उसका इस बीचमें उसके साथ बहुत ही अविरत तथा नीरस सम्बन्ध रहा है, तो पतिके लिये पूरी उत्सुकता और रसिकताके उस पूर्ण भावके साथ लाड़-प्यार करना कठिन हो जाता है जिसके बिना यह प्रणय-प्रार्थना पूर्ण रूपसे आनन्दमयी बन ही नहीं सकती।

बहुतसे पुरुष तो अपना व्यवसाय घरसे बाहर करते हैं, परंतु मध्यम श्रेणीके अनेक लोग ऐसे भी हैं जिनको कामके लिये बाहर नहीं जाना पड़ता। ऐसी अवस्थामें पति-पत्नीके चौबीस घण्टे इकट्ठे रहनेसे दोनोंका परस्पर स्वाभाविक आकर्षण नष्ट हो जाता है और जीवन नीरस प्रतीत होने लगता है।

मेरा जाना हुआ एक बहुत ही विचारशील जोड़ा इस अद्भुत आनन्दको इतना मूल्यवान् समझता था कि इसको स्थायी करनेके लिये पति और पत्नी अलग अलग मकानोंमें रहते थे, ताकि हर वक्त पास रहनेसे यह आनन्द फीका न पड़ जाय।

परन्तु ऐसी विधि अनेक लोगोंके विशेषतः जिनके सन्तान भी हो, प्रायः अनुकूल नहीं। तो भी एक दूसरेसे अलग अलग रहने (जिसके लिये धनकी आवश्यकता है) या स्वतंत्रताके किसी दूसरे उपायके बिना भी, जिसका करना प्रत्येककी सामर्थ्यमें नहीं, आध्यात्मिक स्वतंत्रताके उस भावकी रक्षा की जा सकती है, एकमात्र जिसमें ही प्रेममय समागमके पूर्ण आनन्दका अनुभव किया जा सकता है।

परन्तु आजकलके विवाहोंमें तो बौद्धिक तथा आध्यात्मिक स्वतंत्रता भी बहुधा असम्भव हो जाती है।

बहुतसे हृदयोंमें आदर्श एकताके लिये जो सुन्दर अभिलाषा प्रबल रूपसे विद्यमान है वही अनेक विवाहोंमें आनन्दको अतीव फीका कर देनेका कदाचित् एक मौलिक कारण होती है। आदर्श एकताकी प्राप्तिके लिये यत्न करते हुए, स्त्री या पुरुष, ज्ञानतः या अज्ञानतः, अपनी इच्छा और सम्मतियोंको पहले पत्नी या पतिपर, और फिर जब बच्चे बड़े हो जायँ तो उनपर, डालता या डालती है।

अपनी ही बातपर हठ करनेवाला आदर्श-स्वरूप पुरुष, जो इस क्रमसे उत्पन्न हो जाता है, उपन्यासों तथा नाटकोंमें भले ही हास्यका विषय हो, और यह हास्य चाहे उसका शीघ्र ही अन्त कर देता हो, फिर भी तो किसी प्रकार उसका मूलोच्छेद नहीं हुआ। अपने कम अत्युक्त रूपमें ऐसा पुरुष बहुधा मायावादी होता है, परन्तु सारतः वह संकीर्ण विचारका मायावादी हो सकता है। वह शान्ति, और वह एकता जिसके लिये वह लालसा करता है वाह्य रूपसे ही प्राप्त होती है; परन्तु इस बातको देखनेके लिये कि यह तुल्य संमिश्रणद्वारा नहीं, वरन् एकको दूसरेके नीचे दबाने तथा विनाशद्वारा प्राप्त हुई है, उसके नेत्रोंसे अधिक तीक्ष्ण नेत्रोंकी आवश्यकता है।

मैं इस नमूनेके एक विचित्र पुरुषको जानती हूँ जिसे व्यक्ति रूपसे यह पता न था कि मैं अपनी पत्नीके व्यक्तित्वपर अनुचित अधिकार जमा रहा हूं। वह उसे न केवल अपनी ही मरज़ीकी

पुस्तकें पढ़ने तथा अपनी ही मरज़ीके लोगोंके साथ मिलनेपर विवश करता था, वरन् उसे दैनिक पत्रके ख़रीदनेसे भी "मना" करता था, जिसे वह अपने विवाहसे भी कई वर्ष पहलेसे बराबर पढ़ा करती थी। वह कहता था कि हम दोनोंके लिये एक ही समाचार-पत्र पर्याप्त है। वह इस बातकी मृदुतापूर्वक उपेक्षा करता था कि स्त्रीको उसे पढ़नेका अवसर मिलनेसे पहले ही मैं उसे बाहर ले जाता हूँ। यह पुरुष, न केवल एक रसिक पुरुषके रूपमें, वरन् एक आदर्श पतिके रूपमें, दूसरोंकी अपेक्षा अपनेको अधिक सफलतापूर्वक हैरान करता था; और जब कभी उसकी स्त्री कोई ऐसा निमन्त्रण स्वीकार कर लेती थी जिसमें वह निमंत्रत न हो तो वह उनकी (दम्पतीकी) पूर्ण एकताको संशयमें डाल देनेके लिये उसको (पत्नीको) उपालम्भ देता था।

दूसरी ओर, ऐसे घरोंमें जहाँ पति और पत्नी दोनोंके लिये बौद्धिक जीवनकी अर्वाचीन स्वतंत्रताके लिये स्वीकृत अभिलाषा है, बहुत अधिक बार कलह, अशान्ति तथा विसंवाद होता है। यह उस शान्ति तथा विश्राममय निर्भयताके वायुमण्डलको नष्ट कर डालता है जो यथार्थ घरका एक आवश्यक रूप है।

संसारमें भिन्न भिन्न मतोंके दो व्यक्तियोंके लिये एकके दूसरेको दबाने या अपने मतका बनानेका यत्न किये बिना अपनी अपनी सम्मतियोंको रखना और साथ ही एक दूसरेके निर्णयमें वैसा ही मृदु विश्वास रखना जैसा कि यदि वे एकमत होते तो रखते, एक बहुत कठिन काम है।

जो पत्नी एक अत्यावश्यक प्रश्नके दूसरे पार्श्वको देख रही है उसके भावमें सौन्दर्य तथा महत्ताके देखने लिये सुन्दर तथा उदार-हृदय चाहिए।

परन्तु यही बात कि इस कामको करनेके लिये एक सुन्दर तथा उदार-हृदय चाहिए इसे करनेलायक सिद्ध करती है।

यदि सुगमतर मार्ग ग्रहण किया जाय और दोनों एक दूसरे-से मत-भेद होने पर अपने मतोंको छिपायँ, या जोड़ेमें जो बल-वान् हो वह दुर्बलको दबाकर उन विशेषताओंको छिपानेपर विवश करे जिनसे किसी व्यक्तिका व्यक्तित्व बनता है, तो इससे दोनोंमें क्षीणता आ जायगी, जिसका परिणाम यह होगा कि वह प्रेम भी क्षीण तथा कम हो जायगा जिसको दोनों पुष्ट करना चाहते थे।

विवाहमें प्रत्येक पुरुष यही स्वप्न देखता है कि मैं एक ऐसी पत्नी पाऊंगा जो मुझे समझने वाली होगी—जिससे मैं संसार-में ज्ञान तथा अनुभवके ख़ज़ानोंकी तलाशमें निकलूँगा, जिसके सामने मैं स्पर्धाके विचारके बिना अपनी लूट रख सकूंगा, और वह उसे देखकर प्रसन्न होगी। वे ख़ज़ाने, जो हमें तो प्रिय हैं परन्तु दूसरोंके लिये किसी कामके नहीं, यहाँ क़द्र और क़ीमत पायँगे और यहाँ कल्पना रूपी कोमल और अतीव शीघ्रग्राहक (Sensitive) बीजको जल मिलेगा और उसकी रक्षा होगी जिससे इसका परिपक्व सौन्दर्य संसारपर सहसा प्रकट होनेके लिये उद्यत हो जायगा।

इस समय विवाहित जीवनकी जो दशा है उससे यही कहना पड़ता है कि पुरुषसे ऐसी सदयता और ऐसी उत्तेजन गुण-ग्राहकता स्त्रीको मिलनेकी अपेक्षा स्त्रीसे पुरुष तथा उसके कामको मिलनेकी बहुत अधिक संभावना है। क्योंकि पुरुष चिरकालसे स्त्रीके विचारोंको, विशेषतः उसकी बौद्धिक सम्मतियोंको, एक ऐसी चीज़ समझ रहे हैं जिसको अधिकसे अधिक अतीव सदय मंद हास्यके नीचे मृदु रसिकताकी आवश्यकता है।

शीघ्रग्राहक और सहृदय स्त्रीको जब भद्रसे भद्र पुरुषसे भी कोई ऐसी बात कहनी होती है जो पुरुषके *गम्भीर* विचारके योग्य और जीवनके उस विभागसे बाहर हो जिसका संबंध स्त्रीके "क्षेत्र" के साथ मान लिया गया है, तब आज भी वह एक प्रकारके अतर्कित अभिनन्दनके अधःस्रोतका अनुभव करती है। इस प्रकार पुरुष विवाहित जीवनकी उस महत्ताको अपने आप नष्ट कर डालता है जिसको दोनों मिलकर प्राप्त कर सकते थे।

परन्तु विवाहमें परस्पर स्वाधीनता और दूसरोंके मतका संमान, चाहे यह कितना ही बड़ा महत्व क्यों न रखता हो, चरित्र-के पूर्ण विकाशके लिये यथेष्ट नहीं। जीवन सदैव-विस्तृत होती रहनेवाली रुचियाँ चाहता है। कुछ तो सभ्यताकी विशेषत्व-प्राप्तिसे अनेक नमूनोंके व्यक्तियोंमें भेद-निर्देशके कारण, जिसमें विचारशील व्यक्ति रुचि लेते हैं, और कुछ पुरुषके आवारा फिरनेकी पुरानी सहज बुद्धिके रूपान्तरित हो जानेके कारण,

वह अपने साथियोंके जीवनोंसे संपर्क करने तथा उनको समझनेकी तीव्र आकांक्षा करता है। हो सकता है कि दूसरोंके जीवनोंमें हमारे हृदयों तथा बुद्धिको नवीन तथा विलक्षण साहसके कार्य देख पड़ें।

व्यक्तिगत रूपसे पुरुषमें, चाहे वह कितना ही श्रेष्ठ और विकासवादकी दृष्टिसे कितना ही उन्नत क्यों न हो, जातिकी असंख्य कार्यशक्तियोंका अंश अवश्य है। इसलिए अतीव सुखी विवाहमें भी, जो, समाधिमें योगीके सदृश, विश्व-ब्रह्माण्डके अनुभवका लेशमात्र होता है,जीवनका सारा अनुभव नहीं आ सकता। दम्पतीके वास्तविक जीवनोंके बाहर सदा अनेक प्रकारके विचार तथा अनेक प्रकारकी भाव्यताएँ (सुप्त शक्तियाँ) होती हैं जिनका अनुभव केवल दूसरे लोगोंके जीवनोंमें ही हो सकता है।

पूर्ण मानवी संबन्धके लिये सभी प्रकारके मित्रोंकी, तथा एक पत्नी या पतिकी आवश्यकता है। परन्तु वर्तमान रूपमें विवाह घनिष्ट मित्रताके आनन्दको बहुधा बहुत कम कर देता है। इसका कारण कुछ तो सभी सामाजिक अवसरोंपर पति और पत्नीको इकट्ठा निमंत्रण देनेका सामाजिक शिष्टाचार है। यद्यपि समाजकी उच्चतम कोटियोंमें इसकी कुछ परवा नहीं की जाती, फिर भी अनेक स्थानोंमें यह अभीतक भी ठहरा हुआ है। यह सच है कि खानेके समय उन्हें अलग अलग बैठाया जाता है परंतु वे सदा एक दूसरेसे इतनी थोड़ी दूरीपर होते हैं कि एक दूसरेकी बातको सहजमें ही सुन सकते हैं। इससे उनकी विनोद-

की संभाव्यताएं सुप्त शक्तियाँ (Potentialities) मंद पड़ जाती हैं। केवल इतनी ही बात, कि जिस बातको मनुष्य एक बार किसी दूसरी जगह सुना चुका है उसीको दुबारा सुनाते कोई चुप चुपके सुन लेगा, अनेक लोगोंको अपनी अच्छीसे अच्छी कहानियाँ कहने और महत्वपूर्ण विषयोंपर अपने वास्तविक विचार प्रकट करनेसे रोक देती है।

हम अभीतक भी इतने जंगली और इतने संकीर्णहृदय हैं कि आनन्दके मार्गमें एक दूसरी बड़ी रुकावट बहुतसे लोगोंमें मदन-सम्बन्धी शंकाशीलताकी प्रबल रेखाका होना है। इस समय बहुत थोड़े ऐसे जोड़े हैं जो एक दूसरेके चरित्रके विषयमें शंका न करते हों। इसलिये उनसे यह चाहना कि वे एक दूसरेपर पूर्ण विश्वास रक्खें एक साधारण बात नहीं।

प्रेमके विनाशसे उत्पन्न होनेवाला एक कुफल शंकाशीलता है। यह उस व्यक्तिमें अविश्वासका बीज बो देती है जो अपने दूसरे साथीके लिये स्वाभाविक जीवनको असम्भव बना देता है।

यह कहना कठिन है कि शंकाशीलताका भाव स्त्री और पुरुषमेंसे किसमें अधिक विकसित है। यह भिन्न भिन्न अवस्थाओंमें विशेष रूप धारण करती है, और यदि प्रकृतिका झुकाव पहलेसे ही इसकी ओर हो, तो इस स्वभावका दूर करना बहुत ही कठिन हो जाता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि प्रथा, और कई पीढ़ियोंसे चली आनेवाली परम्पराने हमारी जातिपर यह झूठी कल्पना अंकित कर

दी है कि सतीत्वकी रक्षाके लिये रुकावट डालनेवाले बंधनोंका लगाना आवश्यक है। हम धीरे धीरे इस कल्पनाको छोड़ रहे हैं। आजकल तरुणी पत्नियोंको उपदेश देनेके लिये लिखी हुई बहुतसी पुस्तकोंमें एक भाग ऐसा रहता है जिसमें उनको बताया जाता है कि पुरुषको विवाहके बाद अपने पुरुष-मित्रोंसे मिलने देना चाहिये।

परन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं। दोनों ओर पूरा पूरा और शंका-रहित विश्वास होना चाहिये। स्त्री और पुरुष दोनोंको स्वतंत्रता होनी चाहिये कि वे जहाँ चाहें अकेले जा सकें, और उनमेंसे किसीके भी हृदयमें दूसरेके चरित्रपर संदेह न उत्पन्न होने पाय।

यह सच है कि कई प्रकृतियाँ अभी ऐसे विश्वासके योग्य नहीं, और डर है कि वे ऐसी स्वतंत्रताका कहीं दुरुपयोग न करें। परन्तु नीच प्रकृतियाँ तो अपनी वासनाओंको तृप्त करनेका कोई न कोई उपाय सदा ही निकालती रहेंगी, और यदि उनपर विश्वास करके उनको स्वतंत्रता देनेकी अवस्थामें उनके उससे अधिक भूल करनेकी संभावना नहीं जितनी कि यदि उनपर संदेह करके उनको बंधनमें रक्खा जाय तो वे अपरिहार्य रूपसे गुप्त कूट-युक्तियोंद्वारा करेंगी।

इसके विपरीत, ऐसी स्वतंत्रताके स्वच्छ तथा पवित्र वायु-मण्डलमें ही अतीव पूर्ण प्रेमका विकास हो सकता है।

विवाहके संबंधमें यह बात सर्वथा सत्य है कि बंधनोंको ढीला करके ही मनुष्य दो हृदयोंको अटूट रूपसे इकट्ठा बाँध सकता है।

जिस दम्पतीमें सच्चा प्रेम है उनके शरीर जिस समय एक दूसरेसे दूर होते हैं उस समय उनकी आत्माओंका और भी अधिक घनिष्ट मिलाप हो जाता है। क्योंकि सहृदय आत्माओंके लिए—और केवल वही प्रेमके उच्चतम शिखरको जान सकती हैं—जुदाई तथा एकान्तके समय पुनरुद्दीपक तथा आमोदप्रद हो सकते हैं।

मनुष्यकी आत्मा इतनी महान् है कि इसके सौन्दर्यका कुछ अंश समीपताके कारण छिप जाता है। इसके वास्तविक दृश्यका दर्शन करनेके लिये इसके और दर्शकके बीच कुछ दूरी होनेकी आवश्यकता है।

सौन्दर्यके अनुभव तथा एकान्तके आनन्दको पुरुषकी अपेक्षा स्त्री प्रायः कम जानती है। इसका कारण, कदाचित्, यह है कि असंख्य पीढ़ियोंसे बच्चोंका तथा गार्हस्थ्य जीवनका अधिकांश भार उसीपर चला आ रहा है, और इसने उससे प्रकृतिका उपशमकारी दान छीन लिया है।

यद्यपि सिंजके सुन्दर नाटक, डीरडरी (Deirdre), में यह बात केवल नैमित्तिक रूपसे आ गई है, परन्तु मुझे यह अतीव तीक्ष्ण जान पड़ती है कि जब डीरडरीके कान्तके हृदयमें उससे अलग किसी भी चीज़का विचार आता था तो वह अवश्यम्भावी दुर्घटनाका अनुभव कर सकती थी। डीरडरी और उसके कान्तमें सात वर्षसे अटूट और अलौकिक प्रेम था। जब उसने पहली बार कान्तके हृदयमें उससे जुदा व्यवसाय करनेका अर्द्ध निर्मित विचार

देखा तो उसे ऐसा अनुभव हुआ मानों उसका सर्वनाश हो गया, उनके सुखकी समाप्तिकी घंटी बज गई।

स्त्री-जातिकी इस प्राचीन दुर्बलताको जीतना चाहिए, और अर्वाचीन स्त्री इसे जीत रही है।

अर्वाचीन विवाह पति और पत्नी दोनोंको अधिक और अधिक स्वतंत्रता दे रहा है, और इसके साथ ही कार्य और रुचिकी एकता भी बढ़ रही है। पहले वे घरेलू बातोंमें ही लगे रहते थे। वे बातें स्त्रियोंको घरमें बंद रखनेवाली और पुरुषोंके लिए नीरस थीं। अब वे उनसे उच्चतर बातोंमें एकत्व लाभ करते हैं। प्रति वष स्त्रियोंकी स्वतंत्रताका क्षेत्र तथा उनके व्यवसाय विस्तृत होते जा रहे हैं। परन्तु, अबतक भी, बहुधा विवाहके साथ ही स्त्रीके बौद्धिक जीवनका अन्त हो जाता है। विवाह तबतक अपने पूर्ण विकासको प्राप्त नहीं कर सकता जबतक कि स्त्रियोंको भी उतनी ही बौद्धिक स्वतंत्रता और उसके भीतर सुयोगकी स्वतंत्रता न होगी जितनी कि उनके पुरुषोंको है।

इस समय अधिकांश स्त्रियोंमें न तो निर्मायक कार्यकी स्वतंत्रताकी अभिलाषा है, न वे उस स्वतंत्रताका उपयोग ही करना जानती हैं—यह इस बातका चिह्न है कि हम अभीतक भी अतीतके नियामक तथा वृद्धिको रोकनेवाले प्रभावोंकी छायामें रहते हैं।

स्त्रीके बौद्धिक कार्यपर एक मनोरञ्जक लेखमें ("सेक्स एण्ड सोसायटी," १९०७) डब्ल्यू० टामस कहता है:—अमरीकन स्त्री, जो अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रताका उपभोग करती है, पाण्डित्यके उसी आदर्श-

पर पहुँच गई है जिसपर कि पुरुष पहुँचे हुए हैं। कई स्त्रियाँ विश्वविद्यालय-की पढ़ाई तथा परीक्षाओंमें सबसे प्रथम रहती हैं। इनकी अवस्थामें काठिनाई यह है कि या तो वे विवाहकी आधुनिक प्रथामें बह जाती हैं और और वह प्रथा इनको निगल जाती है, या वे अपनेको पूरे अर्थोंमें पुरुषोंके साहचर्य से, किसी अनतुभवनीय रीतिसे, बहिष्कृत पाती हैं, और उनकी क्षमताओंके लिए कोई भी क्षेत्र खुला नहीं है।

वह स्पष्ट देखता है कि हमारे समाजके विकासमें यह केवल एक अस्थायी दशा है, और वह विवाहिता स्त्रीकी शक्तियोंके विकासके लिये अधिक विस्तृत अवकाशका समर्थन करता है।

यदि स्त्री अपनी पसन्दका व्यवसाय करे और पुरुष उस व्यवसायके प्रति उदार भाव रखे, तो इससे वह आयास दूर हो जाता और विवाह बहुत अधिक बार सफल हो जाता है।

स्त्रीकी गुप्त शक्तियोंका स्वाभाविक रीतिसे विकास हो जाने-पर वह पुरुषकी न केवल स्वतंत्रता तथा सुदृढ़ संगिनी ही बन जाती है वरन् एक वांछनीय मित्र तथा बौद्धिक सहचरी भी।

भौतिक तथा मानसिक अन्वेषणके लिये और घरके पवित्र हातेके बाहर अनुभवोंके लिए, स्वतंत्रताकी कामना पहलेपहल विवाहित जोड़ेमें घनिष्टतर तथा पूर्णतर एकताके आदर्शके विप-रीत तथा सर्वथा असंगत प्रतीत हो सकती है। परन्तु यह विरोध बिलकुल बाहरी है, यद्यपि यह सत्य है कि बहुतसे लेखक इसका अनुभव नहीं कर सके। फलतः "उन्नत" सम्प्रदायके उपदेशों तथा लेखोंके कुछ भागोंमें अधिक स्वतंत्रताकी—स्वेच्छानुसार घूमनेकी स्वतंत्रताकी—हाँ ऐसी स्वतंत्रताकी पुकार है जिसमें घूमनेवाला अपने नियत केन्द्रपर वापस नहीं आता।

इसके विपरीत ऐसे भी लोग हैं जो मुख्यतः वैवाहिक एकता-के सौन्दर्यका अनुभव करते हैं, और, विवाहित जोड़ेपर एकता तथा परम स्थिरताके लिये बल देते हैं, परन्तु उन्हें विस्तृत जीवनके अनुभवोंको प्राप्त करनेका कुछ भी ध्यान नहीं। वे जीवन-के उर्वर करनेवाले प्रवाहपर बाँध बाँधनेका यत्न करते हैं, और इस प्रकार, जो कुछ वे कर रहे हैं उसे न जानते हुए, वे विवाह-के सौन्दर्य और स्मृद्धिको घटानेका कारण होते हैं।

इस बातका अनुभव करना नई पीढ़ीके तरुण लोगोंका काम है कि उनके हृदयोंमें उत्पन्न होनेवाली लालसा—जीवनके पूर्ण अनुभवकी लालसा तथा आजन्म साथीके साथ घनिष्ठ संयोग-को लालसा—की दो धाराएँ असंगत नहीं, वरन् वे वस्तुतः उस भविष्यकी अधिक पूर्ण सुन्दरताके दोनों अवश्यक भाग हैं, जो पहले ही उनके जीवनोंमें प्रकट होनेका यत्न कर रहा है।

श्रीमती एलनकी ("लव एण्ड मैरिज") विवाहिता स्त्रीके जीवनके विस्तीर्ण होनेसे डरती जान पड़ती है, और वह इस प्रकार लिखती है मानों उच्च कोटिका व्यावसायिक तथा बौद्धिक कार्य करनेकी आकांक्षा अवश्य ही विवाहिता स्त्रीमें मातृत्वको दबाकर उसे बाँझ बना देगी।

वह अधिक उत्तरीय लोगों, स्कण्डीनेविया-वासियों, के विषयमें लिखती है, और हो सकता है कि यह बात उसके अपने देशकी स्त्रियोंके विषयमें सत्य हो; मुझे कुछ मालूम नहीं। परन्तु यह बात आवश्यक और सार्वत्रिक रूपसे सत्य *नहीं*। मैं अँग-

रेज़ स्त्रियों, आज-कलकी अँगरेज़ स्त्रियों, के विषयमें लिख रही हूँ। यद्यपि हममें भी उस नमूनेकी बौनी तथा बाँझ बनी हुई स्त्रियाँ मौजूद हैं, परन्तु हमारे समाजमें उनकी संख्या बहुत कम है और दिनपर दिन और भी कम होती जा रही है। हमारी सर्व-श्रेष्ठ स्त्रियोंमेंसे बहुत विवाह करके माताएँ बन जाती हैं अथवा उस विवाहके लिये लालायित हैं जो विवाहके ढोंगसे अधिक सुन्दर है।

श्रीमती स्टॅटसन ("स्त्रियाँ तथा अर्थ शास्त्र" नामक पुस्तक-में) कहती है—

मातृत्वके प्रधान शारीरिक व्यापारोंमें मनुष्यकी मादा यह नहीं दिखा सकती कि इन प्रयोगोंके लिए उसकी कल्पित विशेषज्ञताने उसे उन व्यापारोंको अधिक अच्छी तरहसे करनेके योग्य बना दिया है, वरन् बात इसके विपरीत है। मानवी जीवके प्राकृत उद्योगोंमें मानवी मात जितनी अधिक स्वतंत्रतासे मिलती है, जैसा कि हम जंगली स्त्री, किसान स्त्री, और मज़दूर स्त्रीकी दशामें सब कहीं देखते हैं जिसे अपनी शक्तिसे बाहर काम नहीं करना पड़ता, उतना ही अधिक यथार्थ रूपसे वह इन व्यापारोंको पूरा करती है।

स्त्रीको जितना अधिक केवल मैथुन-संबंधी व्यापारोंके लिये ही पृथक् रखा जाता है, सारे आर्थिक उपयोगसे अलग करके केवल मैथुन-संबंधी कामोंद्वारा ही आजीविका पैदा करनेपर विवश कर दिया जाता है, उसका मातृभाव उतना ही अधिक निदानशास्त्र-संबंधी हो जाता है। पुरुषपर उसका आर्थिक निर्भर होनेसे काम-वासनाकी अत्यधिक वृद्धि होती है, और इस-का उसके सारभूत कर्तव्योंपर अननुकूल प्रभाव पड़ता है। वह इतनी स्त्रैण है कि पूर्ण माता नहीं बन सकती!

मुझे विश्वास है कि हमारी बहुतसी तरुण स्त्रियोंमें पूर्ण तथा पूर्णीकृत प्रेमकी संभाव्यता—गुप्त शक्ति—मौजूद है। इसी प्रकार बहुतसे तरुण पुरुषोंमें भी है। सर्वोत्तम प्रकारके युवक आजकल बहुपत्नीत्वसे ऊबे हुए हैं; उन्होंने अपने पिता तथा मित्रोंके जीवनोंमें उस कुटिल और गुप्त बहुपत्नीत्वकी बहुत कुछ भ्रान्ति देखी है, जो अपनेको हमारी सामाजिक पद्धतिके कल्पित एकपत्नीत्वके रक्षा करनेवाले लबादेके नीचे छपाता तथा जातिको गलाता है।

परन्तु इस सयम इँग्लेंडमें जो अवस्था है उसकी दृष्टिसे, जो युवक विवाह करता है, चाहे वह कितना ही अधिक प्रेम क्यों न करता हो, वह प्रायः इतना अज्ञानमें होता है (जैसा कि पहले अध्यायोंमें दिखलाया जा चुका है) कि वह अपनी स्त्रीकी पूर्ण रूपसे तृप्ति नहीं करता। तब समय पाकर जल्दी या देरसे, निराशाओंका अनुक्रम आता है, जिसका अन्तिम परिणाम नवीन साहसिक कार्य—दूसरे विवाह—की लालसा होता है।

एक तरुण पतिने मुझे कहा, "पत्नीको जब संभोगोंमें आनन्द न आता हो, तो कोई भी भला पति उसके साथ समागम नहीं कर सकता," इसलिए उसे "दूसरी जगह जाने" के लिये विवश होना पड़ता है। और लोग हमें बहुपत्नीक कहते हैं! हम बहुपत्नीक नहीं। परन्तु विवाह एक भारी विफलता है।" यही उसकी व्यवस्था थी।

नहीं। वे बहुपत्नीक नहीं। वे वर्तमान तथा भविष्यके बहुत

अच्छे नवयुवक हैं। अधिकांश पुरुष अपने अन्तस्तलमें बहुपत्नीक नहीं, चाहे बाहरके सारे लक्षण उन्हें बहुपत्नीक प्रकट करते हों, चाहे यह भी बात ठीक हो कि उनमेंसे बहुत थोड़े एक पत्नीव्रती रहे हों। परन्तु वे काम-वासना-संबंधी नियमों, परम्पराओं, तथा कामशास्त्रके उस ज्ञानसे अनभिज्ञ हैं जो अपेक्षाकृत असभ्य जातियोंको दायमें मिला है, और इस प्रकार उन्होंने उसी चीज़को रौंद और कुचल डाला है जिसकी वृद्धिके लिए उनके हृदय तरस रहे हैं।

इसलिए पुरुष गुप्त रूपसे (क्योंकि ऐसे विवाहमें जो कमसे कम ऊपरसे देखनेमें सुखमय जान पड़ता है पुरुष बहुत कम स्पष्ट रूपसे) दूसरे प्रकारकी संगतिकी आकांक्षा करने लगता है और वह "दूसरी जगह चला जाता है"। यह सत्य है कि, जो कुछ वह पूर्ण विवाहसे प्राप्त करना चाहता है उसे पानेके लिए वरन् उसे पानेकी आशामें, नहीं जाता; किन्तु बहुधा नवीन अनुभव, रसिकता, तथा उस अद्भुत अनुभवमें दूसरेके साथ मिलकर एक हो जानेके भावकी लालसाको किसी हदतक तृप्त करनेके लिए जाता है, जो, चाहे इन्द्रियोंका ही धोखा हो, अब भी जीवनकी बहुमूल्य चीज़ोंमेंसे एक है।

एक सुभार्याके लिए यह समझना कठिन है, वस्तुतः कई अवस्थाओंमें असम्भव प्रतीत होता है, कि कौनसी बात उसके पतिको उससे परे हटा रही है। अपनी शक्तियोंसे काम लेनेमें स्वभाव तथा रूढ़ीसे सीमाबद्ध होनेके कारण, वह अपनी रुचि

और वार्तालापकी शक्तियोंके सङ्कीर्ण होते जानेवाले परिमाणसे बे-ख़बर है। घरका जीवन असंख्य धाराओंवाले महासागरके स्थानमें एक सड़े हुए बंद छप्पड़का जीवन बन जाता है। जो चीज़ सीमाबद्ध और परिमित है उससे मनुष्यकी सहज बुद्धि सदा भागना चाहती है। नगरोंमें पुरुषके लिए अन्वेषणके अवसर बहुत थोड़े हैं, इसलिये भागकर नवीन अनुभवोंमें प्रवेश करनेके लिये वेश्या एक प्रत्यक्ष द्वार है।

स्त्रियोंको वेश्यावृत्तिसे इतना धर्ममूलक तथा प्रकृतिसिद्ध डर है, और इसके प्रति उन्हें इतना कोप उत्पन्न होता है, कि वे पुरुषके भावको समझनेका यत्न नहीं करतीं।

वेश्यामें कभी कभी वह बात होती है जो केवल शारीरिक नहीं, और जो बहुधा पत्नीके पतिके साथ संबंधमें नहीं पाई जाती। वह है आनन्दमें चारुता तथा परस्पर उल्लास। वेश्या भी प्रायः उन उत्तेजनोंकी सूक्ष्मताओं और विशेषताओंको जानती है जिनसे न केवल शारीरिक आनन्द ही बढ़ता है परन्तु स्वाभाविक सुरत-क्रियाको अधिक पूर्णता प्राप्त होती है, जिससे उसका स्वास्थ्यपर बहुत हितकर प्रभाव पड़ता है। पत्नीको (जैसा कि बहुत सी पत्नियाँ हैं) अपने पतिके "विषय-भोग" का एक नम्र तथा अकर्मक साधन बनकर ही सन्तुष्ट न हो जाना चाहिये। उसे सकर्मक भाग लेना चाहिये। जबतक दोनों भाग न लेंगे सुरत-क्रिया ठीक तौरपर पूर्णताको प्राप्त नहीं हो सकती।

यदि सुभार्याएं इस मर्मको समझें, तो वे पुरुषोंको वेश्या-

रूपी सामाजिक रोगसे मुक्त करनेमें भलीभांति सफल हो सकती हैं। नहीं तो वेश्यावृत्तिपर छिः छिः करने और उनके पास जानेवाले पुरुषोंसे लड़ने-झगड़नेसे कुछ नहीं बन सकता।

दुष्ट चक्रका आरम्भ ढूंढ़ना कदाचित् असम्भव है, परन्तु इसमेंसे निकलनेके लिये प्रथम पग यह होना चाहिये कि मनुष्य इस बातका अनुभव करे कि मैं इसके भीतर हूँ, और, कमसे कम इसके घटकावयवों—इसको बनानेवाली चीज़ों—मेंसे कुछ एकको जान ले।

पुरुष, कुछ तो झूठी लज्जाके कारण और कुछ विवाहित जीवनमें स्त्रीके स्वार्थोंकी उपेक्षा करने तथा अपने ही चापल्यको विवाहका नियम समझनेकी प्रथाके कारण, सती स्त्रीमें शारीरिक प्रेमको उत्तेजित करनेकी कलाको बहुत कुछ खो बैठा है।

इसलिए वह उसे उस संमोहनसे वंचित कर देता है, जिसके न होनेसे वह (पुरुष) पीछेसे शोक करता है, क्योंकि वह न केवल रसिकता तथा सौन्दर्यके, वरन् किसी ऐसी उच्चतर चीज़के भी अभावका अनुभव करता है जो पूर्ण संयोगके परिणाम-के रूपमें गूढ़ार्थक रीतिसे दी जाती है। वह अपनेमें कलाके अभावके स्थानमें पत्नीमें "निःस्नेहता" की शिकायत करता है। तब उन वस्तुओंकी तलाश अन्यत्र करता है जो पत्नी उसे दे सकती थी यदि वह लेना जानता। तब मन्दिरको अपवित्र हुआ देखकर वह धार्म्मिक कोपसे भर जाती है, यद्यपि प्रायः उस दुर्घटनाके वास्तविक कारणका उसको भी उतना ही कम ज्ञान होता है जितना कि पुरुषको होता है।

विवाह-संबंधमें आधारभूत भ्रमसे उत्पन्न होनेवाले प्रभाव बहुत प्रकारके और दूरतक पहुँचनेवाले हैं। वे न केवल इस देशमें, वरन् प्रत्येक देश तथा प्रत्येक कालमें, समाजकी सारी रचनाको प्रभावित करते रहे हैं।

पत्नीके तीव्र संमोहनको मंद कर देनेवाला एक और भी कारण है—और वह है कानूनकी दृष्टिमें उसकी हीन स्थिति। जैसा कि जीन फिनाट कहती है, वास्तवमें यह एक शोचनीय बात है "कि, वर्तमान अवस्थाओंमें, उपस्त्रीको कई ऐसी स्वतंत्रताएं प्राप्त हैं जो विवाहिता स्त्रियोंको नहीं।"

अतीत तथा उसके इतिहासका अनेक लोग अध्ययन कर चुके हैं, इसलिये हम उसे छोड़ सकते हैं। तरुण विवाहित लोगोंकी वर्तमान पीढ़ीके साथ जिसका संबंध है वह वर्तमान तथा भविष्य है। भविष्य आशासे पूर्ण है। हम पहले ही देखते हैं कि समाजको बनानेवाले घटकावयवोंमें नवीन सम्बन्ध पैदा होने आरम्भ हो गए हैं।

कुलीन समाजमें प्रेमका राज्य होगा। पति और पत्नीका प्रेम सदा सर्वप्रधान जीवन-अनुभव बना रहेगा, परन्तु यह विकृत अनुभव नहीं होगा।

मित्रों और बच्चोंका, सहचरों और एक साथ काम करने-वालोंका प्रेम पति और पत्नीकी प्रत्येक शक्तिको केवल विकसित करनेका काम देगा। अपने व्यक्तिगत शरीर-परिमाणके महत्वको मिलाकर वे दोनों एक ऐसी चीज़ प्राप्त कर सकते हैं

जो, यदि वे दोनों या उनमेंसे एक अल्प और बौना होता तो, सदा अप्राप्य रहती।

मनुष्य-समाजके विकासका सारा झुकाव इसके सारे अंगोंको अधिक मिलानेकी ओर रहा है, यहाँतक कि इस समय यह कहना प्रायः सम्भव है कि समाजका वास्तविक जीवन इसको बनानेवाले सभी व्यक्तियोंसे उच्चतर समतलपर है, और, वास्तवमें,समाज एक उच्चतर सत्ता है। अपने व्यक्तिगत जीवनोंमें नहीं, वरन् मनुष्योंके समाजके द्वारा ही हम इस लोकमें अन्तिम स्थिरताको प्राप्त करते हैं।

समाजके साथ हमारा क्या सम्बन्ध है इसको पूर्णरूपसे जान लेनेपर मालूम हो जाता है कि प्रत्येक व्यक्तिके स्वास्थ्य, सुख,और आनुषंगिक शक्तियोंका न केवल उसके अपने जीवनके साथ ही सम्बन्ध है, वरन् उनका प्रभाव उस सारे समाजपर पड़ता है जिसका वह एक सदस्य है।

एक पूर्ण विवाहका सुख निजी जीवनकी प्राणभूत शक्तिको बढ़ा देता है। इससे मनुष्य न केवल बच्चोंमें समाजके जीवन-रुधिरको बढ़ानेमें समर्थ हो जाता है, वरन् विवाहसे मनुष्य अपने विशेष कार्यके लिये अधिक उपयुक्त तथा पूर्ण साधन भी बन जाता है। इस कार्यके परिणाममें समाज समष्टिरूपसे भाग लेता है। वह इनको मिलाने तथा सवाँरनेका भी काम करता है।

विवाह यथासम्भव बहुत ही पूर्ण, और फलतः आनन्दमय होना चाहिए; ताकि जो शक्तियाँ सारे समाजके प्रयोजनके लिए

मुक्त होनी चाहियें वे अविद्या, संकीर्ण सीमाबन्धन, और नीच आदर्शोंसे उत्पन्न हुई निष्फल लालसा और निराशामें नष्ट न हो जाय।

सुखी दम्पती संसारमें एक महान् तथा सुन्दर प्रकाशके समान होनी चाहिए। यह प्रकाश छिपा हुआ नहीं, वरन् ऐसा हो जिसकी रश्मियाँ उसके इर्दगिर्दके सभी मनुष्योंके जीवनोंमें चमकें।



ग्यारहवाँ अध्याय

प्रशस्त विकाश

ज्ञान और विज्ञान-राशिको अधिकाधिक बढ़ जाने दो।
पर नहिं अविनय और अनादर-बुद्धि पास निज आने दो ॥

—टेनीसन तथा श्रीमणिराम गुप्त।

हम इस संसारमें ऐसी विस्मयजनक क्रियाओं तथा परिणामोंसे घिरे हुए हैं कि यदि वे क्षण क्षण हमारे इर्दगिर्द न हो रहे होते तो उन्हें असम्भव कल्पनाएं समझ कर रद्द कर दिया जाता।

वह मनुष्य बड़ा ही अरसिक और विस्मय-बुद्धिसे शून्य होगा जिससे पहलेपहल यह जानकर आश्चर्य नहीं होता कि जिस वायुमें हम साँस लेते हैं वह,अपने अदृश्य एकत्वमें ऊपरसे इतनी एकरूप मालूम होनेपर भी, वास्तवमें दो प्रधान, और कई दूसरी, गैसोंसे बनी है। ये दोनों गैसें आपसमें शराब और पानीके सदृश मिली हुई हैं। प्रत्येक गैस स्वयं एक वर्णहीन वायु है, और देखनेमें दोके उस मिश्रणके सदृश है जिसे हम वातावरण कहते हैं।

जलकी रचना इससे भी बड़ा चमत्कार है। यह केवल दो पवनोंका बना है। उनमेंसे एक तो उस वायुका उपादान है जिसमें हम साँस लेते हैं। दूसरी भी वैसी ही अदृश्य और गंध-

हीन, परन्तु उसकी अपेक्षा बहुत अधिक हलकी है। इन दोनों अदृश्य गैसोंको जब उनके स्वभावके लिये उचित अनुपातमें मिलाया जाता है तो वे एक दूसरेमें विलीन हो जाती हैं। वे अब नाभस और अदृश्य नहीं रहतीं, वरन् एक नवीन वस्तु——पानी—के रूपमें नीचे बैठ जाती हैं।

गरजती हुई शक्तिशाली सागर-तरङ्गें, पोतोंको उठानेवाली बड़ी बड़ी नदियोंके चमकते हुए प्रवाह, दो अदृश्य गैसोंके मिलापके रूपान्तरित परिणाममात्र हैं। और यह विवाहित प्रेमके अत्यन्त जटिल और विस्मयजनक परिणामोंका एक दृष्टान्त है।

प्रेमके एक भौतिक पहलूके विचित्र रहस्यका वर्णन करते हुए एलिस कहता है:—

स्त्रीपुरुष-संबंधी प्रणयके विमर्शमें जो बात पुरुषोंको सदा हैरान करती रही है वह है इसके कारणकी ऊपरी असमर्थता, उस क्लेदमयी झिल्लीके, जो कि ऐसे प्रणयकी अन्तिम सीमा है, आवश्यक रूपसे संवृत प्रदेशों और विश्व-व्यापी चित्तक्षोभोंके, जिनका यह द्वार जान पड़ती है, समुद्रके बीच अमित असंगति। रेमी डी गार्मोण्टने कहा है कि "क्लेदमयी झिल्लियाँ, किसी अनिर्वाच्य रहस्यके द्वारा, अपनी अस्पष्ट तहोंमें अनन्तकी सारी विभूतिको बंद रखती हैं।" यह एक ऐसा भेद है जिसके विचारक तथा शिल्पी दोनों हार मानते हैं।

शरीर-विज्ञानके नूतन आविष्कार मुझे एक ऐसी चाबी मालूम होते हैं जो रहस्यकी कोठरीके तालेको खोलकर हमें सत्य-मन्दिरके भीतर ले जा सकते हैं। प्रत्येक व्यक्तिगत शरीरमें हारमोनस (रस) एक इन्द्रियसे निकलकर दूसरीपर असर करते,

और इस प्रकार व्यक्तिकी जीवन-क्रियाओंके सारे रूपको प्रभावित करते हैं। दृश्यमान् स्राव और अतीव सूक्ष्म सार जो समागम-के समय स्त्री और पुरुषके बीच गुज़रते हैं,उनमेंसे प्रत्येकके जीव-नोंपर असर डालते और एक दूसरेके लिए तत्त्वतः आवश्यक हैं। मेरी दृष्टिमें स्त्री और पुरुष दोनों एक दूसरेकी इन्द्रियाँ—अंग—हैं। और वैज्ञानिक तथा गूढ़ार्थक अर्थोंमें वे *दोनों* मिलकर एक मान, एक व्यक्तिगत सत्ता हैं। "वे दो एक शरीर हो जायँगे" इन शब्दोंमें *शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी* तथा आध्यात्मिक सचाई है।

प्रेममें यही नहीं कि संपर्कके बन्धनोंकी लालसा एक दूसरे व्यक्तिके साथ जुड़ जानेसे शान्त हो जाती है, वरन् इस मिलापसे एक नवीन तथा अभूतपूर्व सृष्टि होती है।

यहाँ मेरा अभिप्राय अपने माता-पिताके प्रेमसे उत्पन्न होने-वाले शारीरिक शिशुसे नहीं, वरन् स्त्री और पुरुषके प्रेममें पूर्ण संयोगसे उत्पन्न हुई अभौतिक सत्तासे है। उनको इकट्ठा रखने-वाले प्रेम-बन्धनोंद्वारा जुड़कर एक हो जानेपर वे दोनों मिल-कर एक ऐसी नई और अद्भुत चीज़ बन जाते हैं जो उनके अलग अलग होनेकी दशामें उन दोनोंके गणित-सम्बन्धी योगसे भिन्न और अत्यधिक होती है।

इस नवीन सृष्टिकी पूर्णताका इतनी कम बार अनुभव किया गया है, कि हम अभी इसकी पूर्ण संभाव्यताओं—सुप्त शक्तियों—की कल्पना करनेसे भी बहुत दूर हैं, परन्तु इसमें प्रबल शक्तियाँ अवश्य हैं इसका हम अव्यक्तरूपसे अनुभव करते हैं।

प्रेमके आकर्षणसे उत्तेजित होनेपर युवक तथा युवतियाँ इस बातका बार बार तथा अव्यक्तरूपसे अनुभव करती हैं कि उनके सामने एक अमित और सुन्दर अनुभव है; उन्हें ऐसा भाव होने लगता है मानों प्यारीके साथ एक हो जानेसे प्रत्येक प्रकारकी शक्तियाँ बढ़ जायगी जो साधारण अविवाहित जीवनमें कभी प्राप्त नहीं हो सकतीं।

ये भविष्यत्-सूचक स्वप्न, यदि प्रत्येक व्यक्तिके विषयमें ठीक नहीं, तो समष्टि रूपसे सारी जातिके विषयमें तो अवश्य ठीक हैं। क्योंकि आज जवानीके स्वप्नोंमें भविष्यकी विद्यमानताका पूर्वाभास है।

ऐन्द्रिक विकासके एक ही रूपको ग्रहण करनेके हम हालमें इतने आदी हो गए हैं, कि हम जवानीमें अपनी जातिके इतिहास-का केवल संक्षिप्त अनुवाद ही देखते हैं। "Ontogeny repeats Phylogeny" इस वाक्यने इस बातपर हमारा ध्यान एकाग्र करनेमें सहायता दी है कि बच्चे, क्या हमारे और क्या पशुओंके, अपनी वृद्धिमें अनेक ऐसे रूपोंमेंसे होकर जाते हैं जो उन अव-स्थाओंसे मिलते हैं जिनमेंसे कि अपने विकास-क्रममें अवश्य सारी जाति होकर निकली होगी।

जहाँ एक ओर यह ठीक है, वहाँ दूसरी ओर जवानीकी एक दूसरी विशेषता भी है; यह भविष्यत्-सूचक है!

जवानीके स्वप्न, जिनके पूर्ण होनेकी प्रत्येक युवक हृदय अपने जीवनमें आशा करता है, बहुधा पूरे हुए बिना ही नष्ट

होते प्रतीत होते हैं। परन्तु इसका कारण यह है कि जवानी की आश्चर्यजनक शक्तियोंके पास ज्ञानरूपी आवश्यक साधन नहीं होता। इस प्रकार जो संभाव्यताएँ—काम करनेकी गुप्त शक्तियाँ—चमत्कार दिखला सकती थीं, वे क्षीण होकर मर जाती हैं।

ज्यों ज्यों मनुष्य-समाज अधिक ठीक मार्गपर चलने लगेगा, तरुणोंको जीवनमें प्रवेश करनेपर सारी जातिका ज्ञान तथा अनुभव उतना ही अधिक मिलता रहेगा। तब जातीय आदर्शके उस प्रशस्त उत्कर्षको, जो तरुणोंकी प्रत्येक पवित्र पीढ़ीमें प्रकट होता है, अन्ततः अपनी आवश्यकताओंके लिये पर्याप्त ज्ञान-राशि मिल जायगी, और जातिकी संचित तथा संशोधित बुद्धिका वे स्वेच्छापूर्वक उपयोग कर सकेंगे।

तब युवक और युवतियाँ उन भूलों, वेदनाओं तथा अज्ञान-पूर्वक आत्म-विनाशोंसे बची रहेंगी जो आज कदाचित् ही किसीको अछूता छोड़ते हों।

मेरे अपने जीवनमें ही, यद्यपि यह अपेक्षाकृत छोटा और फलतः अनुभवशून्य है, मैंने व्यक्तिगत रूपसे तथा प्रतिनिधि रूपसे जितना मनस्ताप देखा है वह ज्ञानके द्वारा रोका जा सकता था। यह बात मुझे प्रेरणा करती है कि मैं अपने अनुभव तथा अनुसंधानोंके पूर्ण होने, और अपने जीवन तथा प्राणभूत रुचिके फीका पड़ जानेका प्रतीक्षा न करके, अपने इकट्ठे किये हुए बुद्धिके संग्रहको चटपट दूसरोंको सौंप दूँ जिससे जातिको

अपने आपको समझनेमें सहायता मिले। इसलिये मैं इस पुस्तकको समाप्त करती हूं। यद्यपि यह अधूरी है, तो भी इसमें ऐसी ऐसी आवश्यक बातें भरी हुई हैं जिनका ज्ञान तरुणोंको होना चाहिये।

जीवनकी सभी चेष्टाओं—भवन-निर्माण, मृगया या किसी दूसरी—में जहाँ बौद्धिक तथा वाचिक परम्परा आ जाती है, जैसा कि मानव-जातिकी अवस्थामें होता है, "सहज ज्ञान" मरने लगता है। इस प्रकार एक बिल्ली अपने बच्चोंका जितना प्रबंध कर सकती है, मनुष्यकी माता, जबतक उसे सिखाया न जाय, अपने बच्चेका उससे बहुत कम प्रबन्ध कर सकती है; यद्यपि, बिल्लीकी तुलनामें, मनुष्यकी माताको अपने बच्चेके प्रति अनन्त कर्तव्य हैं और वह उसपर अपरिमेय प्रभाव डालती है।

विवाहके सम्बन्धमें भी एक ऐसी ही सचाई है। एक शताब्दीसे अधिक कालसे नाना "सभ्य" रीतियोंका अनुकरण करनेसे हमारे युवक न केवल बहुतसे प्रकृतिसिद्ध ज्ञानसे वंचित हो गए हैं, वरन् इससे असंख्य झूठी और दूषित करनेवाली प्रथाएं भी उत्पन्न हो गई हैं।

बालकोंके प्रबन्धकी कलापर तो बहुतसे लोग लिखते हैं, परन्तु विवाहकी कलापर कहनेके लिए बहुत थोड़ोंके पास कुछ मज़मून होता है। इसके विषयमें केवल वही लोग कुछ कहते हैं जिनके पास घोषित करनेके लिए, बहुधा पारमार्थिक या प्राकृतिक नियमका ध्वंस करनेवाला, कोई सिद्धान्त होता है।

मनुष्योंमें, जहाँतक कि एक ही जातिके मनुष्योंमें भी, बहुत बड़ी विचित्रता है। इसका कारण यह है कि जिसे हम सभ्यता कहते हैं उसमें बहुतसी कृत्रिम अवस्थाएँ और अस्वाभाविक उत्तेजन काम कर रहे हैं। इसलिए विवाह-सम्बन्धी किसी मौलिक सत्यका जानना अपरिमेय रूपसे कठिन हो रहा है। सब प्रकारके विवाहोंका गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करना एक बहुत बड़ा स्मरणार्थक कार्य है। जिन्होंने इसका आंशिक भी अध्ययन आरम्भ किया है वे नियमातिरेकोंके गोरखधन्देमें उलझ गए हैं, जिससे स्वाभाविक, स्वस्थ, और सहृदय व्यक्तियोंकी आवश्यकताकी उपेक्षा हुई है।

इसलिये प्रत्येक जोड़ा दुबारा वही भूलें करता है जिनसे कि वह बच सकता था, और वह कठिनाइयोंकी उस भूल-भुलैयाँमें अंधवत् ठोकरें खाता है। ये कठिनाइयाँ मनुष्योंके लिए अनिवार्य नहीं, वरन् इनका कारण हमारी वर्तमान प्रथाओंकी अतर्कसंगत मूर्खता है।

मैंने यह पुस्तक उन लोगोंके लिए लिखी है जो स्वाभाविक तथा स्वास्थ्यवर्धक रीतिसे, आशावादके साथ, वैवाहिक जीवनमें प्रवेश करते हैं।

यदि वे इसकी शिक्षाओंको ग्रहण करें तो वे उन गड्ढोंसे बच सकते हैं जिनमें गिरकर सहस्रोंने अपने सुखका नाश कर दिया है, परन्तु उन्हें यह नहीं समझना चाहिए कि इससे उन्हें विवाहकी पूर्णता सुगमतासे प्राप्त हो जायगी। किसी दो व्यक्तियोंकी व्यवस्थामें बहुतेरी सूक्ष्मताएं होती हैं।

प्रत्येक जोड़ेको चाहिए कि वह, अतीव मृदु तथा अतीव कोमल परिमर्शोंका प्रयोग करके, एक दूसरेको जाँच करे। इससे उन्हें एक दूसरेके हृदयोंकी जटिलताओंको जाननेका मार्ग मालूम हो जायगा।

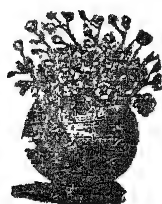
कभी कभी ऐसा भी होता है कि, संसारका सारा ज्ञान तथा सद्भाव भी रखते हुए, विवाहित जोड़ा देखता है कि वे अपने जीवनोंको एक दूसरेमें विलीन नहीं कर सकते; इस दुर्घटनाके विषयमें मुझे यहाँ कुछ नहीं कहना; परन्तु साधारण क्लेश वर्तमानकी अपेक्षा बहुत घट जाय यदि *ज्ञान* की कोमलताका प्रयोग विवाहके आरम्भसे ही अन्योन्य व्यवस्थाकी समस्यापर किया जाय।

हमारे भीतरकी सभी गम्भीरतम तथा उच्चतम शक्तियाँ हमें सामाजिक आदर्शके रूपमें आजन्म एक पत्नीत्वके एक श्रेष्ठतर तथा कोमलतर रूपका विकास करनेकी प्रेरणा करती हैं। विचारशील तथा कोमल-हृदय लोग, अधिक समझ आ जानेपर उन व्यक्तियोंको शान्ति तथा सुख देनेका यत्न करेंगे जिनके यहाँ इस आनन्दमय प्राकृतिक विकासका अभाव है, परन्तु सुधारकोंको गौण बातोंके लिए अपने जोशमें जातिकी प्रधान वृद्धिको न भूल जाना चाहिये। युवक और युवतियोंके हृदयमें प्रेमका सुन्दर भाव उत्साहित करना चाहिए। इस प्रेमको कैसे बढ़ाना चाहिये, इसका ज्ञान प्राप्त करनेका उन्हें सुभीता होना चाहिये, ताकि वे "स्वतंत्रता"के शोरसे इसे नष्ट न कर डालें।

श्रम-युक्त मध्यम आयुके लोग विवाह-संबंधके भौतिक पक्ष और इसके ठोस पृष्ठतलको प्रति दिनके अनुभवके शीतल तथा मंद आलोकमें देखेंगे; परन्तु तरुण लोग, इसके स्वप्नोंकी चमकसे प्रकाशित हुए, इस बातसे बे-खबर हैं कि उच्च तथा दिव्य आभास भौतिक यथार्थताकी ठोस सचाइयोंके सामने अतर्कित रूपसे लानेसे कैसे छिन्न-भिन्न हो जाते हैं।

भौतिक बातोंका दिव्य आभासोंद्वारा रूपान्तर किसी हद-तक मनुष्य-समाज, यहाँतक कि आजकलके अधूरे मनुष्य-समाजकी शक्तिमें है।

जब ज्ञान तथा प्रेम दोनों मिलकर प्रत्येक विवाहको बनायगे तो उस नवीन एकत्व का, उस जोड़ेका आनन्द उसके शरीरोंके भौतिक आधारोंसे आकाशमें पहुचेगा, और वहाँ उसके सिरपर तारकाओंका मुकुट रक्खा जायगा।





परिशिष्ट

परिशिष्ट

टिप्पणी १

जिन नारियों (और मादा जन्तुओं)के साथ संभोग नहीं किया जाता उन्हें दुःख होता है, वरन् उनकी मृत्यु भी हो जाती है *। देखो क्वार्टरली जर्नल माईक्रास्कोपीकल सोसायटी, खण्ड ४८, १९०४, पृ०३२३ में मार्शलका लेख।

ब्रिटिश मैडीकल जर्नल, ओक्टोबर, १९०४, में पार्सन्सका लेख।

टिप्पणी २

बहुधा लोग (यहाँतक कि स्त्री-रोग-चिकित्सक भी) एक भारी भूल किया करते हैं। वे रजःस्रावको "काम-वासनाके काल" के साथ, जिसे पशुओंमें "गरम होने"का समय कहते हैं, गड़बड़ कर देते हैं। बड़ी बड़ी प्रामाणिक नवीन पाठ्य-पुस्तकोंमें भी "गरमी और रजःस्राव" ऐसे वाक्य बहुत मिलते हैं। इस प्रकार गरमी और रजःस्रावको इकट्ठा कर दिया गया है मानो वे पर्याय-वाची हैं। इसके विपरीत पुरानी पुस्तकें स्त्रियोंके रजस्वला होनेके

---

*हमारे काम-शास्त्रके ग्रन्थोंमें लिखा है कि काम-वासनाके पूरा न होने-से पहले उन्निद्रता, फिर पागलपन, और फिर, कई बार, मृत्यु भी हो जाती है। अनुवादक।

दिनोंको पशुओंमें काम-वासना या "गरमी" के अनुरूप समझती हैं। यही भूल हालमें रायल सोसायटी आव मेडीसनकी *कार्यवाही*-में हुई है।

कई शरीर-शास्त्रियोंने अनेक उच्च कोटिके जन्तुओंमें इस विषयका अध्ययन किया है। वे अब समझे हैं कि शरीर-विज्ञानकी दृष्टिसे कामेच्छाका समय उस रूपसे भिन्न है जिसको स्त्रियोंमें रजःस्राव दिखलाता है। यह बात भलीभाँति प्रतिपादित प्रतीत होती है कि स्त्रियोंमें बीजाधारों (ओवरियों) के भीतरी स्रावसे रज होता है। इसका कारण प्रत्यक्ष रूपसे गर्भाण्डोंका निकलना नहीं, यद्यपि इसका इसके साथ कोई संबंध अवश्य होगा*।

आधुनिक विज्ञानने जो कुछ प्राप्त किया प्रतीत होता है उसके अधिकांशका संक्षेप मार्शल (दि फिज़ियालोजी आव रीप्रोडक्षण, पृ० ६९) के निम्नलिखित उद्धरणमें दिया गया है—

"मार्टिन तथा कई दूसरे लेखकोंके मतानुसार, स्त्री बहुधा रजस्वला होनेके बाद एक ऐसे कालका अनुभव करती है जिसमें वह गर्भवती होनेके लिए तैयार होती है। इस समय दूसरे कालों-की अपेक्षा उसमें कामकी इच्छा अधिक होती है। यद्यपि दो रजः-स्रावोंके बीचके अन्तरोंमें गर्भाधान हो सकता है, तो भी यह बात सम्भव जान पड़ती है कि आदिमें स्त्रियोंके ऋतुकाल या शरीर-

*—इन जटिल विषयोंका अतीव नूतन वर्णन "दि फिज़ियालोजी आव रीप्रोडक्षण" नामक उच्चकोटिकी पाठ्य-पुस्तकमें मिलता है।

विज्ञान-संबंधी परिवर्तनोंके साधक अनुक्रमके बाद उत्पन्न होनेवाली कामेच्छाकी जागृतिके विशिष्ट कालोंमें ही स्त्रियोंके साथ, दूसरे दूध पिलानेवाले जन्तुओंकी मादाके सदृश, भोग किया जाता था। इस विषयमें हीथ यों लिखता है :—'स्त्रीके गर्भवती होनेके लिये उद्यत होनेके इस विशेष कालसे बहुधा इनकार कर दिया जाता है, और, इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि, आधुनिक सभ्यता तथा आधुनिक सामाजिक जीवन, जहाँ शरीरपर अनुचित आयास पड़ता हो, स्वाभाविक कामेच्छाको बहुत कुछ दबा देते, या दूसरे समयोंमें इसे उत्तेजित कर देते हैं, जिसका परिणाम बहुत अधिक शक्ति होता है। इन कारणोंसे जिस नियत कालमें स्त्री गर्भवती होनेके लिये उद्यत होती है उसमें रुकावट हो सकती है, परन्तु, मुझे विश्वास है कि, कामेच्छा फिर भी स्पष्ट देख पड़ती है ।"

प्रायः सभी जङ्गली जन्तुओंमें कामकी उत्तेजनाका एक नियत काल होता है। यह प्रायः वर्षके ठीक ऐसे समयमें होता है जो गर्भधारणके लिये अनुकूल हो, जिससे बच्चे ऐसी ऋतुमें उत्पन्न होते हैं जब कि उनके पनपनेका सर्वोत्तम सुयोग होता है। जन्तुओंमें कामेच्छाका, अर्थात् गर्भाण्डोंके निकलनेका काल और बच्चेके जन्मका काल, सब एक दूसरेसे सम्बद्ध हैं। नर मादाके पास उसी समय जाने पाता है जब मादामें संयोगके लिये स्वाभाविक लालसा होती है। मनुष्योंमें यदि ऐसी जाति है जिसकी तुलना इस दृष्टिसे जंतुओंके साथ की जा सके तो वह एस्कीमो

हैं। उनमें स्त्री और पुरुष कई कई महीनोंतक संयोग नहीं करते।

टिप्पणी ३

डाक्टर अलाईस स्टाकहमद्वारा (इस समय अप्राप्य पुस्तकमें) वर्णित आत्मसंयमके विशेष रूपका उपसंहार।

डाक्टर स्टाकहमकी पुस्तक इस समय नहीं मिलती, इसलिये उसके विषयका संक्षिप्त सार देती हूँ। वह, और कई दूसरे गम्भीर व्यक्ति समझते हैं कि ब्रह्मचर्य या पुरुषका आत्म-संयम गर्भनिरोधका सर्वोत्तम उपाय है। वे पुरुषसे चाहते हैं कि वह अपने क्षरणका निग्रह करे। इसमें भाव यह है कि दोनोंमें काम-वासनाकी उत्तेजना और संयोग होनेके बाद, चेष्टा आदिसे उत्तेजनाको प्रोत्साहित करनेके स्थानमें, मानसिक तथा शारीरिक शान्तिको पूर्ण रूपसे प्राप्त करनेका यत्न होना चाहिये। यह बात सारी शारीरिक गतिको बन्द करके विचारको कान्ताके आध्यात्मिक रूपपर एकाग्र कर देनेसे प्राप्त हो सकती है। मेरी सम्मतिमें एक सामान्य, मज़बूत और बहुत कल्पनाएँ न करनेवाला अँगरेज़ इस प्रकारके संयोगमें सफल नहीं हो सकता, परन्तु अधिक शीघ्रग्राहक तथा रसिक प्रकृतिवाले और वे लोग जिनमें जीवनी-शक्ति बहुत अधिक नहीं निस्सन्देह ऐसा कर सकते हैं। मैंने अनेक स्त्रियोंसे सुना है कि उसने और उसके पतिने इस विधिका प्रयोग किया है। इसका न केवल उनकी नाड़ियोंपर ही उपशमकारी प्रभाव पड़ा है वरन् इसने उनके भावोंको भी

बहुत कोमल बना दिया है। कई पुरुष तो इस विधिका इतना अधिक अभ्यास करते हैं कि वे सब अवसरोंपर क्षरणको रोक लेते हैं, परन्तु दूसरे इसका प्रयोग क्षरित होनेके अवसरोंके बीचके कालकी लंबाईको बढ़ानेके लिए ही करते हैं *। जो लोग पुरुषसे ऐसा आत्म-संयम चाहते हैं वे कहते हैं कि पुरुष इच्छा और विचारके द्वारा उस प्रतिक्रियाको रोक सकता है जो प्रायः शारीरिक और लगभग अपने आप हो जानेवाली समझी जाती है। सभी समाज ऐसा निग्रह सफलतापूर्वक कर चुके हैं, और इससे उनके स्वास्थ्यकी भी हानि नहीं हुई, परन्तु अंगरेज़ोंमें मुझे ऐसा करनेवाले पुरुष दो चारसे अधिक नहीं मिले। कई धार्मिक व्यक्ति और कई सम्प्रदाय, इसे उच्चतम प्रकारका आत्म-संयम समझते हैं।

---

*सुरत-कालकी लंबाईको बढ़ानेके लिये हमारे काम-शास्त्रके ग्रन्थोंमें भी अनेक विधियाँ दी गई हैं। देखो "रति-विज्ञान" (साहित्य-सदन, लाहौर द्वारा प्रकाशित)। अनुवादक।